Registration No. V-36244/2008-09 **ISSN :- 2350-0611**

The journal has been listed in 'UGC Approved List of Journals' with Journal No. – 48441 in previous list of UGC

JIFE Impact Factor – 5.23

Research Highlights

A Multidisciplinary Quarterly International Peer Reviewed Referred Research Journal

Editor
Dr. Kamlesh Kumar Singh
Assistant Professor
Department of Sociology
Pt. D.D.U. Govt. Girls P.G. College
Sevapuri, Varanasi

Volume - XII **No. - 2** **(April – June 2025)**

(Part – II)

Published by
Future Fact Society
Varanasi (U.P.) India

Research Highlights - *A Referred Journal, Published by : Quarterly*

Correspondence Address :
C 4/270, Chetganj
Varanasi, (U.P.)
Pin. - 221 010
Mobile No. :- 09336924396
Email- researchhighlights1@gmail.com

Note :-

The views expressed in the journal "Research Highlights" are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Managing Editor
Avinash Kumar Gupta

©Publisher

ISSN : 2350-0611

Printed by
Interface Computer, B 31/13-6, Malviya Kunj, Lanka, Varanasi-221005 (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. T. N. Singh,** United Nations Professor of Plant Physiology, Department of Plant Sciences, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Prof. S.K. Bhatnagar,** School for Legal Studies, BBAU, Lucknow
- **Prof. (Dr.) Munna Singh**, Head of Department, Physical Education and Sports Sciences Department, Handia P.G. College, Handia, Prayagraj, U.P.
- **Dr Achchhe Lal Yadav**, Assistant Professor, Physical Education, Pt. D. D. U. Government Degree College, Saidpur, Ghazipur
- **Dr. Pramod Rao,** Assistant Professor, Department of Hindi, VBS Purvanchal University, Jaunpur
- **Dr. Anil Pratap Giri,** Assistant Professor, Department of Sanskrit, Pondicherry Central University, Pondicherry.

EDITORIAL BOARD

- **Dr. Sanjay Singh,** Department of Plant Science, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Dr. Diwakar Pradhan,** Professor in Nepali, Head, Deptt. of Indian Languages Faculty of Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Shailendra Singh,** Professor and Head, Department of Sociology, J.S. University, Sikohabad, U.P.
- **Dr. Manish Arora,** Associate Professor, Faculty of Visual Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Surjoday Bhattacharya,** Assistant Professor, Government Degree College, Pratapgarh U P
- **Dr. Upasana Ray,** Associate Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Krishna Kant Tripathi,** Assistant Professor, Deptt. of Education, Central University of Mijoram, Mijoram
- **Dr. Urjaswita Singh,** Assistant Professor, Department of Economics, M.G. Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Satyapal Yadav,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Brajesh Kumar Prasad,** Assistant Professor, Department of History, Banaras Hindu University, Varanasi.
- **Dr. Dewendra Pratap Tiwari,** Assistant Professor, Department of Political Science, Shree Lakshmi Kishori Mahavidyalaya (A Constituent Unit of BRA Bihar University, Muzaffarpur), Bihar

- **Dr. Hena Hussain,** Assistant Professor, Department of Psychology, Oriental College, Patna City (A Constituent Unit of Patliputra University, Patna), Bihar
- **Dr. Santosh Kumar Singh,** Assistant Professor, P.G. Department of Psychology, J.P. University. Chapra
- **Dr. Ramkirti Singh,** Assistant Professor, Department of Psychology, Gorakhpur University, Gorakhpur
- **Dr. Girish Kumar Tiwari,** Assistant Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Vaibhav Kaithvas,** Assistant Professor, Department of Performing Art, Eklavya University, Sagar Road, Damoh, MP
- **Dr. Ranjeet Kumar Ranjan,** Assistant Professor, Department of Psychology, J.P. College, Narayanpur, Bihar
- **Dr. Paromita Chaubey,** Faculty of Education, Banaras Hindu University, Varanasi

EDITOR'S NOTE

It is a great honour to me to extend my warm greetings and welcome you all to the journal, **Research Highlights,** a refereed journal of multi disciplinary research. The journal, which is a peer-reviewed, will devote to the promotion of multi-disciplinary research and explorations to the South Asian and global community. It is our objective to provide a platform for the publication of new scholarly articles in the rapidly growing field of various disciplines. We are trying to encourage new research scholars and post graduate students by publishing their papers so that they may learn and participate in literary publishing through a professional internship. Scholarly and unpublished research articles, essays and interviews are invited from scholars, faculty researchers, writers, professors from all over the world.

Note: All outlook and perspectives articulated and revealed in our peer refereed journal are individual responsibility of the author concerned. Neither the editors nor publisher can be held responsible for them anyhow. Plagiarism will not be allowed at any level. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Hoping all of you shall enjoy our endeavors and those of our contributors.

Editor

CONTENTS

"Research Highlights"

➲	बुन्देलखण्ड में जल संरक्षण समस्या एवं समाधान : संक्षिप्त अवलोकन ***डॉ. विनोद कुमार*** ***डॉ. मनोज सिंह यादव***	01-05
➲	नेताजी सुभाष चंद्र बोस का दक्षिण–पूर्व एशिया में योगदान और आजाद हिंद फौज का पुनर्गठन ***डॉ. प्रणव कुमार रत्नेश***	06-08
➲	अज्ञेय कृत 'शेखरः एक जीवनी': संवेदनात्मक यथार्थवाद की अभिव्यक्ति का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन ***अनिता कुमारी***	09-12
➲	आरा नगर निगम में मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगो की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का भौगोलिक अध्यन ***निरंजन कुमार भारती***	13-17
➲	राष्ट्रीय आंदोलन के काल में चौकीदारी टैक्स एवं उसके दुष्प्रभाव ***कुमारी गंगेश्वरी सिंह***	18-21
➲	कथाकार अशोकक कथासूत्र ***रीमा कुमारी***	22-25
➲	सुधा अरोड़ा की कहानियों में महानगरीय स्त्री जीवन त्रासदी ***निशा***	26-28
➲	कठोपनिषद् में वर्णित आत्मतत्त्व का स्वरूप ***अलका कुशवाहा*** ***डॉ. विनोद कुमार***	29-31
➲	पुराणों में भारतवर्ष का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक चित्रण ***डॉ. दीपक कुमार***	32-36
➲	शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता : मगध प्रमंडल के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन ***डॉ. ज्योत्सना प्रसाद***	37-41
➲	बुद्धस्य सामाजिकी अवधारणा ***डॉ. लेखमणी त्रिपाठी***	42-43
➲	समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभावः विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में एक अध्ययन ***निशा राणा***	44-51
➲	प्रो. अमर्त्य सेन एवं गाँधी जी के आर्थिक विचारों का मूल्यांकन एवं समीक्षा ***मोहम्मद इरफान***	52-54
➲	स्वयं पोर्टल पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षकों के व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता व पूर्णता का अध्ययन ***रेणू शर्मा*** ***प्रो. डॉ. अंशु भाटिया***	55-59

➲	अटल बिहारी वाजपेयीः संगठनकर्त्ता तथा दलीय नेतृत्व ***महेंद्र कुमार शुक्ल***	60-62
➲	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में एकीकृत (इंटीग्रेटेड) शिक्षा मॉडल का समग्र मूल्यांकनः कला, वाणिज्य और विज्ञान के दृष्टिकोण से ***डॉ. रोबिना***	63-66
➲	चुनावी राजनीति में पत्रकारिता की भूमिका ***डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव***	67-70
➲	उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन ***मीनाक्षी शर्मा*** ***प्रो. रीना जैन***	71-76
➲	निराला के कथा – साहित्य में नारी ***सुशीला गुप्ता*** ***डॉ. माधवम् सिंह***	77-80
➲	प्रयोगवाद और अज्ञेय का चिंतन ***मनीष कुमार सिंह***	81-85
➲	नवजागरण और स्त्री पत्रकारिता ***रेनू वर्मा***	86-88
➲	ग्रामीण परिवेश में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि का समाजशास्त्रीय अध्ययन ***डॉ. रश्मि सिंह***	89-92

बुन्देलखण्ड में जल संरक्षण समस्या एवं समाधान : संक्षिप्त अवलोकन

डॉ. विनोद कुमार*
डॉ. मनोज सिंह यादव**

सारांश

उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में फैला बुंदेलखंड क्षेत्र प्राकृतिक और मानवजनित कारकों के संयोजन के कारण लगातार जल संकट से जूझ रहा है। अनियमित वर्षा, लगातार सूखा, अत्यधिक भूजल की कमी और पारंपरिक जल संचयन संरचनाओं के क्षरण की विशेषता वाले बुंदेलखंड की जल कमी इसकी मुख्य रूप से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था और ग्रामीण आजीविका के लिए एक बड़ा खतरा है। वनों की कटाई, मृदा अपरदन और खंडित शासन तंत्रों के कारण क्षेत्र का जल संकट और भी बढ़ गया है, जो जल प्रबंधन के लिए एक समग्र और टिकाऊ दृष्टिकोण अपनाने में विफल रहे हैं। बुंदेलखंड में जल संरक्षण चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है जो पारंपरिक जल निकायों के पुनरुद्धार, बड़े पैमाने पर वाटरशेड विकास, सूक्ष्म सिंचाई प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देने, समुदाय के नेतृत्व वाले जल शासन मॉडल, वर्षा जल संचयन पहल और वनीकरण के माध्यम से पारिस्थितिक बहाली को एकीकृत करे। इसके अलावा, बुंदेलखंड में दीर्घकालिक जल सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए मनरेगा और जल शक्ति अभियान जैसी सरकारी योजनाओं के साथ-साथ तकनीकी नवाचारों और क्षेत्र-विशिष्ट नीतिगत सुधारों का समन्वय अत्यंत आवश्यक है। यह शोधपत्र बुंदेलखंड में जल संकट के मूल कारणों की पड़ताल करता है और पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक हस्तक्षेपों के साथ मिलाकर व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करता है। साथ ही, बुंदेलखंड को जल संकटग्रस्त क्षेत्र से जल-क्षयकारी क्षेत्र में बदलने के लिए सहभागी और विकेन्द्रीकृत जल प्रशासन की आवश्यकता पर बल देता है।

की-वर्ड- बुंदेलखंड, जल संरक्षण, भूजल की कमी, वर्षा जल संचयन, सूक्ष्म सिंचाई, जलवायु परिवर्तन, ग्रामीण आजीविका, जल संकट, सतत विकास।

परिचय

भौगोलिक रूप से उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के तेरह जिलों में फैला बुंदेलखंड, भारत के सबसे अधिक जल-संकटग्रस्त क्षेत्रों में से एक माना जाता है। अपनी अर्ध-शुष्क जलवायु, लहरदार चट्टानी भूभाग और नाजुक पारिस्थितिकी की विशेषता के कारण, बुंदेलखंड ऐतिहासिक रूप से जल की कमी और बार-बार आने वाले सूखे के प्रति संवेदनशील रहा है। इस क्षेत्र में 800-1200 मिमी औसत वार्षिक वर्षा होती है, जो अत्यधिक अनियमित है और अक्सर छोटी अवधि में केंद्रित होती है, जिससे असमान जल वितरण और गंभीर अपवाह हानि होती है ।[1]

पिछले कुछ दशकों में, सूखे की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि हुई है, जिसका मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और अस्थिर भूमि-उपयोग प्रथाएँ हैं। बेतवा, केन और धसान सहित कई नदियों की उपस्थिति के बावजूद, बुंदेलखंड तीव्र जल संकट से जूझता है, क्योंकि सतही जल स्रोत या तो मौसमी हैं, भारी मात्रा में गाद से भरे हैं, या उनका प्रबंधन ठीक से नहीं किया जाता है । मानसून के पानी के प्रभावी संरक्षण और उपयोग में विफलता ने इस क्षेत्र को जल संकट और कृषि संकट के एक "जलविज्ञान हॉटस्पॉट" में बदल दिया है।

बुंदेलखंड में जल संरक्षण का संकट इसके सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक ताने-बाने से गहराई से जुड़ा हुआ है। इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर आधारित है, जहाँ 70% से अधिक आबादी आजीविका के लिए वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर है। हालाँकि, अत्यधिक दोहन, पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों के क्षरण और स्थायी सिंचाई बुनियादी ढाँचे की कमी के कारण भूजल स्तर में गिरावट ने ग्रामीण गरीबी और पलायन को बढ़ा दिया है। 'बावड़ियाँ', 'जोहड़', 'तालाब' और बावड़ियाँ जैसे पारंपरिक जल निकाय, जो कभी बुंदेलखंड की जल सुरक्षा की जीवन रेखा थे, शहरीकरण और बुनियादी

* एसोसियेट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय पिपरहरी तिन्दवारी बांदा, (उ०प्र०)–210123,
Email: drvinodkumar786@gmail.com
** सहायक प्रोफेसर – इतिहास, काशी नरेश राजकीय, स्नातकोत्तर महाविद्यालय ज्ञानपुर भदोही उ० प्र०-221304,
Email: manoj.dheup 2013@gmail.com

ढाँचे के विकास के कारण उपेक्षित, अतिक्रमणग्रस्त या लुप्त हो गए हैं।[2] इसके अलावा, बुंदेलखंड में जल प्रबंधन के लिए नीतिगत हस्तक्षेप अक्सर खंडित रहे हैं, जिनमें दीर्घकालिक जल संसाधन स्थिरता के बजाय सूखा राहत पैकेजों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया है।[3] इस संकट के लिए एक समग्र और एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें पारंपरिक जल ज्ञान को पुनर्जीवित करने के साथ-साथ आधुनिक तकनीकी समाधान, सामुदायिक भागीदारी और सरकारी योजनाओं के प्रभावी अभिसरण को शामिल किया जाए ताकि क्षेत्र में जल सुरक्षा और सामाजिक-आर्थिक लचीलापन सुनिश्चित किया जा सके।

बुंदेलखंड में जल संरक्षण की समस्याएँ

1. अनियमित वर्षा और जलवायुगत संवेदनशीलता

बुंदेलखंड में प्रतिवर्ष लगभग 800-1200 मिमी वर्षा होती है, जो न केवल अपर्याप्त है, बल्कि अत्यधिक अनियमित भी है। पिछले कुछ दशकों में, जलवायु परिवर्तन ने वर्षा की परिवर्तनशीलता को और बढ़ा दिया है, जिसके परिणामस्वरूप बार-बार सूखा पड़ रहा है और लंबे समय तक सूखा पड़ा है ।[4] सूखे के वर्षों में मानसून पर निर्भर कृषि चौपट हो जाती है, जिससे सिंचाई और पेयजल दोनों के लिए पानी की कमी और बढ़ जाती है, जिससे ग्रामीण आजीविका बुरी तरह प्रभावित होती है और मजबूरन पलायन होता है।

2. पारंपरिक जल निकायों का क्षरण

ऐतिहासिक रूप से, बुंदेलखंड अपनी जटिल पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों—जैसे जोहड़, बावड़ियाँ, तालाब और कुंड—के लिए जाना जाता था, जो विकेन्द्रीकृत जल भंडारण इकाइयों के रूप में कार्य करते थे। हालाँकि, दशकों की उपेक्षा, अतिक्रमण, शहरीकरण के दबाव और नियमित रखरखाव के अभाव के कारण, इनमें से कई संरचनाएँ या तो गाद से भर गई हैं या पूरी तरह से गायब हो गई हैं।[5] इन स्वदेशी जल संरक्षण प्रणालियों के विघटन ने क्षेत्र की वर्षा जल संचयन और भंडारण क्षमता को काफी कम कर दिया है, जिससे यह अस्थिर भूजल निष्कर्षण पर अधिकाधिक निर्भर होता जा रहा है।

3. अत्यधिक भूजल निष्कर्षण

बुंदेलखंड में पानी की तीव्र कमी ने सिंचाई और घरेलू ज़रूरतों, दोनों के लिए बोरवेल और ट्यूबवेल पर अत्यधिक निर्भरता को मजबूर कर दिया है। इस अनियंत्रित निष्कर्षण के कारण भूजल स्तर में खतरनाक स्तर की कमी आई है। कई जिलों में, भूजल स्तर 20-25 मीटर से नीचे गिर गया है, जिससे जल निष्कर्षण तेजी से अव्यवहारिक और ऊर्जा-गहन होता जा रहा है।[6] व्यवस्थित भूजल पुनर्भरण उपायों के अभाव और खराब जलभृत प्रबंधन ने इस कमी को और बढ़ा दिया है, जिससे यह क्षेत्र एक आसन्न भूजल संकट की ओर बढ़ रहा है।

4. वनों की कटाई और मृदा अपरदन

बुंदेलखंड का नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र बड़े पैमाने पर वनों की कटाई, मुख्यतः कृषि विस्तार, अवैध कटाई और खनन गतिविधियों के कारण, से और भी अस्थिर हो गया है। वनस्पति आवरण के ह्रास ने मृदा अपरदन को तीव्र कर दिया है, जिससे मृदा की जलधारण क्षमता में भारी कमी आई है। इसके कारण मौजूदा जलाशयों, नदियों और पारंपरिक तालाबों में तेज़ी से गाद जम गई है, जिससे उनकी भंडारण क्षमता कम हो गई है और बार-बार सूखे के चक्र में योगदान मिला है।[7] वन पारिस्थितिकी प्रणालियों के क्षरण ने स्थानीय वर्षा पैटर्न और भूजल पुनर्भरण पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला है।

5. एकीकृत जल प्रबंधन नीतियों का अभाव

दीर्घकालिक जल संकट के बावजूद, बुंदेलखंड में नीतिगत हस्तक्षेप काफी हद तक प्रतिक्रियात्मक और खंडित रहे हैं, जिनमें दीर्घकालिक, स्थायी जल संसाधन प्रबंधन रणनीतियों के बजाय सूखा सहायता पैकेज जैसे अल्पकालिक राहत उपायों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया है। समन्वित जल प्रबंधन में स्थानीय शासन संरचनाओं (पंचायतों), राज्य जल एजेंसियों और जमीनी स्तर के सामुदायिक संगठनों को शामिल करने वाली एकीकृत योजना का स्पष्ट अभाव है।[8] इस वियोग के परिणामस्वरूप संसाधनों का अकुशल आवंटन, जल अवसंरचना का खराब रखरखाव और क्षेत्र में जल लचीलापन बनाने में समग्र विफलता हुई है।

बुंदेलखंड के लिए जल संरक्षण समाधान

1. पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों का पुनरुद्धार

बुंदेलखंड की जल स्थिरता उसके सदियों पुराने जल ज्ञान को पुनर्जीवित करने में निहित है। जोहड़ (मिट्टी के तटबंध), बावड़ियाँ (बावड़ियाँ), कुंड (भूमिगत टैंक) और तालाब (तालाब) जैसी पारंपरिक जल संचयन संरचनाओं का जीर्णोद्धार और गाद-मुक्ति मानसून के दौरान क्षेत्र की जल धारण क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकती है। स्थानीय स्थलाकृति और जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप कुशलतापूर्वक डिज़ाइन की गई ऐसी संरचनाएँ सतही अपवाह को रोकने, भूजल पुनर्भरण को बढ़ाने और शुष्क महीनों के दौरान जल उपलब्धता सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। राजस्थान में तरुण भारत संघ (टीबीएस) के जोहड़ पुनरुद्धार आंदोलन जैसे सफल मॉडल, जिन्होंने शुष्क गाँवों को जल-प्रचुर क्षेत्रों में बदल दिया, बुंदेलखंड के लिए एक मापनीय खाका प्रस्तुत करते हैं।[9] यह दृष्टिकोण न केवल जल संकट का समाधान करता है, बल्कि सामुदायिक स्वामित्व और सतत जल प्रबंधन को भी बढ़ावा देता है।

2. जलग्रहण विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा

बुंदेलखंड की जल संरक्षण रणनीति के लिए एकीकृत जलग्रहण प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण है। जलग्रहण विकास में समोच्च खाइयों, रिसाव टैंकों, चेकडैम, नाला बाँध और वनरोपण का निर्माण शामिल है, जिनका उद्देश्य मृदा नमी को बढ़ाना, सतही अपवाह को कम करना और भूजल रिसाव को सुगम बनाना है। महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश जैसे वर्षा की कमी वाले क्षेत्रों में नाबार्ड द्वारा वित्त पोषित जलग्रहण परियोजनाओं ने जल उपलब्धता, फसल उत्पादकता और ग्रामीण आय में उल्लेखनीय सुधार प्रदर्शित किया है। बुंदेलखंड में बड़े पैमाने पर, समुदाय-नेतृत्व वाले जलग्रहण कार्यक्रमों को लागू करने से इसके क्षतिग्रस्त भू-दृश्यों का कायाकल्प हो सकता है, बाहरी जल स्रोतों पर निर्भरता कम हो सकती है और बार-बार पड़ने वाले सूखे के प्रभावों को कम किया जा सकता है।[10]

3. सूक्ष्म सिंचाई तकनीकें (ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई)

बुंदेलखंड के सीमित जल संसाधनों और छोटे व सीमांत किसानों की बहुलता को देखते हुए, जल-कुशल कृषि के लिए ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई जैसी सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों को अपनाना आवश्यक है। ये तकनीकें जड़ क्षेत्र में पानी का सटीक उपयोग सुनिश्चित करती हैं, जिससे वाष्पीकरण और रिसने से होने वाली हानि न्यूनतम होती है। भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा किए गए अध्ययनों से पता चला है कि सूक्ष्म सिंचाई न केवल जल उपयोग दक्षता को 40-60% तक बढ़ाती है, बल्कि फसल की पैदावार में भी सुधार करती है और पानी पंप करने के लिए ऊर्जा की खपत को कम करती है।[11] बुंदेलखंड के किसान, जो पानी की कमी और बढ़ती लागत से जूझ रहे हैं, ऐसी प्रणालियों को अपनाने से काफी लाभान्वित हो सकते हैं, खासकर बागवानी, दलहन और तिलहन की खेती के लिए।

4. समुदाय-आधारित जल प्रशासन

स्थायित्व और जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए जमीनी स्तर पर जल प्रशासन महत्वपूर्ण है। पानी पंचायतों (जल उपयोगकर्ता संघों) का गठन स्थानीय समुदायों को जल संसाधन नियोजन, जल संरचनाओं के रखरखाव, समान वितरण और संघर्ष समाधान की जिम्मेदारी लेने के लिए सशक्त बनाता है। महाराष्ट्र के हिवारे बाज़ार गाँव का सफल जल आत्मनिर्भरता मॉडल, जहाँ समुदाय-संचालित पहलों ने एक सूखाग्रस्त गाँव को जल-आधिक्य वाले गाँव में बदल दिया, बुंदेलखंड के लिए एक अनुकरणीय ढाँचा प्रस्तुत करता है।[12] ऐसा सहभागी शासन स्वामित्व की भावना को बढ़ावा देता है, बाहरी एजेंसियों पर निर्भरता कम करता है, और यह सुनिश्चित करता है कि जल प्रबंधन पद्धतियाँ स्थानीय आवश्यकताओं और पारिस्थितिक वास्तविकताओं के अनुरूप हों।

5. शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन

अनियमित मानसून और घटते भूजल स्तर को देखते हुए, शहरी और ग्रामीण बुंदेलखंड दोनों में वर्षा जल संचयन (RWH) को संस्थागत रूप दिया जाना चाहिए। सभी सार्वजनिक संस्थानों, व्यावसायिक भवनों और नए आवासीय निर्माणों के लिए छत पर RWH प्रणाली अनिवार्य की जानी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में, छोटे पैमाने की RWH संरचनाओं जैसे रिसाव गड्ढे, पुनर्भरण शाफ्ट और कृषि तालाबों को सब्सिडी और जागरूकता अभियानों के माध्यम से बढ़ावा दिया जाना चाहिए। अध्ययनों से संकेत मिलता है कि कुशल RWH स्थानीय भूजल स्तर को बढ़ा सकता है, शहरी बाढ़ को कम कर सकता है, और अभावग्रस्त अवधियों के दौरान एक पूरक जल स्रोत प्रदान कर सकता है।[13] अटल भूजल योजना और जल शक्ति अभियान जैसी सरकारी योजनाओं का बुंदेलखंड में बड़े पैमाने पर ग्रामीण पेयजल अवसंरचना विकास के लिए लाभ उठाया जाना चाहिए।

6. वनरोपण और कृषि वानिकी

बुंदेलखंड में पारिस्थितिक क्षरण, जो बड़े पैमाने पर वनों की कटाई और मृदा अपरदन से चिह्नित है, वनरोपण और कृषि वानिकी में तत्काल हस्तक्षेप की आवश्यकता को दर्शाता है। नीम, बबूल, बेर और महुआ जैसी देशी सूखा-प्रतिरोधी प्रजातियों पर केंद्रित बड़े पैमाने पर वृक्षारोपण अभियान पारिस्थितिक संतुलन को बहाल कर सकते हैं, मृदा नमी प्रतिधारण को बढ़ा सकते हैं और सूक्ष्म-जलवायु परिस्थितियों में सुधार कर सकते हैं। कृषि वानिकी, यानी फसलों और पशुधन प्रणालियों के साथ वृक्षों का एकीकरण, मृदा उर्वरता और जल संरक्षण में सुधार करते हुए विविध आय स्रोत प्रदान करके किसानों के लिए एक स्थायी आजीविका विकल्प प्रदान करता है।[14] भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद (ICFRE) बुंदेलखंड के लिए एक क्षेत्र-विशिष्ट कृषि वानिकी मॉडल की सिफारिश करती है, जो पारिस्थितिक बहाली को आर्थिक व्यवहार्यता के साथ संतुलित करता है।

7. नीतिगत सुधार और योजनाओं का अभिसरण

बुंदेलखंड के लिए एक एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन नीति समय की मांग है। मनरेगा (जल संरक्षण कार्यों के लिए), प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई), जल शक्ति अभियान और अटल भूजल योजना जैसी मौजूदा सरकारी योजनाओं को नियोजन और कार्यान्वयन स्तरों पर एकीकृत किया जाना चाहिए ताकि तालमेल और संसाधन अनुकूलन सुनिश्चित हो सके। नीतिगत सुधारों में समुदाय-नेतृत्व वाले जल संरक्षण प्रयासों को प्रोत्साहित करने, पारंपरिक जल संरचनाओं के रखरखाव के लिए वित्तीय आवंटन सुनिश्चित करने और स्थानीय शासन तंत्र को मजबूत करने पर ध्यान

केंद्रित किया जाना चाहिए। मापनीय परिणामों और आवधिक लेखापरीक्षाओं वाली एक दीर्घकालिक बुंदेलखंड जल सुरक्षा कार्य योजना इस क्षेत्र में स्थायी जल प्रबंधन को गति प्रदान कर सकती है।[15]

8. अनुसंधान और प्रौद्योगिकी हस्तक्षेप

बुंदेलखंड में क्षेत्रीय जल अनुसंधान और नवाचार केंद्र स्थापित करने की तत्काल आवश्यकता है जो जलवायु-अनुकूल कृषि पद्धतियों, उन्नत भूजल पुनर्भरण तकनीकों और वास्तविक समय जल संसाधन निगरानी प्रणालियों के विकास पर ध्यान केंद्रित करें। जीआईएस-आधारित जलविज्ञान मानचित्रण, आईओटी-सक्षम जल सेंसर और मोबाइल-आधारित जल परामर्श सेवाओं का उपयोग जमीनी स्तर पर जल प्रबंधन प्रथाओं में क्रांतिकारी बदलाव ला सकता है। शैक्षणिक संस्थानों, सरकारी एजेंसियों और निजी क्षेत्र के नवप्रवर्तकों के बीच सहयोग बुंदेलखंड की विशिष्ट चुनौतियों के लिए संदर्भ-विशिष्ट जल समाधानों के विकास को बढ़ावा दे सकता है।[16]

निष्कर्ष:

बुंदेलखंड में जल संकट जलवायु, पारिस्थितिकी, सामाजिक-आर्थिक और शासन संबंधी विफलताओं के एक जटिल अंतर्संबंध का प्रकटीकरण है, जो दशकों से संचित है, जिसने ऐतिहासिक रूप से जल-प्रचुर क्षेत्र को सूखाग्रस्त परिदृश्य में बदल दिया है। अनियमित वर्षा पैटर्न, पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों का क्षरण, भूजल का असंतुलित दोहन, वनों की कटाई और खंडित नीतिगत हस्तक्षेपों ने सामूहिक रूप से जल संकट को बढ़ा दिया है, जिसका कृषि, आजीविका और समग्र सामाजिक-आर्थिक लचीलेपन पर गंभीर प्रभाव पड़ा है। बुंदेलखंड की जल संरक्षण चुनौतियों का समाधान करने के लिए अल्पकालिक राहत उपायों से दीर्घकालिक, स्थायी जल प्रबंधन रणनीतियों की ओर एक आदर्श बदलाव की आवश्यकता है जो पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक वैज्ञानिक नवाचारों के साथ मिलाए। पारंपरिक जल निकायों को पुनर्जीवित और बनाए रखना, एकीकृत जलग्रहण प्रबंधन को लागू करना, जल-कुशल कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देना और सहभागी जल प्रशासन के माध्यम से स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाना अनिवार्य है। इसके अलावा, मनरेगा, जल शक्ति अभियान और प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना जैसी सरकारी योजनाओं के अभिसरण के साथ-साथ मज़बूत नीतिगत सुधारों और तकनीकी हस्तक्षेपों से इस क्षेत्र में जल सुरक्षा की दिशा में एक परिवर्तनकारी बदलाव को गति मिल सकती है। बुंदेलखंड की जल स्थिरता सुनिश्चित करना न केवल एक पर्यावरणीय आवश्यकता है, बल्कि एक सामाजिक-आर्थिक अनिवार्यता भी है जो ग्रामीण संकट को दूर कर सकती है, जबरन पलायन को कम कर सकती है और समावेशी विकास को बढ़ावा दे सकती है। बुंदेलखंड में जल संरक्षण की सफलता भारत के अन्य जल-संकटग्रस्त क्षेत्रों के लिए एक अनुकरणीय मॉडल के रूप में भी काम कर सकती है, जो उभरते जल संकट से निपटने में एकीकृत, समुदाय-संचालित जल संसाधन प्रबंधन की शक्ति को उजागर करती है।

संदर्भ-ग्रन्थ

1. Central Ground Water Board (CGWB), Ground Water Scenario of Bundelkhand Region, 2023
2. Singh, Rajendra, "Traditional Water Conservation Practices in Bundelkhand," Tarun Bharat Sangh Publications, 2018
3. Ministry of Jal Shakti, "Policy Gaps in Drought-Prone Areas: A Case Study of Bundelkhand," 2023.
4. Singh, R.B. (2018). *Water Resource Management: A Geographical Perspective.* Springer, Singapore.
5. Agarwal, Anil & Narain, Sunita (1997). *Dying Wisdom: Rise, Fall and Potential of India's Traditional Water Harvesting Systems.* CSE, New Delhi.
6. Water Aid India (2020). *Groundwater Depletion and Agrarian Crisis in Bundelkhand.* New Delhi: WaterAid Publications.
7. Rathore, M.S. (2005). *Water and Drought: A Perspective from Rajasthan and Bundelkhand.* Rawat Publications, Jaipur.
8. Prakash, Anjal (2012). *Water Resources Policies in South Asia.* Routledge India
9. Agarwal, Anil & Narain, Sunita (1997). *Dying Wisdom: Rise, Fall and Potential of India's Traditional Water Harvesting Systems.* CSE, New Delhi.
10. Rathore, M.S. (2005). *Water and Drought: A Perspective from Rajasthan and Bundelkhand.* Rawat Publications, Jaipur.

11. Ministry of Agriculture, Government of India (2022). *Micro-Irrigation and Water Use Efficiency Reports.* New Delhi.
12. Pawar, Popatrao (2019). *Hiware Bazar Model: Water Self-Sufficiency through Community Efforts.* Maharashtra Water Resources Publications.
13. Jal Shakti Ministry (2023). *Rainwater Harvesting Initiatives in India: Case Studies and Policy Frameworks.* Government of India.
14. ICFRE (2022). *Afforestation and Agroforestry Models for Semi-Arid Regions.* Dehradun: Indian Council of Forestry Research and Education.
15. Ministry of Rural Development (2023). *MGNREGA and Water Conservation: Impact Assessment in Bundelkhand.* Government of India.
16. Indian Institute of Water Management (IIWM) (2023). *Innovations in Water Conservation Technologies.* Bhubaneswar: IIWM Publications

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का दक्षिण–पूर्व एशिया में योगदान और आजाद हिंद फौज का पुनर्गठन

डॉ. प्रणव कुमार रत्नेश*

सारांश :

यह शोध-पत्र नेताजी सुभाष चंद्र बोस के दक्षिण-पूर्व एशिया में आगमन और उनके द्वारा किए गए क्रांतिकारी प्रयासों के ऐतिहासिक महत्व का विश्लेषण करता है। 1943 में जापानी सहयोग से नेताजी ने इंडोनेशिया के सबांग और फिर सिंगापुर पहुँचकर आज़ाद हिंद फौज का पुनर्गठन किया, जिसका उद्देश्य ब्रिटिश शासन के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष द्वारा भारत को स्वतंत्र कराना था। उन्होंने आज़ाद हिंद सरकार की स्थापना की और "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा" जैसे नारों के माध्यम से जनता में स्वराज्य के प्रति जोश और समर्पण उत्पन्न किया। उनके नेतृत्व में भारतीय महिलाओं के लिए 'रानी झांसी रेजीमेंट' जैसी सैन्य इकाई भी बनी। यह शोध नेताजी की सैन्य, कूटनीतिक, और वैचारिक दृष्टिकोण की समन्वित भूमिका को उजागर करता है और यह दर्शाता है कि स्वतंत्रता का मार्ग केवल राजनीतिक संवाद से नहीं, बल्कि बलिदान और संगठित क्रांति से भी प्रशस्त होता है। यह अध्ययन यह भी दर्शाता है कि नेताजी की सोच और रणनीति ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को वैश्विक आयाम प्रदान किया।

मुख्य शब्द : नेताजी सुभाष चंद्र बोस, आज़ाद हिंद फौज (INA), स्वतंत्रता संग्राम, दक्षिण-पूर्व एशिया, सशस्त्र क्रांति, रानी झांसी रेजीमेंट, आज़ाद हिंद सरकार, ब्रिटिश शासन विरोध, कूटनीति, भारत की आज़ादी

प्रस्तावना:

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में कई क्रांतिकारियों ने अपने विचारों, कार्यों और संघर्षों के माध्यम से अमिट छाप छोड़ी, परंतु नेताजी सुभाष चंद्र बोस का स्थान सर्वथा विशिष्ट और प्रेरणास्पद है। जहाँ एक ओर महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसात्मक आंदोलन चल रहे थे, वहीं दूसरी ओर नेताजी ने सशस्त्र क्रांति को भारत की स्वतंत्रता का एक प्रभावी मार्ग माना। उनका विश्वास था कि ब्रिटिश साम्राज्य की नींव को केवल नैतिक आग्रह से नहीं, बल्कि सशस्त्र विद्रोह से ही हिलाया जा सकता है। 1943 में दक्षिण-पूर्व एशिया में उनका आगमन, आज़ाद हिंद फौज (INA) के पुनर्गठन का आरंभिक बिंदु बना, जिसने न केवल भारत की स्वतंत्रता की चेतना को विदेशों में पुनर्जीवित किया, बल्कि देश के भीतर भी एक नई ऊर्जा का संचार किया। इस शोधपत्र में नेताजी के ऐतिहासिक आगमन, उनके क्रांतिकारी भाषणों, और आज़ाद हिंद सरकार की स्थापना की प्रक्रिया का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का दक्षिण-पूर्व एशिया में आगमन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण मोड़ था। रूढ़िवादिता, औपनिवेशिक सत्ता और आत्मसमर्पण की राजनीति से अलग हटकर, नेताजी ने सशस्त्र क्रांति के मार्ग को चुना और 8 फरवरी 1943 को जर्मनी से जापानी पनडुब्बी के माध्यम से मेडागास्कर होते हुए इंडोनेशिया के सबांग बंदरगाह पर पहुंचे। वहाँ से वे 28 अप्रैल को सिंगापुर पहुँचे जहाँ उनकी आगवानी के लिए सभी तैयारियाँ की गई थीं। यह सिंगापुर नेताजी के जीवन में एक ऐतिहासिक स्थल सिद्ध हुआ क्योंकि यही वह स्थान था जहाँ उन्होंने आज़ाद हिंद फौज (INA) के पुनर्गठन का संकल्प लिया।

सिंगापुर पहुँचते ही नेताजी ने सबसे पहले जापानी अधिकारियों से मिलकर आवश्यक राजनीतिक चर्चाएँ कीं और वहाँ की स्थिति का गहराई से अध्ययन किया। जापानी प्रधानमंत्री जनरल तोजो से उनकी दो बार

* चरपोखरी, भोजपुर, बिहार

मुलाक़ात हुई। तोजो ने भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष में पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया और बोस को विश्वास दिलाया कि जापान भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने में हरसंभव सहायता करेगा। यह नेताजी की कूटनीतिक सफलता थी। इसके बाद नेताजी ने 5 जुलाई 1943 को सिंगापुर के प्रसिद्ध कैथे थिएटर में आज़ाद हिंद फौज की पुनर्स्थापना की घोषणा की और सैनिकों के समक्ष प्रसिद्ध नारा दिया – "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा।"

इस पुनर्गठन के पीछे उनका स्पष्ट उद्देश्य भारत को स्वतंत्र कराने के लिए सशस्त्र संघर्ष को अंतिम रूप देना था। आज़ाद हिंद सरकार की औपचारिक स्थापना नेताजी द्वारा 21 अक्टूबर 1943 को की गई, और उन्हें स्वयं इसका प्रधानमंत्री, युद्धमंत्री तथा विदेशमंत्री नियुक्त किया गया। इसके पश्चात् नेताजी ने 30,000 से अधिक सैनिकों को भारत की ओर कूच का आदेश दिया और अंडमान व निकोबार द्वीपों को स्वतंत्र भारत की पहली भूमि के रूप में घोषित किया। 5 अप्रैल 1944 को नेताजी ने मणिपुर के मोइरांग नगर में तिरंगा फहराकर स्वतंत्र भारत की भूमि पर अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई। यह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक गौरवपूर्ण क्षण था।

नेताजी का नेतृत्व केवल सैन्य रणनीति तक सीमित नहीं था, बल्कि उनके भाषणों और विचारों ने जनता के बीच नई चेतना का संचार किया। उन्होंने भारतीय महिलाओं के लिए 'रानी झांसी रेजीमेंट' की स्थापना की और उसमें हजारों महिलाओं को देश सेवा हेतु प्रेरित किया। नेताजी का यह स्पष्ट विश्वास था कि जब तक भारत की अंतिम सीमा तक से अंग्रेज़ी शासन का अंत नहीं होता, तब तक स्वतंत्रता अधूरी है। उनका यह विचार - "हमारा संघर्ष तभी समाप्त होगा जब अंतिम अंग्रेज़ सिपाही भारत की धरती से बाहर निकाल दिया जाएगा" - उनके अद्वितीय साहस, दूरदर्शिता और समर्पण का परिचायक है।

नेताजी के भाषण, उनकी संगठन क्षमता, और उनका आह्वान देशभर में गूंज उठा। 'आज़ाद हिंद रेडियो' के माध्यम से उनका संदेश घर-घर पहुँचा और भारत के कोने-कोने में क्रांतिकारी भावनाओं की लहर दौड़ गई। उनकी जीवंत उपस्थिति और स्पष्ट दृष्टिकोण ने दक्षिण-पूर्व एशिया में फैले हजारों भारतीयों को अपना सब कुछ छोड़कर आज़ादी के यज्ञ में समर्पित होने के लिए प्रेरित किया। सैन्य अनुशासन, योजना, आस्था और विश्वास - ये चार आधार उनके संघर्ष की रीढ़ बने।

इस प्रकार नेताजी सुभाष चंद्र बोस द्वारा 1943 में किए गए प्रयास भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में एक निर्णायक अध्याय की तरह हैं। उनका समर्पण, संगठन कौशल और राष्ट्रप्रेम आज भी आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करता है। INA और आज़ाद हिंद सरकार का यह अध्याय इस बात का प्रमाण है कि स्वतंत्रता केवल कागज़ी संकल्पों से नहीं मिलती, बल्कि इसके लिए त्याग, बलिदान और समर्पण की चरम सीमाएँ पार करनी होती हैं।

निष्कर्ष:

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का दक्षिण-पूर्व एशिया में प्रवास, उनका संगठनात्मक नेतृत्व और आज़ाद हिंद फौज की पुनर्रचना भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक क्रांतिकारी अध्याय को प्रस्तुत करता है। उनके द्वारा उठाया गया प्रत्येक कदम केवल राजनीतिक या सैन्य रणनीति नहीं था, बल्कि वह एक वैचारिक संग्राम था – जिसमें स्वराज्य की भावना, आत्मबलिदान का आदर्श और राष्ट्रभक्ति की चरम अभिव्यक्ति निहित थी। 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा' जैसा नारा केवल युद्धभूमि का आह्वान नहीं था, वह भारत के जन-जन के दिलों में आत्मनिर्भरता की लौ जगाने वाला मंत्र था। नेताजी ने यह सिद्ध कर दिया कि स्वतंत्रता केवल याचना से नहीं, बल्कि बलिदान और संघर्ष से प्राप्त की जाती है। उनका यह योगदान आने वाली पीढ़ियों के लिए न केवल प्रेरणा का स्रोत है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि एक दृढ़ इच्छाशक्ति वाला नेतृत्व किस प्रकार राष्ट्रीय चेतना को

संगठित कर सकता है। इस प्रकार नेताजी का संपूर्ण कार्य और उनके आदर्श आज भी भारतीय आत्मा में जीवित हैं और रहेंगे।

संदर्भ सूची:

1. विकिपीडिया. *भारतीय राष्ट्रीय सेना (Indian National Army).* https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_National_Army
2. कैम्ब्रिज कोर. *जापानी आक्रमण, सुभाष चंद्र बोस और भारतीय युद्धकालीन राष्ट्रवाद.* https://core-prod.cambridgecore.org/.../9789814620123c10
3. विकिपीडिया. *आज़ाद हिंद (Azad Hind).* https://en.wikipedia.org/wiki/Azad_Hind
4. इंडिया टाइम्स. *आईएनए ने मोइरांग में पहला भारतीय राष्ट्रीय ध्वज फहराया.* https://www.indiatimes.com/.../ina-hoisted-first-indian...
5. विकिपीडिया. *रानी झांसी रेजीमेंट (Rani of Jhansi Regiment).* https://en.wikipedia.org/wiki/Rani_of_Jhansi_Regiment
6. नेशनल आर्काइव्स (यूके). *रेडियो पर बोस.* https://www.nationalarchives.gov.uk/.../bose-radio/

◀◀ ▶▶

अज्ञेय कृत 'शेखरः एक जीवनी': संवेदनात्मक यथार्थवाद की अभिव्यक्ति का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन

अनिता कुमारी*

सारांश :

अज्ञेय (सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन) द्वारा रचित *"शेखर: एक जीवनी"* (1941) हिंदी उपन्यास साहित्य की एक अद्वितीय कृति है, जो संवेदनात्मक यथार्थवाद का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह उपन्यास एक आत्मकथात्मक शैली में रचा गया ऐसा आख्यान है, जो नायक शेखर के माध्यम से मानव मन की जटिलताओं, मानसिक द्वंद्वों, विद्रोह, प्रेम, पीड़ा और आत्मचिंतन का गहन विश्लेषण करता है। शेखर का चरित्र समाज, धर्म, पारिवारिक संबंधों और अस्तित्व से जुड़े प्रश्नों से जूझता हुआ एक आधुनिक चेतनशील व्यक्ति के रूप में उभरता है, जिसकी आत्मचेतना और विद्रोही प्रवृत्ति उसे विशिष्ट बनाती है। अज्ञेय ने इस उपन्यास में फ्लैशबैक तकनीक का प्रयोग करते हुए स्मृतियों और अनुभूतियों के माध्यम से शेखर की मनःस्थितियों को चित्रित किया है। उपन्यास की भाषा, प्रतीकात्मकता और बिम्ब प्रयोग इसे सौंदर्यात्मक दृष्टि से समृद्ध बनाते हैं। यह शोधपत्र *"शेखर: एक जीवनी"* में व्यक्त संवेदनात्मक यथार्थ, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, सामाजिक आलोचना और अस्तित्ववादी दृष्टिकोण का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि यह उपन्यास न केवल आत्मकथा है, बल्कि संपूर्ण मानव चेतना का प्रतीकात्मक आख्यान है, जो हिंदी साहित्य में मनोविश्लेषणात्मक और यथार्थवादी प्रवृत्तियों की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर सिद्ध होता है।

मुख्य शब्द: संवेदनात्मक यथार्थवाद; मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास; आत्मकथात्मक शैली; मानसिक द्वंद्व; अस्तित्ववाद; विद्रोह; प्रेम और पीड़ा; हिंदी उपन्यास; प्रतीक और बिंब; आत्मचेतना; सामाजिक आलोचना।

प्रस्तावना

हिंदी उपन्यास साहित्य में अज्ञेय (सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन) का नाम एक प्रयोगशील साहित्यकार के रूप में लिया जाता है। उनकी कृति *शेखर: एक जीवनी* (1941) न केवल आत्मकथात्मक शैली में रचित उपन्यास है, बल्कि यह संवेदनात्मक यथार्थवाद का एक उत्कृष्ट उदाहरण भी है। यह उपन्यास एक ऐसे विद्रोही युवा के मनोविज्ञान का गहन चित्रण करता है जो समाज, धर्म, परिवार और अस्तित्व से जुड़े प्रश्नों से जूझता है। इस शोध-पत्र में उपन्यास में व्यक्त संवेदनात्मक यथार्थ, मनोवैज्ञानिक द्वंद्व, और सामाजिक आलोचना का गहन विश्लेषण किया गया है।

साहित्य समीक्षा

"शेखर: एक जीवनी" (1941) अज्ञेय द्वारा रचित हिंदी साहित्य की एक अद्वितीय आत्मकथात्मक उपन्यास है, जिसे समकालीन आलोचकों और विद्वानों ने मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और संवेदनात्मक यथार्थवाद की दृष्टि से विशेष महत्व दिया है। इस साहित्य समीक्षा में इस उपन्यास से संबंधित प्रमुख विचारधाराओं, आलोचकों की प्रतिक्रियाओं और व्याख्याओं को संकलित किया गया है।

डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी: अपनी पुस्तक *"अज्ञेय: व्यक्तित्व और साहित्य"* में डॉ. चतुर्वेदी लिखते हैं कि यह उपन्यास "मनुष्य के आंतरिक संसार की व्याख्या का पहला गंभीर प्रयास है।" वे शेखर को एक जटिल मानसिक

* विष्णुपुरी, चितकोहरा, डाकघर – अनीसाबाद, जिला– पटना पिन –3800002

संरचना वाला पात्र मानते हैं, जो आत्मबोध और मानसिक द्वंद्व से लगातार संघर्ष करता है। उनका मत है कि उपन्यास की केंद्रीय शक्ति शेखर के भीतर के 'स्व' की खोज है।[पृष्ठ 67]

डॉ. केदारनाथ शर्मा : डॉ. शर्मा का मानना है कि अज्ञेय ने इस उपन्यास में मूलतः व्यक्ति के मनोजगत की संरचना को केंद्र में रखकर कथा का ताना-बाना बुना है। वे लिखते हैं: "लेखक का उद्देश्य घटनाओं का नहीं, मन:स्थितियों का चित्रण करना था। शेखर की कथा दरअसल व्यक्ति की भीतरी दुनिया का मानचित्र है।" (अज्ञेय की आत्मकथात्मकता', पृष्ठ 91)

डॉ. एस. गणेशन: डॉ. गणेशन की दृष्टि में *"शेखर: एक जीवनी"* हिंदी का प्रथम वैज्ञानिक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। वे इसे हिंदी में मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास की परंपरा की नींव मानते हैं। वे लिखते हैं कि शेखर का चरित्र उन आंतरिक तनावों और दुविधाओं का प्रतिनिधित्व करता है, जो व्यक्ति के सामाजिक ढाँचे और निजी आत्मा के बीच टकराव से उत्पन्न होते हैं। (स्रोत: 'हिंदी उपन्यास और मनोविज्ञान', पृष्ठ 104)

इलाचंद्र जोशी: जोशी जी का मत है कि "शेखर: एक जीवनी" ने हिंदी साहित्य में निजता और आत्माभिव्यक्ति की नई राह खोली। वे इसे "एक आत्मचेतस मन की कथा" कहते हैं जो अपने समय की रूढ़ियों, मान्यताओं और नैतिकताओं से लड़ता है। (स्रोत: 'नवभारत टाइम्स', 1962 के एक लेख में उद्धृत)

प्रो. नामवर सिंह: नामवर सिंह ने इस उपन्यास को 'अज्ञेय के आत्मसंघर्ष की साहित्यिक प्रतिध्वनि' कहा है। वे मानते हैं कि यह उपन्यास किसी विशिष्ट काल या घटना का चित्रण न होकर, आत्मा के उद्वेलन की कथा है, जो आधुनिक व्यक्ति के असंतोष और बेचैनी की अभिव्यक्ति है। ('आलोचना', अंक 15, पृष्ठ 34)

आधुनिक आलोचक इस उपन्यास को संवेदनात्मक यथार्थवाद की दिशा में मील का पत्थर मानते हैं। अज्ञेय के प्रतीकात्मक प्रयोग, संवादहीनता, आत्ममंथन और भाषा की गूढ़ता को नई पीढ़ी के आलोचकों ने अस्तित्ववादी और उत्तर-आधुनिक दृष्टिकोण से भी देखा है।

डॉ. सुधा सिंह के अनुसार, "यह कृति न केवल आत्मकथात्मक है, बल्कि यह आधुनिक हिंदी उपन्यास की मनोविश्लेषणात्मक क्षमता की कसौटी भी है।" (हिंदी साहित्य और आधुनिकता', पृष्ठ 122)

शेखर: एक जीवनी दो भागों में प्रकाशित एक आत्मकथात्मक उपन्यास है, जिसका तीसरा भाग अपूर्ण रह गया। यह उपन्यास शेखर नामक पात्र की चेतना के माध्यम से रचा गया है, जिसमें *पूर्वदीप्ति तकनीक* का प्रयोग हुआ है। शेखर की मृत्यु के पूर्व जीवन की स्मृतियाँ और उसके विचार उसकी आंतरिक मनोदशा को उजागर करते हैं (अज्ञेय, भाग 1, पृ. 5-6)।

अज्ञेय ने इस उपन्यास में यथार्थ को केवल बाह्य स्तर पर नहीं, बल्कि आंतरिक अनुभूतियों और मानसिक द्वंद्वों के स्तर पर चित्रित किया है। शेखर का चरित्र मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की दृष्टि से अत्यंत जटिल है। बचपन से ही उसमें विद्रोह और अस्वीकार की प्रवृत्ति रही है। ईश्वर की सत्ता पर प्रश्न करना, माता के प्रति द्वेष, और मृत्यु के विचारों से उसका जुड़ाव, सभी उसकी मानसिक ग्रंथियों को उद्घाटित करते हैं (भाग 1, पृ. 14-18)। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं–

"यह उपन्यास हिंदी साहित्य में व्यक्ति की मानसिक ग्रंथियों का वैज्ञानिक विश्लेषण करने वाला पहला गंभीर प्रयास है" (चतुर्वेदी, *Tutorial Hindi*, पृ. 42)।

शेखर का शशि के प्रति प्रेम और उसकी मृत्यु के बाद उपजा गहन शोक, संवेदनाओं के स्तर पर पाठकों को स्पर्श करता है।

"इसलिए नहीं कि तुम जीवन में सबसे पहले आई, इसलिए कि मेरा होना अनिवार्य रूप से तुम्हारे होने को लेकर है।" (भाग 2, पृ. 84)

यह पंक्ति प्रेम की उस भावनात्मक तीव्रता को दर्शाती है जो केवल बाह्य व्यवहार में नहीं, आत्मा के स्तर पर अनुभूत होती है।

शेखर समाज की रूढ़ियों, नैतिकता और धार्मिकता के प्रति विद्रोही दृष्टिकोण रखता है। वह कहता है:

"मैं कहता हूँ, ओ विद्रोहियों, आओ, पहले इसी दम्भ को काटो!" (भाग 2, पृ. 102)

यह विद्रोह आत्मप्रेरित है, किसी सामाजिक आंदोलन से प्रेरित नहीं। यह विशुद्ध रूप से अस्तित्ववादी विद्रोह है, जो दास्तायवस्की और सात्र की विचारधारा से प्रभावित जान पड़ता है।

अज्ञेय ने शेखर का चरित्र मनोवैज्ञानिक गहराई के साथ इस प्रकार चित्रित किया है कि वह एक जीवित पात्र बन जाता है। उसका *'अहं'* और *'काम'* के प्रति दृष्टिकोण उसे आधुनिक युवा का प्रतीक बनाता है। अज्ञेय के शब्दों में:

"शेखर कोई बड़ा आदमी नहीं है, वह अच्छा आदमी भी नहीं है, पर वह अपने को पहचानने की कोशिश करता है।" (भाग 2, पृ. 67)

भाषा में प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग उपन्यास की सौंदर्यात्मकता को बढ़ाता है।

"फाँसी! जिस जीवन को उत्पन्न करने में हमारे संसार की सारी शक्तियाँ असमर्थ हैं, उसे छीन लेने में इतनी हृदयहीनता!" (भाग 2, पृ. 91)

शेखर: एक जीवनी" (1941) अज्ञेय (सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन) द्वारा रचित हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण कृति है, जो संवेदनात्मक यथार्थवाद (Emotional Realism) का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह उपन्यास शेखर नामक युवक की आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत है, जो अपने अस्तित्व, समाज और प्रेम के प्रति अपने दृष्टिकोणों का विश्लेषण करता है। उपन्यास में शेखर के जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे बाल्यावस्था, विद्रोह, प्रेम, और मृत्यु की ओर अग्रसरता का संवेदनात्मक और यथार्थवादी चित्रण किया गया है।

उपन्यास की प्रमुख विशेषता इसकी मनोवैज्ञानिक गहराई है। शेखर के मानसिक द्वंद्व और आंतरिक संघर्षों को प्रमुखता से दर्शाया गया है। उसकी आत्मचिंतनशीलता और अस्तित्ववादी विचारधारा उसे एक जटिल और गहरे पात्र के रूप में प्रस्तुत करती है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार, शेखर की मानसिक ग्रंथियों का विश्लेषण करने वाला यह उपन्यास हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है।

अज्ञेय ने शेखर के माध्यम से मानवीय भावनाओं जैसे प्रेम, वेदना, और विद्रोह का यथार्थवादी चित्रण किया है। उपन्यास में शेखर का शशि के प्रति प्रेम और उसकी मृत्यु के बाद की वेदना को गहराई से प्रस्तुत किया गया है, जो पाठकों को शेखर के आंतरिक संसार से जोड़ता है।

उपन्यास में शेखर के विचारों और क्रियाओं के माध्यम से समकालीन सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों की आलोचना की गई है। वह अपने समय की रूढ़िवादिता, धार्मिकता, और सामाजिक असमानताओं के प्रति विद्रोह करता है, जो उसे एक प्रबुद्ध और जागरूक पात्र के रूप में प्रस्तुत करता है।

अज्ञेय की चरित्र-चित्रण की शैली उल्लेखनीय है। वे पात्रों के चरित्रांकन में कल्पना का नहीं अपितु तथ्यों का सहारा लेते हुए उनकी चारित्रिक विशेषताओं को उजागर करते हैं। अज्ञेय 'शेखर' को मनोवैज्ञानिक पात्र के रूप में इस तरह प्रस्तुत करते हैं कि घटनाओं की अधिकता होने पर भी उसका व्यक्तित्व डगमगाता नहीं है। यह उनके लेखन की विशेषता है। शेखर के जीवन में जो भी परिस्थितियाँ आती हैं, वह सब शेखर की आन्तरिक मूल प्रकृति की ही उपज हैं।

उपन्यास की भाषा शैली में अज्ञेय का शिल्प बेजोड़ है, विशेष रूप से उनके प्रतीक और बिम्ब का प्रयोग उल्लेखनीय है। इस उपन्यास का अन्त भी प्रतीकात्मक भाषा में हुआ है। शेखर समाज के प्रदत्त नियमों के भीतर अपने व्यक्तित्व का गला घोंटने को तैयार नहीं है। वह रूढ़ नैतिकता का घोर विरोधी है। शशि एवं शेखर का सम्बन्ध भी इसी रूढ़िबद्धता के विरुद्ध स्वातन्त्र्य की खोज है।

डॉ. गणेशन के अनुसार, हिंदी में शेखर व्यक्ति की विविध मानसिक ग्रंथियों का विश्लेषण कर समझने का प्रयास है और आज तक किसी मनोवैज्ञानिक उपन्यास का अध्ययन शेखर से अधिक वैज्ञानिक नहीं हुआ है। इलाचंद्र जोशी के अनुसार, शेखर एक जीवनी ने दो दशकों से अधिक का समय पारकर यह सिद्ध कर दिया है कि सब मिलाकर पाठकीय संवेदना उसके अनुकूल है। डॉ. केदारनाथ शर्मा के अनुसार, अज्ञेय ने शेखर- एक जीवनी की कथा में शेखर के जीवन के निर्माण, विनाशक तत्वों को, उसकी विकास दिशाओं का जितना चित्रण किया है, उतना उसके जीवन का नहीं। क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य किसी व्यक्ति विशेष के जीवन के मूल तत्वों का विश्लेषण, उनका अन्वेषण और उद्घाटन करना था।

इस प्रकार, "शेखर: एक जीवनी" न केवल एक उपन्यास है, बल्कि यह मानवीय संवेदनाओं, मानसिक द्वंद्वों और सामाजिक आलोचनाओं का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अज्ञेय की यह कृति हिंदी साहित्य में संवेदनात्मक यथार्थवाद की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान है।

शेखर: एक जीवनी केवल आत्मकथा नहीं है, बल्कि यह एक संपूर्ण मानव मन का आख्यान है। अज्ञेय ने संवेदनात्मक यथार्थवाद की स्थापना करते हुए व्यक्ति के भीतर के अंतर्द्वंद्व को गहराई से प्रस्तुत किया है। यह कृति न केवल हिंदी साहित्य में मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है, बल्कि यह नई पीढ़ी के लिए चेतना और स्वातंत्र्य की खोज का प्रतीक भी है।

निष्कर्ष :

शेखर: एक जीवनी अज्ञेय की साहित्यिक प्रतिभा का ऐसा उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें उन्होंने व्यक्ति के आंतरिक यथार्थ, भावनात्मक जटिलताओं और मानसिक द्वंद्वों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है। यह उपन्यास केवल एक आत्मकथा नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व, स्वतंत्रता और आत्मचेतना की खोज का दार्शनिक आख्यान है।

शेखर का चरित्र एक साधारण युवक का नहीं, बल्कि उस संवेदनशील आत्मा का प्रतीक है जो अपने जीवन के गहरे सवालों से टकराता है और समाज द्वारा आरोपित रूढ़ियों, नैतिकता और धार्मिकता को चुनौती देता है। उसका प्रेम, पीड़ा और विद्रोह - सभी मानवीय भावनाओं के गहन अनुभवों को दर्शाते हैं, जो पाठक के भीतर सहानुभूति और आत्ममंथन की प्रक्रिया को जन्म देते हैं।

अज्ञेय ने इस उपन्यास के माध्यम से हिंदी साहित्य को केवल एक मनोवैज्ञानिक गहराई ही नहीं दी, बल्कि 'संवेदनात्मक यथार्थवाद' जैसी साहित्यिक दृष्टि की भी आधारशिला रखी। प्रतीकों, बिंबों और आत्मसंवाद की शैली ने इसे एक कलात्मक कृति बना दिया है, जो न केवल अपने समय में प्रासंगिक थी, बल्कि आज भी पाठकों को मानवीय भावनाओं और अस्तित्व के प्रश्नों से जोड़ती है।

इस प्रकार *शेखर: एक जीवनी* हिंदी उपन्यास परंपरा में एक ऐसा मील का पत्थर है, जो साहित्य को मनोविज्ञान, दर्शन और सामाजिक आलोचना के संगम बिंदु तक ले जाता है। यह कृति नई पीढ़ी के लिए न केवल आत्मसाक्षात्कार की प्रेरणा है, बल्कि साहित्यिक अभिव्यक्ति की गहराइयों को भी उद्घाटित करती है।

संदर्भ:

1. अज्ञेय, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन. *शेखर: एक जीवनी (भाग 1 एवं 2).* लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,1941.
2. चतुर्वेदी, डॉ. रामस्वरूप. *ट्यूटोरियल हिंदी साहित्य.* प्रकाशन विभाग, दिल्ली,2005.
3. शर्मा, डॉ. केदारनाथ. *हिंदी उपन्यास: स्वरूप और विकास.*: ज्ञानमंडल लिमिटेड,, वाराणसी, 1983.
4. जोशी, इलाचंद्र. *हिंदी उपन्यास और मनोविश्लेषण.* साहित्य भवन, प्रयागराज,1971.
5. गणेशन, डॉ. पी. *अज्ञेय का उपन्यास साहित्य: एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन.*: किताब महल, दिल्ली, 1992.
6. तिवारी, डॉ. रामविलास. *अज्ञेय का साहित्य और दर्शन.*, नवीन प्रकाशन, लखनऊ,1990.

आरा नगर निगम में मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगो की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का भौगोलिक अध्यन

निरंजन कुमार भारती*

सारांश:-

भारत में प्रायः सभी छोटे-छोटे नगरों में मलिन बस्तियां पायी जाती है | बिहार के आरा शहर में कुल 12 मलिन बस्तियां हैं | मलिन बस्ती एक गन्दी बस्ती होती है जहाँ जन जमाव की गंभीर समस्या होती है | साथ ही यहाँ सड़क, बिजली पानी स्कूल इत्यादी का आभाव होता है मलिन बस्तियों के विकास में नगरों की बढ़ती जनसंख्या, आवासीय, मकानों की कमी ग्रामीण जनसँख्या का शहरों की ओर पलायन प्रमुख कारण है | आरा नगर में मलिन बस्तियों में रहने वालों लोगो की सामाजिक-आर्थिक दशा बहुत दयनीय है | यहाँ के अधिकार लोगो का जीवन यापन दैनिक मजदूरी द्वारा होता है | 2011 की जनगणना 2,61,430

मुख्य शब्द:- जनसंख्या, शिक्षा, स्वस्थ्य सामाजिक, आर्थिक विकास, आधारभूत सुविधा |

परिचय:-

ग्रामीण क्षेत्रों में बढती जनसंख्या को बेहतर जीवन नही मिल पाने के कारण लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं जिन्हें ऐसा लगता है कि शहर में उन्हें बेहतर रोजगार, अच्छी आय, स्वस्थ्य जीवन, अच्छी शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा मिल सकती है |

इसी आस में बड़ी संख्या में लोग शहरों की ओर आते हैं परन्तु ये सारी सुविधाएँ न मिल पाने की स्थिति में उन्हें झुग्गी-झोपड़ियों में रहना पड़ता है या शहरों में मकानों की अधिक किराया होने के कारण लोग अपने जीवन यापन झुग्गी-झोपड़ियों में करने पर मजबूर हो जाते हैं | आरा शहर में मलिन बस्ती का निर्माण भी इन्ही कारणों से हुआ है |इस मलिन बस्ती में निवास करने वाले लोगो की सामाजिक-आर्थिक दशा बहुत ही निम्न का स्तर का है | मलिन बस्ती में जल-जमाव की गंभीर समस्या है जिसके कारण यहाँ के लोगो में अनेक गंभीर बीमारियाँ होने की संभावना बनी रहती है | मलिन बस्ती में जन्मदर एवं शिशु मृत्यु दर दोनों ही उच्च होता है | शिशु मृत्यु दर अधिक होने का सबसे प्रमुख कारण चिकित्सीय सुविधाओं का आभाव होना है |मलिन बस्ती के लोग अपने आय की मोटी रकम शराब एवं एनी नशीले पदार्थों के सेवं में खर्च कर देते हैं | शराब के नशे में इन बस्तियों में रहने वाले लोग अपने परिवार के महिलाओं एवं अब्च्चों से साथ शारीरिक एवं मानसिक शोषण भी करते हैं | आरा शहर 25.55 41 º N- अक्षांश तथा 84.46 65 E देशांतर पर अवस्थित है

* पी० एच० डी०, बीर कुंवर सिंह वि० वि० आरा, मो०- 9431077546, ई-मेल- bhartiniranjankumar@gmail.com

विधितंत्र :- मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगो में लोगो की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति की जानकारी दो तरीकों से एकत्रित किया गया है प्राथमिक आंकड़े वहां रह रहे लोगो से अंतविक्षी द्वारा तथा द्वितीय आंकड़े शोध पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं दैनिक समाचार-पत्र से किये गये हैं |

उदेश्य:-

1. आरा नगर में मलिन बस्तियों के लोगो की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को जानना |
2. मलिन बस्तियों के लोगो की स्थिति को शोध पत्र के सहारे सरकार को परिचित कराना तथा सरकार को जानकारी देना |
3. इन बस्तियों में सड़क, बिजली, शौचालय, शुद्ध पेयजल, स्कूल इत्यादि को पहुँचाने के उपाय सुझाना |
4. जल-जमाव की गंभीर समस्या से निजत दिलाना |
5. मलिन बस्ती के निवासियों को सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करना |
6. मलिन बस्ती के लोगो को शिक्षित एवं जागरूक बनाना |
7. मलिन बस्ती के लोगो को समाज की मुख्य धारा से जोड़ना |

विश्लेषण:-

आरा शहर मलिन बस्तियों में अवस्थित ऐसे क्षेत्र होते हैं जिनमे निम्न स्तर की आवास व्यवस्था होती है | एक मलिन बस्ती सदैव एक ऐसे क्षेत्र होता है जहाँ निम्न आर्थिक स्तर, उच्च अपराध दर, जनसंख्या वृद्धि, गरीबी, आवास की कमी, स्वस्थ्य व्यवस्था दयनीय आदि देखने को मिलती है | आरा शहर के सभी सभी मलिन बस्तियों में ऐसा ही प्रवृति देखने को मिलती है | मलिन बस्ती शहर के सौन्दर्यीकरण पर एक धब्बा है | बरसात के समय में ऐसी मलिन बस्ती में रहने वाले लोगो की जिन्दगी बहुत ही कष्टकारक होता है | जल-जमाव के कारण वहां बदबुदार वातावरण माहौल का निर्माण हो जाता है | केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारें मिलकर मलिन बस्तियों में आधारभूत सुविधाओं (मकान, सड़क, बिजली, पानी इत्यादि) को पूरा करने का लगातार प्रयासरत रहा है | वर्तमान में स्मार्ट सिटी की अवधारणा में मलं बस्तियों में सुधार की संभावनाये व्यक्त किया जा रहा है जिसमें आरा शहर में मलिन बस्ती के आर्थिक, शैक्षणिक सामाजिक दशाओं को निम्न प्रकार देखा जा सकता है |

आर्थिक दशा:- आरा शहर के मलिन बस्ती के लोगो की आर्थिक दशा बहुत ही दयनीय है | इस बस्ती में 94.8 प्रतिशत लोगो के पास कच्चा मकान एवं झोपड़पट्टी है जबकि 5.2 प्रतिशत लोगो के पास अर्द्ध पक्का मकान है | इस बस्ती में पक्का मकान किसी के पास नही है | मकान में सिर्फ एक ही कमरा है जिसमे लोग रहते हैं और खाना भी बनाते हैं | किसी भी लोग के पास निजी चापाकल नही है | 8 % लोग नलजल योजना के तहत तथा 1.92 प्रतिशत लोग सार्वजनिक चापाकल से पेयजल ग्रहण करते हैं | इस बस्ती के 75.8 प्रतिशत लोग मजदूरी जबकि 25 % लोग छोटे-मोटे व्यवसाय करते हैं | इस बस्ती की आर्थिक दशा हम तालिका-I से स्पष्ट हो सकती है |

तालिका-I : आरा शहर के मलिन बस्ती में रहने वाले लोगो की आर्थिक दशा

मकान की दशा :	
कच्छा	94.8
अर्द्ध पक्का	5.2
पक्का	शून्य
मकान में कमरों की संख्या :	
सिर्फ एक	100
एक से अधिक	शून्य

मकान की व्यवस्था :	
नही	100
हाँ	शून्य
पेयजल की व्यवस्था :	
सार्वजनिक कुआँ	शून्य
सार्वजानिक चापाकल	92%
सार्वजानिक नलकूप	8%
आय का साधन :	
मजदूरी	75.8
व्यवसाय	58.4
नौकरी	शून्य
शौच की व्यवस्था :	
सार्वजनिक शौचालय	881
निजी	शून्य
खुले	18%
मनोरंजन का साधन	
रेडियो	2.1%
दूरदर्शन	18.1%
मोबाईल	70.8%
अन्य साधन	09.0%

स्रोत : क्षेत्रीय अध्धयन अक्तूबर - 2024

सामाजिक दशा :-

किसी भी समाज की सामाजिक दशा उस समाज की शिक्षा स्तर से पता चलता है | इस बस्ती के मात्र 3.2 प्रतिशत लोग की मैट्रिक पास है जबकि इन्टर एवं बि० ए० पास एक भी लोग नही हैं | बस्ती में आज भी 67.2 प्रतिशत लोग अनपढ़ है शिक्षा के विकास न होने के कारण मलिन बस्तियों में असामाजिक तत्वों के विकास में अहम भूमिका निभाता है | मलिन बस्ती में अंध विश्वास भी एक गंभीर समस्या है | अंध विश्वास का सबसे अधिक शिकार बस्ती की महिलायें होती हैं | मलिन बस्ती में शराब पीने वाले लोगो की संख्या अधिक है | शराब का सेवन पुरुषों के साथ महिलायें भी करती हैं जो एक सामाजिक बुराई है हालांकि बिहार सरकार ने शराब बंदी कानून को लागु किया है इसका परिणाम शराब सेवन करने वाले की संख्या में बहुत कमी नही आई है हालाँकि शराब सेवन करने वाले लोगो की संख्या में और वृद्धि हुई है | आरा शहर में मलिन बस्ती में सभी वर्गों (सामान्य जाति, पिछड़ी जाति एवं अनुसूचित जाति) के लोग एक साथ रहते हैं | मलिन बस्ती में जातीय भेद-भाव कम पाई जाती है | इसका सबसे महत्वपूर्ण कारण इस बस्ती के लोगो का जीवन स्तर एक जैसा ही है | आरा शहर के मलिन बस्ती की सामाजिक स्तिथि को तालिका 2 एवं 3 में दर्शाया गया है |

तालिका- 2

शिक्षा का स्तर

स्थिति	प्रतिशत
अनपढ़	67.2
तीसरा कक्षा पास	7.8
पाँचवी कक्षा पास	20.0
आठवीं पास	5.0
मैट्रिक पास	5.00
इंटर पास	शून्य

स्रोत: क्षेत्रीय अध्धयन- अक्तूबर- 2024

तालिका- 3

आरा शहर में मलिन बस्ती में रहने वाले की सामाजिक दशा

जाति	प्रतिशत
यादव	19.8
चन्द्रवंशी	3.1
मेस्तर	20.1
महतो	10.2
चमार	13.4
गोस्वामी	7.2
केवट	3.1
बिन	6.8
राजपूत	1.2
शर्मा	6.6
माली	4.5
साह	4.0

स्वस्थ्य संबंधी स्थिति:-

तालिका- 4 में मलिन बस्ती के लोगो की स्वस्थ्य सम्बन्धी स्थिति को दर्शायी गयी है |

तालिका- 4

बीमारी	प्रतिशत
बुखार	10.8
खाँसी	25.4
टी० वी०	5.1
मोतियाबिंद	6.1
कमजोरी	14.6
बीमारी रहित	38.

सुधार के उपाय:-

1. मलिन बस्तियों के लोगो को शिक्षित करना होगा तभी वे समाज की मुख्य धारा से जुड़ सकते हैं |
2. इन बस्तियों में अधस्तल /अवस्थापना निर्माण (सड़क, बिजली, अस्पताल, स्कूल का निर्माण)
3. शौचालय एवं शुद्ध पेयजल की व्यवस्था करना होगा ताकि बस्ती के लोग स्वस्थ्य रह सके | केंद्र सरकार न हर घर जल | स्वच्छ जल आपूर्ति का लक्ष्य 2024 निर्धारित किया | जिसे समय पर पूरा करना होगा |
4. सरकार द्वारा चलाये जाने वाले योजनाओं को सरलतापूर्वक पहुँचाने के लिए डिजिटल इंडिया जैसी कार्यक्रम को लागु किया गया है |
5. मलिन वस्तियों में जल-जमाव एक गंभीर समस्या है इस समस्या का हल निकालना होगा तथा जल निकास की व्यवस्था करनी होगी |
6. प्रधान मंत्री आवास योजना के तहत मलिन वस्तियों में पक्का घर का मुहैया कराया जा रहा है |
7. स्मार्ट सिटी कार्य को तत्पश्चात लागु करना होगा |

निष्कर्ष :-

मलिन बस्तियाँ भारत ही नहीं बल्कि विकासशील देशों के प्रायः सभी शहरों में फैली है। इन मलिन बस्तियों से कई प्रकार के असामाजिक तत्वों के विकास में सहायक होता है। शहर में मलिन बस्ती एक काला धब्बा के समान है क्योंकि मलिन बस्ती से शहर का वातावरण असंतुलित हो जाता है, जिसका मुख्य कारण मलिन बस्ती में जल जमाव एवं शिक्षा का निम्न स्तर होना है। मलिन बस्ती को शहर के मुख्यधारा से जोड़ने के लिए ऊपर दिये गये सुझावों को लागू करना होगा। आरा शहर के मलिन बस्तियों में आधारभूत सुविधाओं के विकास से ही शहर का पूर्ण विकास हो सकता है तथा एक स्वस्थ समाज का निर्माण संभव है।

संदर्भ :-

1. **अख्तर, मो० नजीर (2012), अर्यभट्ट शोध पत्रिका, आरा, पृ० 163-189**
2. **बंसल, डॉ० सुरेश चन्द्र (2011-12), नगरीय भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ० 711-713**
3. **सिंह, डॉ० आर०एन० तथा मौर्य, एस०डी० (2010), नगरीय भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ० 331-339**
4. **मौर्य, डॉ० एस०डी० (2005), अधिवास भूगोल, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ० 392-397**
5. **हुसैन, माजिद और सिंह, रमेश (2009). भारत का भूगोल, टाटा मैक्या हिल ऐड्यूकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली**
6. **खुल्लर, डी० आर० (2013), भारत का भूगोल, टाटा मैक्या हिल ऐड्यूकेशन प्राइवट लिमिटेड, नई दिल्ली**
7. **तिवारी, आर०सी० (1997), अधिवास भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद**
8. **सिंह, रामया (2005), अधिवास भूगोल, सयत पब्लिकेशस, जयपुर, पृ०-75**
9. **मानव भूगोल के मूल सिद्धान्त (जनवरी 2014), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, पृ० 96-99**
10. **हुसैन, इंतज़ार (1997) बस्ती राधाकृष्ण प्रकाशनः**
11. **अमर उजाला (25 मई 2017) मुरादाबाद, पृ० 7**

राष्ट्रीय आंदोलन के काल में चौकीदारी टैक्स एवं उसके दुष्प्रभाव

कुमारी गंगेश्वरी सिंह*

भारत का राष्ट्रीय आंदोलन का काल प्रारंभ से ही बड़ा दुरूह काल रहा है। जो कई आन्दोलनों के काल से चर्चित रहा है जिसमें भारत के युवा से लेकर वृद्ध तक सदैव साथ मिलकर कार्य करते रहे हैं। इनके राह में दुश्मनों ने कई बार कांटे बिछाए हैं, लेकिन अपनी सूझ–बूझ, संगठन एवं एकता के बल पर इन्होंने हर तरह से मुसीबत को पार कर सफलता की सीढ़ी प्राप्त की है। जो सदा स्मरणीय रहेगा। ऐसा ही एक समय था जब 1907 ई० मे चौकीदारी टैक्स भारत में उन गरीब किसानों पर लगाया गया जो पहले से हीं लगान से पीड़ित थे। इनके लिए एक नया कर असहनीय था। यह इसलिए इन पर लगाया गया था क्योंकि इस चौकीदारी टैक्स के एक व्यक्ति को गाँव की रखवाली के लिए रखा जाता था। जिससे तंग आकर किसानों ने 1930 ई० में आवाज उठाई। क्योंकि सेक्रेटरी ऑफ टैक्स के तहत लगाया गया कर इनके लिए बोझिल हो चला था।

इस टैक्स से केवल एक गाँव पीड़ित नहीं था बल्कि कई गाँव इसके शिकार थे। बिहार प्रान्तिय काँग्रेस कमिटी ने इस प्रकार जुलाई 1930 ई० के अन्त तक चौकीदारी टैक्स नहीं चुकाने का अभियान की प्रगति का पुनरीक्षण इन शब्दों में किया जा सकता है –"**चौकीदारी आन्दोलन प्रान्त में अभी शुरू ही हुआ है। चम्पारण इसमें सबसे आगे है उसके पाँच थाने सुगौली, गोविंदगंज, ढ़ाका, जोगापट्टी तथा मझोलिया इससे प्रभावित थे। सुपौली थाना सर्किल के 5 गाँवों में टैक्स चुकाना बंद कर दिया था। परिणाम में कई ग्रामवासियों की सम्पत्ति जब्त कर नीलाम कर दी गई थी। लेकिन नीलामी के समय डाक बोलने के लिए कोई नहीं आया।**" सुगौली गाँव के 12 गाँव भी चौकीदारी टैक्स देना बंद कर दिए थे। मझौलिया थाना के अमवा केन्द्र के एक गाँव में चौकीदारी टैक्स देना बंद कर दिया था। इसके एवज मे दो ग्रामवासियों को पीटा गया था। उसके साथ ही पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया था।

मुजफ्फरपुर जिला में आन्दोलन विददुपुर केन्द्र से प्रारम्भ हुआ। इसमें 7 गाँव प्रभावित थे, सारण जिला में सम्पूर्ण गुथनी थाना, गरछा थाना के 12 गाँव ने चौकीदारी टैक्स देना बंद कर दिया था। पटना जिला के विक्रम थाना के 8 गाँवों में आन्दोलन अपने जोरों पर था। उस समय वहाँ 16 गिरफ्तारियाँ की जा चुकी थी। इसके साथ ही चल सम्पत्ति जब्त कर वॉरेंट भी जारी कर दिया गया था।

भागलपुर जिला के कहलगाँव एवं सुल्तानगंज थानों की कुछ बस्तियाँ, मुंगेर जिला के तारापुर एवं खड़गपुर थानों एवं मानभूम जिला के पुरूलिया में चौकीदारी टैक्स देना बंद कर दिया गया था। सुल्तानगंज एवं पुरूलिया में इसके विरूद्ध गिरफ्तारी भी हुई थी। दरभंगा जिला में यह अभियान पूरी तैयारी पर थी। दो–तीन सप्ताह के अन्दर बहैड़ा, दलसिंहसराय, मोहददीनगर थाना इसमें आगे था।

25 जुलाई को मानभूम जिला काँग्रेस कमिटी के अध्यक्ष निवारणचन्द्र दासगुप्त कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ गिरफ्तार हुए। इन्हें 6 महीने की सजा दी गई। दासगुप्ता ने राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने आप को पूरी तरह समर्पित कर दिया। हजारीबाग जेल में राजेन्द्र बाबू उनके सम्पर्क में आए। हजारीबाग जेल उन दिनों राष्ट्रभक्त स्वतंत्रता सेनानियों से भरा पड़ा था।

गाँधी जी का मानना था कि चौकीदारी कर न भुगतान करने का आन्दोलन असफल हो जाएगा। इसको तभी प्रारंभ किया जा सकता है जब लोगों में इसके खिलाफ जोश भर दिया जाए। प्रान्त में चौकीदार की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण थी क्योंकि उस प्रान्त में पुलिस बल पर खर्च बहुत ज्यादा होता था। कर संग्रह के लिए जिम्मेदार चौकीदार पंचायत के सदस्य चौकीदारों को निजि पुलिस कर्मियों की तरह इस्तेमाल करते थे तथा साथ ही गरीब लोगों को बेहद परेशान करते थे। इस कर का भार मजदूर वर्ग पर सबसे ज्यादा था इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं था कि, चौकीदारी कर के विरूद्ध आन्दोलन को जनता का व्यापक समर्थन मिला। इसकी पुष्टि इस बात से भी हाती है कि, कर संग्रह करने वाले कर्मचारियों की सुरक्षा में तैनात पुलिस बल को जनता के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा था तथा कर भुगतान न करने वाले (डिफॉल्टरों) की

* शोध छात्रा, इतिहास विभाग, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग।

लंबी सूची से भी उसकी पुष्टि हो जाती है। जिसे बि.प्रा.कां.सं. ने तैयार किया था। इस सूची में उन लोगों के नाम थे जिसके खिलाफ न्यायालय में कुर्की जब्ती करने के आदेश जारी हुए थे।

जनवरी 1930 ई० में पूर्णिया में ठाकुरगंज के संथालों ने चौकीदारी कर के भुगतान से मना कर दिया था। ऐसा उन्होंने दिनाजपुर के कसिस्वर भट्टाचार्य के कहने पर किया था। दो महीने के भीतर दानापुर थाना के अन्तर्गत विक्रम में यह आन्दोलन पुरजोर शुरू हुआ। बारा में यह आन्दोलन नारायण लाल एवं सहजानंद सरस्वती के आदेशों से प्रारम्भ हुआ था। मई के महीने में हजारीबाग में यह आन्दोलन प्रारम्भ हुआ था। अप्रैल 1930 ई० में राजेन्द्र प्रसाद के हस्ताक्षर वाले एक पर्चे को वितरित किया गया। इसमें बारदोली सत्याग्रह का उल्लेख किया गया था। लोगों से आग्रह किया गया था कि वे चौकीदारी कर विरूद्ध अपने आप को संगठित करें। हर तीसरे साल इस मनमाने तरीके से बढ़ा दिया जाता था, जिसका दुष्प्रभाव यह हुआ कि मजदूर वर्ग को आर्थिक तंगी से गुजरना पड़ा था।

हजारीबाग के पास ईचाक बरही और ईटखोरी में रहने वाले सुकियार लोग इस आन्दोलन के प्रति अपनी सहानुभूति रखते थे। सुकियार लोगों ने 1930 ई० में चौकीदारी टैक्स देने से मना कर दिया था। सुकियारों का मुखिया भेकलाल था। कर भुगतान न करने के संदेश को प्रचारित करने के लिए पहले ही इचाक जा चुका था।

गिरिडीह थाना क्षेत्र के अन्तर्गत हालात ज्यादा खराब थे। बेरमों सीमा के संथालों ने भी कर देने से मना कर दिया था। जनेऊ धारण करने वाले एवं न धारण करने वाले दोनों ने इस आन्दोलन में हिस्सा लिया था। पुलिस की मदद लेकर कर न भुगतान करने वालों पर जुर्माना लगाया जाता था। सितम्बर माह में गाँधी जी के कार्यकर्त्ता संथालों के बीच घूम–घूमकर कर न देने के लिए कह रहे थे।

मानभूम में कर भुगतान न करने के मामले जनवरी में मनबजार में सामने आए। इसके पश्चात् देहातों में और खेरिमा लोगों के बीच उसका व्यापक प्रचार–प्रसार हुआ। क्योंकि मुख्य बकायादार उच्च वर्गीय आसामी हुआ करते थे। यह आन्दोलन की एक बड़ी उपलब्धि थी, खासकर तब जब बड़े पैमाने पर लोगों के उपर मुकदमें चलाए जा रहे थे। आपराधिक जातियों का रवैया बहुत हीं अड़ियल बना हुआ था। इसमें मुख्य रूप से खेरिया जाति के लोग अंग्रेजों के लिए बड़ी चुनौती बने हुए थे। एक बार किसी पुलिस उपनिरीक्षक ने खेरिया जाति के कुछ लोगों को गिरफ्तार करने की कोशिश की, तब एक बड़ी भीड़ ने उस पर कुल्हाड़ी से हमला बोल दिया वे अपना काम बड़े छिपे तौर पर करते थे। अतः उन पर अंकुश लगा पाना बहुत कठिन था। कई गिरफ्तार किए हुए लोगों को छुड़ाने की घटना भी जगजाहिर हो गई थी। उदाहरण के लिए मनबजार में चेपस की घटना। कर वसुली में आ रहे कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए पुलिस को कई बार गाँव में परेड करना पड़ता था। लेकिन पास में एक अत्यन्त ही उपद्रवी गाँव में गाँव वालों ने कर भुगतान करने से मना कर दिया। लेकिन अगस्त माह के समाप्त होते–होते आन्दोलन पूरी तरह समाप्त कर दिया गया था।

दूसरी ओर मानभूम हजारीबाग में आन्दोलन अपनी जोरों पर था। जुलाई में बि. प्रा. कां.सं. ने यह सूचना दी की आन्दोलन अपने चरम बिन्दू पर है। बिहार में इसके सफल होने की काफी उम्मीदें हैं। ऐसे हालत में ब्रज किशोर प्रसाद ने वल्लभ भाई पटेल को लिखा कि, "**हम चौकीदारी कर के विरूद्ध आन्दोलन करने जा रहे हैं, हमें इस आन्दोलन का कोई अनुभव नहीं है। मैं उम्मीद करता हूँ कि आप हमें सुझाव देकर हमारी मदद करेंगे।**" अगस्त में बि.प्रा.कां.स. ने यह उम्मीद जताई की धान की बोआई समाप्त होने के बाद इस आन्दोलन में तेजी आयेगी और तब इस आन्दोलन को ध्यान छोटानागपुर से हटकर उत्तरी बिहार, मुंगेर, भागलपुर की ओर चला गया।

आमतौर पर चौकीदारी कर भुगतान करने में लोगों की अरूचि की वजह थी जूट एवं तम्बाकू के कीमतों में कमी आई। चूँकि कर का निर्धारण करने वाले पंच लगभग सभी पैसे वाले थे इसलिए बदनामी से बचने के लिए उन्होंने अपने ही जेब से करों का भुगतार कर दिया। भागलपुर में भी ऐसे ही हुआ। बहुत किसान वर्ग ने मिलकर इस कर को न देने का फैसला कर लिया था। उन्होंने तहसीलदार को ही खदेड़ कर भगा दिया था, इसी तरह नौगछिया में भी किया गया था। पूर्णिया के टीकापट्टी के गाँव वालों ने 100 लोग लाठियाँ लेकर तहसीलदार को खदेड़ दिया था साथ ही उनके कागजात को भी गाँव वालों ने छीन लिए थे। भभुआ एवं बक्सर में कर वसुली करने के लिए अंग्रेज ऑफीसर को पुलिस की मदद लेनी पड़ी थी। गढ़पुरा एवं मधुपुरा में भी ऐसा ही हुआ था। जोगापट्टी में 15,000–20,000 लोगों ने लाठी, भाले, बन्दूक द्वारा तहसीलदार को भगा दिया था। इतनी बड़ी भीड़ 15 घंटे के अन्दर जमा हुई थी।

चंपारण जिले की दूसरी जगहों पर भी ऐसी ही घटनाएँ घटी। मोतिहारी थाना क्षेत्र गोढवा में जिला मजिस्ट्रेट पुलिस अधीक्षक, उपमंडल अधिकारी हथियारों से लैस 45 व्यक्तियों और गुरूजा मिलिट्री पुलिस के 15 जवानों ने मिलकर 106 मकानों में से 55 मकानों के घरेलू सामान की कुर्की की। गाँव वालों ने अपने मवेशियों को पहले ही हटा लिया था। बाद में कॉंग्रेस के स्वयंसेवकों ने नीलामी की जगह को घेर लिया। इसके साथ ही कुर्की का सामान खरीदने वालों बहुत परेशान किया। गोरहवा में कर वसूली का बकाया राशि 49 रू. 6 आना थी। लेकिन जायदाद की कुर्की 343 रूपये 11 आना की गई। कुछ 53 लोगों को जायदाद की कुर्की जब्ती की गई। जिसमें से 29 महतो, 12 साहू, 1 हजाम, 2 राउत और कुछ बनिए भी थे। क्योंकि स्टाफ सूची में 10 सेर हल्दी भी है। ज्यादातर मकानों से गिलास, लोटा या बकरी की जब्ती भी की गई है। मोतिहारी थाने के अन्तर्गत झखरा में कर की बकाया राशि से ज्यादा की कुर्की जब्ती की गई। इस कार्य के लिए पुलिस अधीक्षक, उपमंडल अधिकारी और गोरखा पुलिस के सिपाहियों को तैनात किया गया था। कुछ रूपये की कर बकाया राशि के बदले 646 रूपये 15 आना की कुर्की की गई थी। रामधनी चौधरी से 5 रूप्ये की वसुली की गई थी। जिसकी वजह से उनका 400 रूपये मूल्य का मकान एवं 7 रूप्ये मूल्य के कपड़े कुर्क कर लिए गए। मुजफ्फरपुर में दिहाल साहू से 1 रूप्ये 5 आना नगद वसूल किए गए। क्योंकि हाजीपुर में कर संग्रह चार यूनियनों की पुलिस ने मदद की थी। यहाँ चौकीदारी कर न भुगतान करने का सबसे महत्वूपूर्ण केन्द्र बिदुपुर था इस मुहिम के दौरान सारण जिले में सबसे ज्यादा उथल–पुथल मची थी। जून महीने में लुक–छिप कर प्रचार–प्रसार किया गया। गरखा थाना के अन्तर्गत 22 गाँवों ने कर देना बंद कर दिया। जेलों में जगह की कमी के कारण गिरफ्तारियाँ भी कम हो गई जिसकी वजह से पुलिस असमंजस में पड़ गया। पुलिस सुरक्षा हमेशा करगर साबित नहीं हो रही थी। अतः कर संग्रह करने वाले कर्मचारियों की निराशा बढ़ रही थी। केवल बुरेजा (मंजही थाना क्षेत्र में ही पुलिस सुरक्षा को पुख्ता बनाने में 10 दिन लग गए।) बुरेजा में कर भुगतान करने वाले ज्यादातर ऊँची जाति ब्राह्मण एवं राजपूत थे। अतः नीची जाति के लोग इसका अनुसरण करने लगे। बड़े पैमाने पर लोगों को गिरफ्तार किया गया। लगभग 100 लोगों को गिरफ्तार भी किया गया।

नवम्बर और जनवरी के बीच सारण की स्थिति बहुत ही विस्फोटक हो गई। दशौली थानान्तर्गत दोमरार में एक हफ्ते (27 नवम्बर से 2 दिसम्बर) की अवधि में कर वसूली में मदद कर रही सशस्त्र पुलिस पर दो बार हमले किए गए।

भोरे में 2,000 लोगों की भीड़ ने पुलिस उपनिरीक्षक और अन्य पुलिस कर्मियों पर लाठियों एवं ईंट पत्थरों से हमला किया गया। क्योंकि पुलिस वालों ने उन्हें मीटिंग करने नहीं दी थी। जब तक बंदूकों से लैस 400 लोग एकत्र हो गए थे। पुलिस ने 11 राउंड गोलीबारी की थी। पुलिस का यह दावा था कि पहले भीड़ ने तीन राउंड गोलीबारी की तब पुलिस ने गोलीबारी की थी।

देवरिया किसान सभा के सदस्यों में श्रीप्रकाश, हाजीपुर के स्वामी जगदीश्वराजंद और देवरिया उपमंडल के ग्रामीण थे। सच्चिदानंद बेगार एवं अबवाब के मामले उठा रह थे। फिर भी गोरखपुर का कोई जमींदार उनकी शिकायत नहीं कर सका। देवरिया किसान सभा ने एक पर्चा वितरित करवाया इस पर्चे में सच्चिदानंद की अध्यक्षता में 23 दिसम्बर को हुई सभा का उल्लेख किया गया था। इस सभा में गुठनी, मैरवां, दरौली, कतैया, भोरे थाना के 70–80 गाँवों के दलित गरीब किसानों एवं देवरिया के ग्रामीणों ने भाग लिया। इसके पहले सच्चिदानंद ने 7 दिसम्बर को जनता के मुद्दों पर भाषण दिया था।

1931 ई० में देवरिया किसान सभा सारण के किसानों के मुद्दों पर बहुत सक्रिय प्रतिक्रिया नजर आ रही थी। उन किसानों के मामले हस्तक्षेप करने का कोई उचित आधार भी नहीं था। क्योंकि प्रान्त के सभी कांग्रेसी नेता जेलों में बंद था। इसलिए बिहार सरकार द्वारा किसानों पर ढाए जा रहे जुल्म को रोकने के लिए सभा द्वारा कदम उठाना जरूरी हो गया था। भूस्वामियों के खिलाफ आन्दोलन की संभावना को भांपकर जिला प्रशासन ने सारण के किसानों के गोरखपुर से संबंध स्थापित को तोड़ने का पुरजोर प्रयास किया। हाँलाकि सारण के कलेक्टर को यह पता चल चुका था कि एक व्यक्तिगत मुलाकात के बाद अबवाब से संबंधित पेरशानियों को दूर करने, जायदाद की बिक्री पर लगे प्रतिबंध को हटाने, पेड़ों पर अधिकार आदि के मामले में सच्चिदानंद उचित संगदिली दिखा रहे हैं। अंततः कलेक्टर के इस सुझाव को सच्चिदानंद ने मान भी लिया कि वह चौकीदारी कर का भुगतान करने के लिए लोगों से आग्रह करेंगे। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह था कि भोरे एवं कटैया में तैनात अतिरिक्त पुलिस को वापस नहीं बुलाया गया था। गाँधी–ईरविन समझौता हो जाने के बाद भी वैसे तो सारण, बरेजा, गौरीकोठी, सिवान, मिर्जापुर, गुठली, दरौली, बसंतपुर एवं मेरवा में

चौकीदारी द्वारा नौकरी छोड़ देने की अनेकों घटनाएँ घटी। केवल सीवान में इस तरह का आन्दोलन अपने चरम पर था। भागलपुर के बिहपुर में जब सत्याग्रह अपनी ऊंचाइयों पर था 250 में से 170 चौकीदारों ने अपने युनिफार्म सरकार को सौंप दिए। चौकीदारों के बड़े पैमाने पर त्यागपत्र देने की ये घटनाएँ उनके घरों पर सफलतापूर्वक पिकेट लगाने का परिणाम थीं। पिकेट लगाने की घटनाएँ इतनी सफल रहीं कि चौकीदारों के परिवारों में महिलाओं को दीर्घ शंका से निपटने के लिए खेतों में जा पाना मुश्किल हो गया था। पिकेट कर्त्ता उनके पीछे–पीछे चल पड़ते थे। इसके अतिरिक्त चौकीदार के परिवार वालों के लिए हज्जाम एवं चमाइनों की सेवाएँ उपलब्ध होना बंद हो गया था। ज्यादातर चौकीदार जुलाई में ही वापस आ गए थे। बेगूसराय उपमंडल में रामदीरी की पूरी पंचायत और 14 में से 12 चौकीदारों ने त्यागपत्र दे दिया। चौकीदारों ने अपने यूनिफॉर्म को पंजीकृत पार्सल से वापस भेज दिया। आन्दोलन अपनी सफलता की ऊंचाईयों पर पहुँचा जहाँ पर प्रभावशाली जातियों के लोग बड़ी संख्या में कांग्रेस के आन्दोलन के साथ जुड़े रहे। नीची जाति के दुसाध चौकीदारों का आसानी से सामाजिक बहिष्कार किया जाता रहा था। दिधवारा(सारण) में दुसाधों ने एक मीटिंग में यह निर्णय किया कि वे अपनी जाति में बहिष्कृत लोगों के साथ देंगे। जिन लोगों ने चौकीदारों का सामाजिक बहिष्कार किया जाता है उनका वे लोग भी सामाजिक बहिष्कार करेंगे। लेकिन बदले में कोई खास सफलता नहीं हासिल हुई। वि.प्रां.कां.सं के उम्मीदों के खिलाफ पासवान, दास के त्यागपत्र का उसकी जाति के लोगों पर कोई खास असर नहीं पड़ा। जबकि यह पूर्णिया, भागलपुर, मुंगेर और पटना के दुसाधों का नेता था। मुजफ्फरपुर जिले में हाजीपुर के एक गाँव में गोला समुदाय के लोगों ने चौकीदारी कर देने से मना कर दिया था। क्योंकि चौकीदारों ने त्यागपत्र दे दिया था। दूसरी तरफ हाजीपुर उपमंडल में ही लांग गाँव के लोगों ने नौकरी छोड़ देने वाले चौकीदारों को चौकीदार नियुक्त किया और 4 महीने का वेतन पेशगी के रूप में दे दिया।

इस अभियान को आगे बढ़ाने के साथ–साथ प्रान्त के अनेक हिस्सों पंचायतों की स्थापना की गई। वि.प्रां.कां.सं. ने अक्टूबर में यह दावा किया कि मुगेर से धरहरा क्षेत्र में विवाद का एक भी मामला अप्रैल के बाद अदालत में नहीं आया। शाहाबाद में भी बड़े पैमाने पर अभियान चलाया गया था। वहाँ पर भी पंचायत की स्थापना हो गई लगभग इसी समय दरभंगा में भी कई मामले सुलझाये गए थे। सितम्बर से नवम्बर तक 50 गाँवों में पंचायत की स्थापना की गई। भागलपुर के सुपौल उपमंडल में निर्मली एवं पथरा गाँव में पंचायतों की स्थापना की गई। मधेपुरा में एक जज, एक कलेक्टर, एक इंस्पेक्टर और एक दारोगा की नियुक्ति की गई तथा प्रत्येक रविवार को अदालतें लगने लगी। इस प्रकार चौकीदारी टैक्स के बोझिल करों से लोगों को थोड़ी राहत मिली।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रीय आन्दोलन के समय लगाए गए चौकीदारी टैक्स जनता पर बोझ की तरह था, जिसे हटाने के लिए अनेक स्वंतत्रता सेनानियों ने आन्दोलन किए। और अन्ततः बोझिल चौकीदारी टैक्स में लोगों को राहत मिली।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. दत्ता के.के. "बिहार में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास" बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना, वॉल्युम–2, संस्करण 2014, पृ.सं०–111.
2. 'उपरोक्त' पृ.सं०–112.
3. डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, ऑटोबायोग्राफी, पृ.सं०–343.
4. घोष पापिया, "बिहार में सविनय अवज्ञा आन्दोलन, मानक पब्लिकेशन दिल्ली, संस्करण 2011, पृ.सं०–54.
5. बी.ऐंड ओ इन 1930–पटना 1932, पृ०सं०–21.
6. पीएस 293/1930 सत्याग्रह आन्दोलन के बारे में 71वीं रिपोर्ट 8 जुलाई 1930.
7. पीएस 23/1930 एफआर अगस्त (2).
8. 'उपरोक्त'
9. एआईसीसी पी–4/1939, बीपीसीसी रिपोर्ट डब्लयू 23 मार्च 1932.
10. एआईसीसी पी–4/1932 अ शार्ट नोट ऑन रिप्रेशन इन द कांग्रेस प्रॉविन्स ऑव बी ऐंड ओ।

कथाकार अशोकक कथासूत्र

रीमा कुमारी*

मैथिली साहित्यक आधुनिककालक प्रारम्भ–विन्दु रूप मे इतिहासकार लोकनि 1800 ई.क बादक काल कैँ रेखांकित कयने छथि। बेसी इतिहासकार 1860 ई. सँ एहि आधुनिककालक प्रारम्भ मानने छथि। एहि मान्यताक पाछाँ कार्यरत जे घटना सभ छल से सभ छल– 1857 ई.क सिपाही विद्रोह, अंग्रेजी शिक्षाक प्रचार–प्रसार, कलकत्ता–पटना सन स्थान पर विश्वविद्यालयक स्थापना, आर्यसमाजक स्थापना, जार्ज अब्राहम ग्रियर्सनक मधुबनी आगमन, थियोसोफिकल सोसाइटीक स्थापना, प्रार्थना समाजक स्थापना, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसक स्थापना, भीषण अकाल, औद्योगिक क्रांति आदि। एहि सभ घटना–परिघटनाक प्रभाव सगर देश पर पड़ल। मिथिला पर सेहो एहि घटनाक बेस प्रभाव पड़ल। एतहुक जनजीवन सेहो एहि बदलैत वैश्विक आ दैशिक स्थिति सँ प्रभावित होअय लागल जकर स्पष्ट चित्रा तत्कालीन साहित्य मे आबय लागल। कवीश्वर चन्दा झा, कविवर जीवन झा, भुवनेश्वर सिंह 'भुवन' लोकनि मैथिली साहित्यक एहि आधुनिक बोधी स्वर कैँ अकानलनि। तकरे परिणाम छल जे मैथिली साहित्य आधुनिक युगक सूत्रापात भेल।

आधुनिक मैथिली कथा : परम्परा आ विकास– आधुनिक काल मे मैथिली साहित्य बेस प्रगति कयलक। एहि कालखंड मे बदलैत वैश्विक जनजीवन कैँ संज्ञान लैत, आधुनिक भाव–बोधक संग मैथिलोक वरेण्य रचनाकार लोकनि मैथिलीक कथा, कविता, नाटक, आलोचना, उपन्यास प्रभृत्ति विद्या सभ कैँ समृद्धि प्राप्त करयबा मे अपन योगदान देबय लगलाह। मैथिली मे पहिल पत्रिका मैथिल हित साधन (1905, जयपुर) आयल। तकर बाद मिथिला मोद (1906, काशी), मिथिला महिर (1908, दरभंगा), श्री मैथिली (1925, लहेरियासराय) आदि पत्रिकाक आगमन सँ मैथिलीक गद्यक संगहि मैथिलीक कथा विधाक उल्लेखनीय विकास भेल। 'ताराक वैधव्य' (1917, जनार्दन झा जनसीदन) सँ आइ धरिक मैथिली कथा–साहित्य एक सय वर्ष सँ बेसीक यात्रा पूर्ण क' चुकल अछि। एहि शताधिक वर्ष मे मैथिलीक कथा–साहित्य संस्कृत कथाक अनुवाद आ पौराणिक विषय–वस्तुक कथा सँ प्रारम्भ होइत 1930 ई.क पश्चात् मौलिक विषय सभ पर मौलिक रूप सँ कथा–लेखन दिस अग्रसर भेल। एहि संदर्भ मे मैथिलीक आलोचक लोकनि द्वारा मैथिली कथा कैँ तीन कोटि मे राखल गेल अछि– 1. प्राचीनयुग (1930 ई. सँ पूर्वक कथा), 2. मध्ययुग (1930 ई.क समकालीन कथा) आ 3. आधुनिकयुग (1930 सँ 1937 ई.क कथा)[1]।

मैथिलीक आधुनिक युगक कथा कैँ 1937 ई. धरि राखि, बादक मैथिलीक कथा कैँ मैथिलीक अत्याधुनिक कथा कहि श्री जयधारी सिंह एहि कथा–धारा कैँ तीन वर्ग मे वर्गीकृत कयने छथि। पहिल– 1395 सँ 1950 धरिक कथा, दोसर– 1950 सँ 1960 धरिक कथा आ तेसर– 1960 सँ बादक कथा।[2]

एहि तीनू कोटिक कथाधारा मे मैथिलीक अनेकानेक कथाकारलोकनि अपन कथा–रचना सँ मैथिली साहित्य कैँ समृद्ध कयल। 1960 ई.क बादक जे मैथिलीक कथासभ अछि, जाहि मे सर्वश्री कुमार गंगानन्द सिंह, हरिमोहन झा, कांचीनाथ झा 'किरण', गोविन्द झा, मणिपद्म, ललित, उपेन्द्र नाथ झा व्यास, राजकमल, सोमदेव, जीवकांत, धूमकेतु, मनमोहन झा, राज मोहन झा, प्रभास कुमार चौधरी, उमानाथ झा, लिली रे, उषाकिरण खान, रामदेव झा, गंगेश गुंजन, साकेतानन्द, रमानन्द रेणु, मायानन्द मिश्र, डॉ. धीरेन्द्र, शेफालिका वर्मा, विभूति आनन्द, शिवशंकर श्रीनिवास, सुभाषचन्द्र यादव लोकनिक कथा अछि जे आधुनिक मैथिली कथा–साहित्यक संगहि भारतीय कथा–साहित्य कैँ सेहो ध्यान आकर्षित कयलक अछि। आलोच्य कथाकार–साहित्यकार अशोक एहिए कालखंडक मैथिली साहित्यकार छथि जनिक कथा, कविता आलोचना, व्यंग्य, संस्मरण आदि लेखन, हिनका द्वारा रचल मैथिली साहित्य, पूर्णतः आधुनिक भाव–बोध सँ भरल साहित्य अछि जे मैथिलीक आधुनिक साहित्यक प्रवृत्ति कैँ अपना तरहेँ रूपांकित करैत अछि, अपन विशिष्ट शिल्प–शैलीक संग चित्रित आ व्याख्यायित करैत अछि।

मैथिली कथा आ अशोक–आधुनिक मैथिलीक सशक्त आ महत्वपूर्ण साहित्यकार अशोक अपन साहित्यिक गतिविधिक प्रारम्भ बाल्यकालहि सँ कयल। हिनक पहिल कविता 'शशि चन्दाक समान' 1968 ई. मे 'बटुक' मे छपल छल। मुदा 1971 ई. मे पहिल बेर हिनक कथा 'मिथिला मिहिर' मे छपल। कथाक नाम छल

* शोधार्थी, विश्वविद्यालय मैथिली विभाग, शैक्षणिक परिसर, भू.ना.म.वि., मधेपुरा, मो0– 7903717464

'विराम सँ पहिने'। तकर बाद हिनक कथाक लेखन–क्रम निर्वाध रूप सँ बढ़ैत गेल। हिनक कथासभ पहिल बेर पुस्तकाकार भेल 'त्रिकोण' नाम सँ। 1986 ई. मे 'त्रिकोण' कथा–संग्रह प्रकाशित भेल। एहि कथा–संग्रह' मे मैथिलीक तीनटा कथाकार अशोक, शिवशंकर श्रीनिवास आ शैलेन्द्र आनन्दक कथासभ संकलित कयल गेल छल।[3] ई एक प्रकारेँ सझिया संकलन छल। स्वतंत्र रूप सँ अशोकक पहिल पोथी प्रकाशित भेलनि 1991 ई. मे 'ओहि रातिक भोर'[4] नाम सँ। तकर बाद मैथिलीक ई वरेण्य आ वैचारिक कथाकार कथाक लेखनक संगहि अन्यान्य विधाक साहित्य लेखन सेहो कयल।

अशोकक रचना–संसार–एखन धरिक हिनका द्वारा रचल गेल साहित्य मे कथा, कविता, व्यंग्य, सम्पादन आदि प्रधान अछि। हिनक चारिटा कथा–संग्रह छनि–त्रिकोण, ओहि रात्रिक भोर, मातबर आ डैडीगाम। दूटा कविता–संग्रह छनि–चक्रव्यूह आ चक्रव्यूह पसरैत। चारिटा आलोचना– मैथिल आँखि, कथाक उपन्यास उपन्यासक कथा, बात–विचार आ कथा–पाठ। यात्रा–कथा छनि– आँखि मे बसल। व्यंग्य–संग्रह–नीक दिनक बाइस्कोप, विनिबन्ध–राजमोहन झा, नाट्यरूपान्तरण– पृथ्वीपुत्र, सम्पादन–घर–बाहर (त्रौमासिक), संधान (अनियतकालीन पत्रिका), प्रतिमान, मैथिली आलोचना, संवाद आदि।

कथाकार अशोकक कथासूत्र– कथाकार अशोकक पूर्ण नाम छनि अशोक कुमार झा। हिनक पहिल कथा 'विरामसँ पहिने' अछि। 'बौका चुप छल' सँ हिनक रचनात्मक सक्रियता धुरझार तँ नहि, मुदा अबाधित अवश्य भ' जाइत अछि। ई सक्रियता साहित्यक विभिन्न विधा मे छनि। अशोकक कथा मे कोमल–भावक अभिव्यक्तिक प्रधानता अछि। ई कोमल–भाव थिक प्रेमक शरीरी आ अशरीरी स्थितिक अभिव्यक्ति। नारी कायाक आकर्षणक वर्णन एवं तदनुकूल परिवेशक निर्माण कोमल भावक शारीरिकताक परिचायक थिक। एहि हेतु कथाकार प्रत्यक्ष आ परोक्ष (स्वप्न), दुनू विधि कैँ अपनाओल अछि। परोक्ष रूप मे पत्नीक गुदगर देहक महमही, हास, विलास, चूड़ीक खनखन, एकान्त क्षणक उष्णताक स्मृति वर्तमान कैँ च×चल वना दैत अछि। 'बौका चुप छल', 'नचनियाँ', 'मिर्जा साहेब', 'सरिसबक साग', 'हेयर पीन', 'साक्षीविनायक' आदि कथा मे एहि स्थितिक थोड़–बहुत अभिव्यक्ति अछि। पर×च व्यक्त कोमल–भाव द्विपक्षीय नहि, एकपक्षीय अछि। जैविक विवशता नहि पुरुषक स्वेच्छाचारिता चरम पर अछि। भोरे–भोर उठौनाबालीक प्रतिरोध कैँ दू नमरी मे कीनि लेला पर चन्दर कैँ अपसोच होइत छनि जे पहिने किएक ने एकरा पर ध्यान गेल छल।[5] मुदा नैहर सँ अकस्मात् पहुँचि गेलि पत्नी जखन ओछान पर छुटल हेयरपीन देखि, आँखि तरेतैत छथि तँ चन्दर मोम सँ पाथर आ पाथर सँ मुरुत भ' जाइत छथि। कथानायकक एहि स्वेच्छाचारिताक दिस सँ पाठकक ध्यान कैँ बहटारबा लेल उठौनाबाली कैँ ई सोचैत देखाओल गेल अछि जे एहि दू नमरी सँ घरक चार छड़ा जायत।

अशोकक कथा 'जहिआ सुरुज नहि उगल', 'जहलमे टाँगल मोन', 'सरोकार', 'डरपोक', 'धरती गोल छै', आदि कथा मे कोमल भावक अशरीरी स्थितिक अभिव्यक्ति हृदय कोर कैँ छुबैत तन्तु कैँ झनझना दैत छैक। 'जहलमे टाँगल मोन' कथा मे जहल मे बन्द मिश्रक बहिनि मीनाक प्रति किशोरक मांसल आकर्षण, अशरीरी अर्थात् भावात्मक भ' जाइत अछि। 'जहिआ सुरुज नहि उगल' कथा मे पितृहीन आ माय द्वारा परित्यक्त जोगिया एवं कनिञा बौआसिनिक बीच नौकर आ मलकाइनिक सम्बन्ध नहि अछि, ममताक डोरक अछि। कनिञा बौआसिनिक ममता कैँ विलक्षण ढंगे कथाकार जोगिया सँ 'मा' कहि, सम्बोधन स्वीकार करबाक निहोरा द्वारा प्रकट कएल अछि। मास्कोक पार्क मे बोदका पीबि बेसुध भेल नवयुवकक प्रति अपरिचित बूढ़ीक मातृवत् कोमल संस्पर्श भाषा आ क्षेत्राक सीमा मे बन्हायल नहि अछि।

स्वाधीनताकालीन मैथिली कथा मे नारी एवं नारीक संघर्षशीलतामूलक कतेको कथा लिखायल अछि। नारी–स्वावलम्बनक प्रति कथाकारक सहानुभूति रहल अछि। स्थापित सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताक प्रतिकूल आचरण द्वारा नारीक विद्रोही मूर्ति गढ़बाक सफल प्रयास भेल अछि। मुदा अशोकक कथा मे नारी पुरुषक आश्रिता अछि, ओकरे दया पर गुजर करैत अछि। नारी एक वस्तु थिक जकर उपभोग कयल जा सकैत अछि, कीनल–बेसाहल जा सकैत अछि। 'बौका चुप छल' कथाक राधिका, 'नचनियाँ' कथाक रजनी शर्मा, 'हड्डी' कथाक ओकिल साहेबक पुतहु, 'जहिया सुरुज नहि उगल' कथाक कनिञा बौआसिनि आदि एहि कोटिक कथा थिक। रधिया एक ओहन वस्तु अछि जे पति (बौका) कैँ प्रसन्न रखैत अछि, गामक धनीक आ डाक्टरो कैँ प्रसन्न रखैत अछि। अप्रसन्न रहैत छैक केवल ओकर दिआदिनि। 'सरिसबक साग' कथाक प्रभा पति कैँ निधोख भ' कहैत अछि– "हँसि कए, बाजि गप्प कएलापर तरकारीबाला सस्ता दैत अछि, आ' नीक जकाँ तौलबो करैए।' ओकिल साहेबक पुतहु आ कनिञा बहुआसिनि तेहन वस्तु छथि जे ने बाजि सकैत छथि आ ने राधिया जकाँ बाहर सँ सेन्टे लगा क' आबि सकैत छथि, आ ने प्राण–रक्षाक लेल नैहर सँ मोटाक मोटा सँठबा

क' मंगबा सकैत छथि। ओकिल साहेब आ' कनिञा बौआसिनि कैँ जतय मृत्यु कैँ वरण करबाक अतिरिक्त आन कोनो उपाय नहि सुझैत छनि, रजनी शर्मा ('नचनियाँ') मे पतिक यातना सहैत–सहैत अन्ततः आत्मविश्वास आबि जाइत छैक। ओ एक सप्राण नारी भ' ओही होटलक बेराक संगे परा क' विवाह क' लैत अछि। भागल छल शेफाली ('मुक्ति'–ललित) सेहो दरबान चौबेजीक संग रोगाह पति बीसो बाबू कैँ छोड़ि। वाणी ('वाणीक मुक्ति'–ललित) सेहो भागलि छल। 'मुक्ति' अथवा 'वाणीक मुक्ति'क पति अपन पत्नी कैँ शारीरिक यातना नहि दैत अछि, विष अथवा नैनीतालक ऊँचका पहाड़ी पर ल' जा क' धकेलल जयबाक भय पत्नी कैँ नहि छैक तथा पत्नीक जैविक विवशताक तृप्ति मे शारीरिक रूप सँ अक्षम पति तटस्थ भए जाइत अछि। 'नचनियाँ' मे पतिक मनोदशा अव्यक्त अछि। रजनी शर्मा आ सोहन मण्डलक विवाहक सूचना पाबि पाठकक इहो जिज्ञासा शान्त भ' जाइत छैक, जे तकरा बाद की भेलैक।

पात्राक प्रति सहानुभूतिक लेल कतेको कथा मे हत्या–आत्महत्याक संयोजन भेल अछि। बौकाक मृत्यु सर्पदंश ('बौका चुप्प छल') सँ होइत अछि। ओकिल साहेबक पुतहु आत्महत्या करैत छथि ('हड्डी'), सुरेशक पत्नी आत्महत्या करैत अछि ('सरोकार') आदि साम्प्रदायिक दंगा मे समाजसेवी मिर्जा साहेबक हत्या होइत अछि। जेना दैनिक जीवन मे लोक गाड़ी मे कटि जाइत अछि, इनार–पोखरि मे डूबि जाइत अछि, पंखा मे लटकि फँसरी लगा लैत अछि, अथवा अपने हाथेँ अपन कनपट्टी मे गोली दागि लैत अछि। ई सब जीवन–संग्राम मे हारि जयबाक परिणाम थिकैक। ई संघर्षशीलता नहि, पलायनवादिता थिक। ओहिना जखन कोनो रचनाकार कैँ बाट नहि सुझैत छनि, तँ पात्राक हत्या भ' जाइत छैक, ओ आत्महत्या क' लैत अछि। शैल्पिक स्तर पर ई दुर्बलता भेल। किन्तु जखन सामाजिक उद्देश्य अथवा मूल्यरक्षार्थ हत्या होइत अछि, ओ एक व्यक्तिक हत्या नहि रहि, सामूहिक आक्रोशक कारण बनैत अछि। व्यवस्थाक विरोध मे जनसमुदाय आन्दोलित भ' उठैत अछि। ओहि सँ जागल सहानुभूतिक लहरि मे कतेको अकादारुण गाछ उखरि जाइत अछि। छाह मे कोकड़िआयल गाछ सभ लहलहा उठैत अछि। अशोकक कथा मे यद्यपि एहि तरहक परिवेश निर्मित नहि अछि, मुदा सामाजिक जीवन मे वर्चस्वक लेल लड़ैत–लड़बैत स्थानीय नेताक समस्तरीय आ प्रतिस्पर्द्धी आखेटक मिलान कोमल–भावक आश्रय मे होइत अछि। हीरा आ पुलकित एक दोसराक प्राणक आकांक्षी छल। किन्तु जखन झगड़लगौन लोकक चालि सँ अवगत भ' गेल, हीरा 'ओहि रातुक भोर' कथा मे पुलकित सँ कहैत अछि–"हम तौँ दू जातिक कहाँ छी? चाहक दोकानदार तँ एकहि जातिक भेलहुँ।" प्रात मे लोक देखैत अछि जे कतेको मासक बाद ओ दुनू अपन–अपन दोकान कैँ फेर सँ झाड़ि–पोछि रहल अछि।

कर्जक बेमाकीक हिसाब सँ कनछिआइत फूलबाबूक प्रति कुशेसरक चेतौनी मे उग्रता नहि, मृदुल शब्दक प्रयोग द्वारा हृदय परिवर्तनक प्रयासे अछि ('अन्तिम सह')। चेतौनीक लेल जतय अशोकक अधिकांश कथाकार भरिगर शब्द एवं लाठी–गोलीमय बाटक अनुसरण करैत छथि, ओतय ओ असन्तोष आ आक्रोशक अभिव्यक्तिक लेल संकेतक आश्रय लेल अछि। पत्नीक अन्तिम संस्कारक लेल जाइत छोटका मालिकक हाथक कोहा कैँ जोगिया ढेपा मारि दैत अछि। कोहाक फुटितहि आगि छिड़िया जाइत छैक। एहि छोट घटनाक संकेत द्वारा कनिञा बौआसिनि पर भेल अत्याचार आ हत्याक हेतु उत्तरदायी व्यक्तिक संकेत भेटि जाइत छैक।

अशोकक कथाक प्रसंग व्यक्त उपर्युक्त विचारक ई तात्पर्य नहि जे हुनक समस्त कथा प्रेमक शरीरी आ अशरीरी रूपक मोनि मे चकभाउर दैत अछि। एकर निहितार्थ ई नहि जे स्वाधीनताक दू दशकक बाद देश आ समाजक स्थिति मे आयल विसंति, मूल्य–ह्रास, बेकारी, स्वार्थलिप्साक प्रति अशोकक कथाकार संवेदनशील नहि अछि। ई कथा सभ अथवा चर्चित प्रवृत्तिक अशोकक कथा–यात्राा विभिन्न विन्दु सभ थिक। बीच–बीच मे कोमल–भावक फोड़न अथवा कोमल–भावक छौंक दैतो 'अन्तिम शह', 'हड्डी', 'ओहि रातुक भोर' 'एकटा चौक माने चण्डीनाथ', 'ओ मनुष्य भऽ गेल', 'तेसर प्रश्न' 'पीच', 'साक्षीविनायक', 'पिशाच' आदि कथा निश्चित रूप सँ भिन्न प्रकारक अछि। ई सभ फराक स्वाद दैत अछि।[6]

पुरना महल–अट्टालिका मे पोचारा क' देला पर किछु कालक लेल नव–निर्माणक सुखद अनुभवक भ्रम होअय लगैत छैक। मुदा जखन पानि–पाथर आ रौद–बसातक आघात सँ ओकर बाह्यरूपक चमकी उड़ि जाइत छैक, सम्पूर्ण कुरूपता व्यक्त भ' जाइत अछि। ई स्थिति द्विगुणित गति सँ विकर्षण उत्पन्न क' दैत अछि। वैह हाल स्वाधीनताक प्राप्तिक दू दशकक बाद देशक स्थिति कैँ भेल अछि। संविधान सँ लोक कैँ वर्तमान आ भविष्यक गारंटी भेटल। अधिकारक समानता, उपलब्ध संसाधनक समान वितरण आ उपभोग मे समानता, जान–मालक सुरक्षाक हेतु विधि–व्यवस्था मे दृष्टिक समानता, नियम–कानूनक कार्यान्वयन मे समानता आदिक सुरक्षाक हेतु संविधान सँ प्राप्त भेल। से सब क्रमशः समटाइत गेल। नेतालोकनिक भाषण सँ भेल आश्वासनक वर्षा फूही जकाँ बिला गेल। सामान्य जनताक प्रयोजनक हेतु उपलब्ध सुरक्षा–कवच नेता आ

हुनक सौरमण्डलक सदस्य द्वारा अपन तथा अपन जाति, वंश एवं कुलक पार्थक प्राण–रक्षाक लेल सभ सँ लाभकारी व्यवसाय, कोनो राजनीतिक दलक ध्वजवाहक बनि बिना खटनहि घाम सुखेबाक अभिनय करब भ' गेल। चण्डीनाथ ('एकटा चौक माने चण्डीनाथ') अपन कष्टपूर्ण आ संघर्षमय अतीत कँ बिसरि अपनहि वर्गक शोषक भ' जाइत अछि। व्यक्तित्वक ओजस्विता आ निर्भीकता चाटुकारिताक मे बदलि जाइत अछि। अपनत्व आ सहानुभूतिक स्वर फुसियाह आ' वंचनापूर्ण भए जाइत अछि ('ओ मनुख भ' गेल')। आपराधिक ओ सामाजिक चरित्राक लोक कँ प्रोत्साहन एवं सुरक्षा भेटैत अछि ('सरोकार')। सत्ताधारीक सह पर चतरैत शिक्षाक व्यवसायीकरण एवं नौकरी मे पैरवी आ पाइक प्रधानता कतेको उच्चशिक्षा प्राप्त नवयुवक कें घर–आंगन छोड़ि पड़यबा लेल विवश क' दैछ ('तेसर प्रश्न')। पितावर्गक सुरक्षा कवच स्वयं असुरक्षित भ' गेल। अबोधताक सीमा कँ पार करैत अपन भविष्यक प्रति आतंकित गुड़िया तितली जकाँ नोचाइत नवकनिञा कँ अपने आँखिए देखि, पिता सँ कहैत अछि–"पप्पा हमरा डर होइए, अहाँ कतय रही एतेक काल।" अशोकक कथा मे कार्यालय मे बॉसक आतंक, बाट मे चोर–उच्चकाक आतंक, महल्ला मे चोरी–डकैतीक आतंक, अनैतिक मार्गे अर्जन करैत पड़ोसीक तड़क–भड़कक आतंक कँ स्वर भेटल अछि।[7] एहिना जीवन–यापनक चिन्ता, सुरक्षित डेराक चिन्ता, बेटीक सुरक्षित भविष्यक चिन्ता, बेटाक अपहरणक चिन्ता सँ ओहन सामाजिक स्थितिक बोध अशोकक कथा करबैत अछि आतंक आ असुरक्षा सँ कम त्रासद नहि अछि। जीवन–धारणक लेल न्यूनतम आवश्यकताक पूर्ति मे अपना कँ अक्षम पबैत लोकक दाम्पत्य जीवन मे बढ़ैत कटुता आ मनोमालिन्य बढ़ल अछि। आत्मीयजनक भेट सँ प्राप्त आह्लाद साधनहीनताक आगि मे झरकि जाइत अछि ('खौंझ')। हिनक कथा मे सामाजिक आ पारिवारिक जीवन मे कँचकूह बासन जकाँ भसकैत लोकक मानसिकता कँ स्वर भेटल अछि।

अशोकक कथा कँ देखला पर एकटा तथ्य समक्ष अबैत अछि जे हुनक कथाकार नव कथाभूमिक जोत–कोर मे लागल अछि। किछु नव ताकि नव ढंग सँ कहबाक चेष्टा मे अछि। ओ नव दिशा थिक सामाजिक जीवन मे पसरैत विकृति आ' विसंगति पर प्रहार। व्यक्तिक द्विमुखी चरित्रा पर प्रहार, प्रदर्शनप्रियता पर प्रहार आदि। एहि सन्दर्भ मे 'पीच' आ 'साक्षीविनायक' कथा देखल जा सकैत अछि। 'भोज' अशोकक सम्पूर्ण कथा सँ भिन्न प्रजातिक कथा थिक। बाल मनोविज्ञानक सुन्दर निदर्शनाक संग कतेको स्थिति आ परिपाटी पर व्यंग्य अछि, तथा पहिने प्रकाशित कथाक अपेक्षा कथाक भाषा आ शिल्प मे स्पष्ट अछि।

संदर्भ–सूची–

1. मैथिली साहित्यक इतिहास, डॉ. दुर्गानाथ झा, 'श्रीश', भारती पुस्तक केन्द्र, दरंभगा, 1992
2. मैथिली कथा–संग्रह, सम्पादक–श्री जयधारी सिंह, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 1974
3. त्रिकोण (कथा–संग्रह), अशोक
4. ओहि रातुक भोर (कथा–संग्रह), अशोक
5. चित्तिर–बित्तिर (आलोचना), डॉ. रमानन्द झा 'रमण'
6. मातवर (कथा–संग्रह), अशोक
7. ओतहि

सुधा अरोड़ा की कहानियों में महानगरीय स्त्री जीवन त्रासदी

निशा*

कहानी हिंदी साहित्य की प्राचीनतम विधा है कहानी में मनुष्य जीवन की सूक्ष्मता होती है। हर युग में कहानी निर्माण का उद्देश्य अलग रहता है जैसी परिस्थितियां होती हैं कहानीकार वैसी ही कहानियां लिखता है । प्राचीन समय में कहानी का उद्देश्य मनोरंजन होता था। लेकिन वर्तमान समय में मनुष्य जीवन से संबंधित अनेक यथार्थ घटनाओं का चित्रण कहानी विधा में किया जाने लगा है।

"कहानी वास्तविक जीवन की एक ऐसी काल्पनिक कथा है जो छोटी होते हुए भी स्वतः पूर्ण एवं संगठित होती है"।

बीज शब्द : कहानी, स्त्री जीवन, महानगरीय जीवन, समाज, व्यवस्था, परिवार ।

प्रस्तावना:

भारतीय समाज में शुरू से ही नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कोई भी समाज पुरुष और स्त्री दोनों के बिना ही अधूरा है दोनों का होना ही समाज के लिए बहुत जरूरी है। एक स्त्री अपनी शक्ति के बल पर प्रगति के क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित करती रही है । स्त्री घर, परिवार, समाज को एक सूत्र में बांधने के लिए हमेशा ही त्याग करती रही है । नारी को इसलिए जगतजननी जगदंबा की उपमा भी दी जाती रही है।

हिंदी कथा साहित्य में चर्चित महिला लेखिका सुधा अरोड़ा ने अपनी कहानियों में "स्त्रियों की समस्या एवं संघर्ष को अपनी विषय वस्तु बनाया है।" इन्होंने अपनी कहानियों में अपने आसपास घटित होने वाली घटनाओं को बड़ी ही सरल भाषा में लिपिबद्ध किया है। उनकी कहानियों में ज्यादातर महिलाएं महानगरों में काम करने वाली घरेलू, मध्यम वर्गीय और नौकरी करने वाली। इन्होंने मध्यम वर्ग की स्त्रियों के जीवन में आने वाली समस्याओं का विवेचन किया है। उन पर पितृसत्ता का वर्चस्व किस प्रकार रहा है ? आधुनिक समय में स्त्रियां काफी हद तक शिक्षित और नौकरी करके आत्मनिर्भर है फिर भी पितृसत्तात्मक समाज से निकल नहीं पाई है और पितृसत्ता ने उसे आर्थिक रूप से सक्षम होने पर भी और ज्यादा जकड़ लिया है इसका मुख्य कारण यह है पुरुषों द्वारा स्त्रियों पर विश्वास नहीं होना ही तमाम प्रकार के लांछन महिलाओं के चरित्र पर लगाए जाते हैं।

शोध आलेख:

समाज में व्याप्त बुराइयों को सुधा अरोड़ा ने अपने लेखन कार्य में दिखाया है उन्होंने अपने लेखन में पितृसत्तात्मक समाज और स्त्रियों के जीवन में आने आने वाली हर प्रकार से बारीकी को दिखाया है।

वर्तमान समय में स्त्री अपने अस्तित्व,मूल्य, मान सम्मान परंपराओं से जूझती हुई दिखाई देती है। महानगरीय स्त्री के कामकाजी जीवन यथार्थ चित्रण सुधा अरोड़ा ने किया है ।

"क्षणिक आवेश में नौकरी छोड़ देने का निर्णय चित्रा ने दिवाकर को काफी जोश के साथ सुनाया था,लेकिन ममता का ज्वर उतर जाने पर वह दोनों की सम्मिलित आय में से अपने साढ़े चार सौ रुपए घटाकर किसी चमत्कारी मासिक बजट तक पहुंचने की कोशिश में सफल नहीं हो पाई थी। हर बार महानगर का अर्थशास्त्र उसे मात दे जाता था ।"[1]

* शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, पिन कोड 110007
मोबाइल नंबर 8368961969, Email: nishanagar8320@gmail.com

वर्तमान समय में बाजारवाद ने मनुष्य जीवन मशीन के समान जी रहा है जिससे उसको घुटन होने लगती है जानकीनामा, महानगर की मैथिली, और रहोगी तुम वही, अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी, यह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है, बोलो भ्रष्टाचार की जय, दहलीज पर संवाद जैसी कहानियां भाग दौड़ भरी जिंदगी को दिखा रही हैं। इसमें नारी जो वह घुटन महसूस कर रही है उसको स्पष्ट रूप से दिखाने का प्रयत्न करती है।

महंगाई एक बड़ी समस्या उभर कर हमारे सामने आई है जिसका प्रभाव स्त्री जीवन पर भी पड़ा आधुनिकता के कारण स्त्री के सामाजिक पारिवारिक जीवन में असंतुलन का निर्माण हुआ है। मनुष्य दिनों दिन प्रगति कर रहा है लेकिन स्त्री को अपना व्यक्तित्व अस्तित्व खतरे में नजर आने लगा है नारी का शारीरिक मानसिक शोषण तो होता ही आया है, लेकिन आज इस युग में अस्तित्व भी खत्म होने लगा है सुधा अरोड़ा ने नारी को अपने अस्तित्व के प्रति चेतना को जागृत करने का कार्य किया है।

"वहां का हर इंसान संतुष्टसुखी और अवकाश प्राप्त दिखाई देता था कि बंबई की भागदौड़ वाली मशीनी जिंदगी उसे कहीं भीतर से तोड़ती हुई महसूस होती थी ।"[2]

यहां पर सुधा अरोड़ा बताती हैं कि दूर से तो देखने में दुनिया सुकून वाली और शांति से जीवन जीने वाली लगती है परंतु अंदर से उसने मनुष्य जीवन को इंसानियत को खत्म कर दिया है ।

आज के युग में स्त्री अपने आपको घुटन से भरा हुआ महसूस कर रही है जिसे सुधा अरोड़ा ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है स्त्री समाज में अपनी दोहरी जिम्मेदारी निभाती रही है और अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष करती रही है ।

"जब खाना खाने में किसी को शर्म नहीं आती तो लाने में कैसी शर्म एक दो बार खुद खरीद कर लो तो पता भी चले की सब्जी भाजी के भाव कहां जा रहे हैं। अब खाली मेरी कमाई से तो घर में छत्तीस पकवान तो बनने से रहे। भगवान का शुक्र है कि दो वक्त की रोटी जुट जाती है, किसी के आगे हाथ पसारने नहीं पड़ते वरना तुमने तो उसके लिए भी कसर बाकी नहीं छोड़ी ।"[3]

एक स्त्री घर परिवार को चलाने से लेकर नौकरी तक का सफर किस प्रकार करती है उसको दिखाने का प्रयत्न किया गया है वह नौकरी के साथ-साथ परिवार छोटी-छोटी जरूरत को भी पूरा करने का मैं अपना सब लगा देती है। स्त्री पर परिवार की जिम्मेदारी निभाने के साथ-साथ अपने जीवन के प्रति भी कुछ जिम्मेदारियां होती है महानगरीय जीवन में संवेदनशीलता बढ़ती ही जा रही है परिवार के सदस्यों के दर एक दूसरे के प्रति लगाव कम होने लगा है आत्मीयता मान सम्मान मूल्य संस्कृति खत्म होने लगा है सुधा अरोड़ा ने अपनी युद्ध विराम कहानी के माध्यम से मनुष्य के अंदर की इंसानियत कैसे खत्म हो रही है उसका यथार्थ चित्रण किया है मां के मरने के बाद बेटे, बहु, लड़की, दामाद उनके लिए भी आधुनिक महानगरीय जीवन में समय की कमी को महसूस कर रहे हैं सिर्फ अर्थ को महत्व दिया जा रहा है।

"कल जीजी के साथ ही हम लोग भी वापस चले जाएंगे। वे समझ नहीं पाए थे कि क्या कहे। उन्होंने इतनी मौतें देखी थी,सब जगह तेरह दिन लोग बैठते थे, कीर्तन पाठ होता है, तेरहवें दिन ब्राह्मण भोज होता है और यह चार-पांच दिनों में तेरह दिन के क्रिया कर्म खत्म कर लेना।"[4]

युद्ध विराम कहानी में प्रतीत होता है कि मानव आज भाग दौड़ भरी जिंदगी में अपनों के लिए कुछ समय भी नहीं निकल पाता है उसे लगता है कि जल्दी-जल्दी सब पूरा हो और वह अपने कार्यस्थल की ओर बढ़े जिससे मानवीय संवेदनाएं बिल्कुल खत्म हो चुकी है। मानवीय संवेदनाओं का ख़त्म होना हमारे समाज के लिए बहुत ही खतरनाक है । सुधा अरोड़ा ने यहां बताने का प्रयत्न किया है कि तकनीकी ने मानवीय संबंधों की जग भी ले ली है।

आधुनिकरण के तमाम दावों के बीच स्त्री की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन नहीं है आज भी उसको अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है नौकरी व्यवसाय करने वाली स्त्री घर और बाहरी दोनों ही परिवेश पर पीस रही है। नौकरीपेशा स्त्री को नौकरी के साथ-साथ परिवार भी संभालना होता है इस पर प्रकार उसे पर दोहरी जिम्मेदारी आ जाती है।

"स्कूल में दिन भर उसका मन नहीं लगता और छुट्टी होने के इंतजार में खोई खोई सी बैठी रही। सारा दिन उसके जेहन में नन्हे नन्हे कुलकुलाते हाथ पैर और चमकती हुई आंखें घूमती रही रहती थी। जिनमें अभी मम्मी की पहचान भी नहीं उबरी थी पहले दिन ज्यों ही मैथ का दूध पीने का वक्त होता वह अपने भीगे हुए कपड़े पाती।"[5]

यहां पर दिखाया गया है कि आज स्त्री पढ़ लिखकर आर्थिक रूप से तो मजबूत हो रही लेकिन उसको अपने से इस आर्थिक रूप से सक्षम होने की बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। घर के साथ अपना कार्यस्थल भी देखना पड़ता है। स्त्री के जो कार्य है वह आज भी उसे ही करने पड़ते हैं उनको कोई और कर भी नहीं सकता है मातृत्व का पालन स्त्री के अलावा कोई कर ही नहीं सकता है जिसमें से उसको समय निकालकर उसको अपने कार्यक्षेत्र में भी मन लगाना है। उसको भी अपने परिवार की भांति संभालना है।

निष्कर्ष:

अंत में कहा जा सकता है कि सुधा अरोड़ा की कहानियों की विशेषता यह रही है कि इन्होंने स्त्री समस्या एवं संघर्ष को अपनी कहानियों की विषय वस्तु बनाया है इन्होंने अपनी कहानियों में आसपास घटित होने वाली घटनाओं को सरल भाषा में लिपिबद्ध किया है इनकी कहानियों में ज्यादातर महानगर में काम करने वाली घरेलू मध्य वर्ग एवं नौकरी करने वाली और मध्यम वर्ग की स्त्रियों की समस्याओं का चित्रण है। उन पर पितृसत्तात्मक समाज का वर्चस्व किस प्रकार है उसका उल्लेख किया गया है । आधुनिक समय में स्त्री किस तरह काफी हद तक शिक्षित और नौकरी करके आत्मनिर्भर है फिर भी पितृसत्तात्मक समाज, व्यवस्था से नहीं निकल पाई है और जकड़ भी ली गई है। इसका प्रमुख कारण यह है कि पुरुषों द्वारा स्त्रियों पर विश्वास के कारण ही तमाम प्रकार के लांछन स्त्रियों के चरित्र पर लगाए जाते हैं क्योंकि समाज में व्यापक बुराइयों को वह जानते हुए भारतीय स्त्री पुरुष वर्ग से शोषित होती रही है वर्तमान समय में भी समाज के दोहरे पन में पीस रही है समाज चाहे कितनी भी प्रगति क्यों न कर लें लेकिन स्त्री के प्रति सामाजिक मानसिकता में अभी भी बदलाव नजर नहीं आता है।

सुधा अरोड़ा की कहानियों में महानगरीय जीवन लाचार उपेक्षित तनाव ग्रस्त नजर आती है स्त्री का अस्तित्व खतरे में नजर आता है। सुधा अरोड़ा ने महानगरीय जीवन विडंबनाओ को अपनी कहानियों में चित्रित किया है। स्त्री ने स्वतंत्रता के बाद जिस स्वतंत्रता के सपने देखे थे उसके उन सपनों का मोह भंग होते हुए नजर आया है।

संदर्भ ग्रंथ :

1 अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी सुधा अरोड़ा पृष्ठ संख्या 21
2 सुधा अरोड़ा दस प्रतिनिधि कहानियां पृष्ठ संख्या 21
3 सुधा अरोड़ा 21 श्रेष्ठ कहानियां पृष्ठ संख्या 159
4 सुधा अरोड़ा 21 श्रेष्ठ कहानियां पृष्ठ संख्या 33
5 सुधा अरोड़ा 21 श्रेष्ठ कहानियां पृष्ठ संख्या 33

कठोपनिषद् में वर्णित आत्मतत्त्व का स्वरूप

अलका कुशवाहा*
डॉ. विनोद कुमार**

कठोपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद की 'कठ्' शाखा से सम्बन्धित एक उपनिषद् है। इस उपनिषद् में दो अध्याय है, और प्रत्येक अध्याय में तीन–तीन वल्लियाँ है। यह उपनिषद् अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व दार्शनिक है। इसमे यम– नचिकेता संवाद वर्णित है। यम– नचिकेता के संवाद के माध्यम से नैतिकता, नचिकेता अग्नि और उससे प्राप्त होने वाले फल तथा ब्रह्मविद्या का विवेचन सरल, और अत्यन्त सुबोध भाषा में किया गया है।

नचिकेता–यम संवाद में, नचिकेता यम से तीन वर माँगते हैं– पितृ–कोप शान्ति, अग्नि– विद्या, आत्मतत्त्व क्या है? जिसमें से दो वरदान तो यम नचिकेता को प्रदान कर देते हैं, किन्तु तीसरा वरदान जो आत्मतत्त्व के स्वरूप को जानने से सम्बन्धित था, उसको देने से पूर्व यम नचिकेता को अनेक प्रलोभन देकर उसकी परीक्षा लेते हैं कि क्या यह उस परम तत्त्व को जानने का अधिकारी है, या नहीं है। तत्पश्चात् जब यम पूर्णतः सुनिश्चित कर लेते हैं, कि यह नचिकेता इस परम ब्रह्म अथवा तत्त्व को जानने के लिए एक योग्य शिष्य है, तब उसको विस्तार से उस आत्म–तत्त्व के स्वरूप को वर्णित करते हैं।

नचिकेता इस तरह से आत्म–तत्त्व के स्वरूप के बारे में पूछता है–

''येयं प्रेते विचिकत्सा मनुष्येऽस्तीत्येके नायमस्तीति चैके।
एतद्विद्यामनुशिष्टस्त्वयाहं वराणामेष वरस्तृतीयः।।''

अर्थात् नचिकेता कहता है कि, मृत मनुष्य के विषय में कुछ तो कहते हैं कि ''वह रहता है'', जबकि कुछ कहते हैं कि ''वह नहीं रहता।'' आत्मा के विषय में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आत्मा कोई वस्तु, व्यक्ति अथवा गुण नहीं है, यह तो एक शक्ति है, जो मनुष्य की सभी इन्द्रियों, मन इत्यादि को प्रेरित करती है। जिस प्रकार अचेतन पदार्थ रथ का सञ्चालन कोई चेतन प्राणी ही कर सकता है, उसी प्रकार जड़ और अचेतन इन्द्रियों को प्रेरित करने वाली कोई अन्य शक्ति ही है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि जब मनुष्य की मृत्यु होती है, तब ये इन्द्रियाँ ज्यों की त्यों रहने पर भी अपना कार्य नहीं कर पातीं, क्योंकि इनकी प्रेरक शक्ति उस समय शरीर से निकल चुकी होती है। उसके निकल जाने पर कुछ भी शेष नहीं बचता। इसी बात को यमराज इस तरह से कह रहें हैं–

अस्य विस्रंसमानस्य शरीरस्थस्य देहिनः।
देहाद्विमुच्यमानस्य किमत्र परिशिष्यते।। एतद्वै तत्।।

अर्थात् शरीर में स्थित इस देही (आत्मा) के निकल जाने पर और उसके शरीर से अलग हो जाने पर इस शरीर में क्या ही शेष रह जाता है, अर्थात् कुछ भी नहीं। निश्चित रूप से यह वही ब्रह्म है।

गीता के द्वितीय अध्याय में भी आत्मा की अजरता और अमरता का विस्तार से वर्णन किया गया है–

''न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।''

अर्थात यह आत्मा अजन्मा, नित्य, सनातन एवं पुरातन है। शरीर के मारे जाने पर भी नहीं मारा जाता है।

यह परम आत्मतत्त्व इन्द्रियों के द्वारा दर्शनीय नहीं है। और न ही किसी तर्क के द्वारा इसकी सत्ता को प्रमाणित किया जा सकता है। यह आत्मतत्त्व रूप, रंग, नाम, काल इत्यादि से रहित है। 1. कठोपनिषद् में यह वर्णित है–

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत् ।

अर्थात यह आत्मतत्त्व शब्द, स्पर्श, रूप, रस, घ्राण का विषय नहीं है तथापि वह आत्मतत्त्व सब कुछ देखता है, सुनता है, जानता है, परन्तु स्वयं न देखा जाता है, न सुना जाता है, और न ही जाना जाता है। केनोपनिषद् में भी कहा गया है–

* शोधार्थिनी, संस्कृत, पालि, प्राकृत, प्राच्य भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
** शोध निर्देशक (एसो0 प्रोफेसर), संस्कृत, पालि, प्राकृत, प्राच्य भाषा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

"यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति।
यत् श्रोत्रेण न श्रृणोति येन श्रोतमिदं श्रुतम्।।"

कठोपनिषद् के द्वितीय अध्याय में आत्मा के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उस आत्मतत्त्व का चिन्तन करके मनुष्य दुःखी नहीं होता है, बल्कि मुक्त होकर कर्मबन्धन से छूट जाता है –

"पुरमेकादशद्वारमजस्यावक्रचेतसः।
अनुष्ठाय न शोचति विमुक्तश्च विमुच्यते।।"

अर्थात् यहाँ पर शरीर को एक नगर बताया गया है, जिस में ग्यारह द्वार हैं– दो आँख, दो कान, दो नासिका छिद्र, एक मुख, ब्रह्मरन्ध्र, नाभि, गुदा और शिश्न। इस शरीर में नित्यविज्ञानस्वरूप, सर्वव्यापी, सर्वनियन्ता, निर्विकार, नित्य कूटस्थ आत्मा का निवास है। जिस शरीर में सर्वशक्ति परमतत्त्व रहता है। किन्तु यह परमतत्त्व आत्मा शरीर में रहते हुए भी शरीर से सर्वथा पृथक है।

यद्यपि यह आत्मतत्त्व समस्त प्राणियों के शरीर में विद्यमान है, तथापि वह शरीर के सुख–दुःख से प्रभावित नहीं होता है। कठोपनिषद् में इसी बात को यमराज बताते हैं–

"सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुः न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा न लिप्यते लोकदुःखेन बाह्यः।।"

अर्थात जिस प्रकार समस्त लोक का चक्षु होकर भी सूर्य चक्षु सम्बन्धी बाह्य दोषों से लिप्त नहीं होता उसी प्रकार सभी प्राणियों के अन्दर विद्यमान एक ही आत्मा उनसे अलग होने के कारण बाह्य लोगों के दुःखों से लिप्त नहीं होता है। तात्पर्य यह है कि सब का अन्तरात्मा होते हुए भी वह आत्मतत्त्व उनसे पृथक है, और प्राणियों के सुख–दुःख से वह लेशमात्र भी क्षिप्त नही होता।

वह परब्रह्म अथवा आत्मतत्त्व ही अनित्य पदार्थों में नित्य रूप से स्थित होता है। मनुष्य का शरीर, मन, इन्द्रियाँ सब नश्वर है क्योकि मृत्यु होने पर वे सब नष्ट हो जाते है, परन्तु उस शरीर रूपी नगर में निवास करनेवाला आत्मतत्त्व अविनाशी है। वह सदा नित्य रूप से विद्यमान रहता है। कठोपनिषद् के द्वितीय अध्याय में ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन करते हुए उसका साक्षात्कार स्वयं अपने अन्दर करने का विधान किया गया है–

"नित्योऽनित्यानां चेतनश्चेतनाना मेको बहूनां यो विदधाति कामान्।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा स्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्।।"

यही बात गीता में भी कही गयी है–

"वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि अन्यानि संयाति नवानि देही ।।"

अर्थात् जिस प्रकार से मनुष्य पुराने वस्त्रों का त्याग करके नवीन वस्त्रों को मनुष्य धारण करता है, उसी प्रकार से यह आत्मा भी एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश करती है। इस तरह से यह आत्मतत्त्व नित्य व अमर है।

यह आत्मा सर्वज्ञ है। यही सबकी ज्ञाता है। बिना आत्मा के मनुष्य किसी भी प्रकार का ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक ज्ञान का ज्ञाता आत्मा ही है। परन्तु अपने अज्ञान के कारण हम देहादि संघात को ज्ञाता समझ लेते हैं। इस आत्मतत्त्व के कारण ही मनुष्य स्वप्नावस्था और जागृतावस्था दोनों अवस्थाओं में होने वाली समस्त घटनाओं का अनुभव करता है। यह आत्मतत्त्व महान है, क्योंकि उसकी प्रेरणा के बिना तो एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है। वही संसार के कोने–कोने में व्याप्त है। अतः सर्वव्यापक है। ईशोपनिषद् में भी कहा गया है–

'ईशावास्यमिदं जगत्सर्वम्।'

इस प्रकार से यह आत्मा सब प्रकार के ज्ञान का आश्रय है। आत्मा की सत्ता रहने तक ही इस प्राणादि की सत्ता रहती है। जैसे ही स्थूल अथवा पार्थिव शरीर से आत्मा निकल जाती है, तो प्राणादि की सत्ता भी विनष्ट हो जाती है। आत्मा ही अनादि अनन्त होने के कारण तीनों कालों नियन्ता है। वह नित्य है।

य एवाद्य स उ श्वः।

आत्मा को सब प्रकार के ज्ञान का आश्रय बतलाया गया है। जो भी व्यक्ति उसका ज्ञान प्राप्त कर लेता है, वह हर प्रकार के भय, घृणा, द्वेष, निन्दा इत्यादि से रहित हो जाता है। प्रस्तुत कठोपनिषद् के मन्त्र में यही बताया गया है–

"य इमं मध्वदं वेद आत्मानं जीवमन्तिकात् ।
ईशानं भूत भव्यस्य न ततो विजुगुप्सते। एतद्वै तत्।।"

यह वही अर्थात् जो फल के भोक्ता, प्राणादि को धारण करने वाला तथा भूत और भविष्य के स्वामी इस आत्मा को अपने समीप जान लेता है तब वह घृणा नहीं करता। निःसंदेह यह वहीं आत्मतत्त्व है। क्योंकि उसे यह समझ आ जाता है कि केवल पार्थिव शरीर नष्ट होता है, आत्मा तो अजर–अमर है। और दूसरा यह भी समझ आ जाता है कि इस जगत में किसी भी प्रकार का द्वैत नहीं है। जो आत्मतत्त्व स्वयं में है, वहीं सबमें है।

श्रीमद्भगवद् गीता में भी इसी तथ्य को इस प्रकार प्रकट किया गया है–

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।।"

आत्मा तो निर्लिप्त और अपरिच्छिन्न है, परन्तु अपने अज्ञान के कारण ही मनुष्य उसे कर्मफल भोक्ता समझ लेता है। जब मनुष्य का यह अज्ञान दूर हो जाता है, कि जीवात्मा सभी उपाधियों से रहित है तो वह शुद्ध चैतन्य व्यष्टि रूप में आत्मा कहलाता है, और वही समष्टि रूप में परमात्मा कहलाता है। इस प्रकार जीवात्मा, परमात्मा, आत्मा सब एक ही है।

इस प्रकार से कठोपनिषद् में आत्मा के स्वरूप का बहुत ही स्पष्ट और मार्मिक विवेचन योग्य गुरु यमराज और शिष्य नचिकेता के संवाद के माध्यम से किया गया है। यह आत्मज्ञान अत्यन्त गूढ़, गहन छुरे की धार के समान तीक्ष्ण है। जब मनुष्य को उस आत्मतत्त्व का ज्ञान हो जाता है तो वह सब प्रकार के सुख–दुःख से रहित हो जाता है, क्योकि उसकी द्वैतभावना नष्ट हो जाती है। आत्मतत्त्व की प्राप्ति ही ज्ञानप्राप्ति है।

संदर्भ ग्रथ सूची–

1. कठोपनिषद् 1.1.20, डॉ० आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन।
2. कठोपनिषद्– 2.2.4, डॉ० पुष्पा गुप्ता, चौखम्बा प्रकाशन।
3. श्रीमद्भगवद्गीता– 2.20, डॉ० आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन।
4. कठोपनिषद्– 1.3.15, डॉ० आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन।
5. केनोपनिषद्– 1.1.4, गीताप्रेस गोरखपुर।
6. कठोपनिषद् – 2.2.1, डॉ० पुष्पा गुप्ता, चौखम्बा प्रकाशन।
7. वही – 2.2.11।
8. वहीं– 2.2.13।
9. श्रीमद्भगवद्गीता – 2.22, डॉ० आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन।
10. ईशावास्योपनिषद् – मन्त्र संख्या–1, डॉ० उर्मिला श्रीवास्तव, अक्षयवट प्रकाशन।
11. कठोपनिषद्– 2.1.5, डॉ० पुष्पा गुप्ता, चौखम्बा प्रकाशन।
12. श्रीमद्भगवद्गीता– 2.56, डॉ० आद्याप्रसाद मिश्र, अक्षयवट प्रकाशन।

पुराणों में भारतवर्ष का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक चित्रण

डॉ. दीपक कुमार*

अनेक पुराणों के परिशीलन से विदित होता है कि शासन व्यवस्था सुचारू रूप से सञ्चालित करने के उद्देश्य से राजा प्रियव्रत ने सम्पूर्ण पृथ्वी को सात द्वीपों में विभक्त कर दिया।[1] इन द्वीपों के अभिधान क्रमशः जम्बूदीप[2], प्लक्षद्वीप[3], शाल्मल (शाल्मलि) द्वीप[8], कुशद्वीप[5], क्रौंचद्वीप[6], शाकद्वीप[7] एवं पुष्कर द्वीप[8] हैं। राजा प्रियव्रत ने इन सातों द्वीपों को सात अनुशासित राज्य के रुप में स्थापित करते हुए इन सातों का एक–एक राजा नियुक्त किया।[9] जम्बूदीप का राजा आग्नीध्र को बनाया।[10] प्लक्षद्वीप का राजा मेधातिथि को बनाया।[11] शाल्मलि द्वीप का राजा वपुष्मान् को बनाया।[12] कुशद्वीप के राजा ज्योतिष्मान् बने।[13] क्रौञ्च द्वीप का राजा द्युतिमान् को नियुक्त किया।[14] शाकद्वीप का राजा हव्य (भव्य) को बनाया।[15] पुष्कर द्वीप का राजा सवन को नियुक्त किया।[16] इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी सप्तद्वीपा वसुन्धरा कहलायी।

राजा प्रियव्रत द्वारा विनिर्मित उक्त सातों द्वीपों (विशाल राज्यों) में जम्बूद्वीप नामक द्वीप या राज्य सबसे प्रधान था।[17] इस जम्बूद्वीप को पुराणों में समस्त द्वीपों के मध्य में स्थित बताया गया है।[18] इसमें जामुन के वृक्षों की प्रचुरता होने के कारण इसका नाम जम्बूद्वीप पड़ा अथवा यहाँ एक तीव्र प्रवाह वाली जाम्बू नामक नदी प्रवाहित होती थी, जिसके कारण इसका नाम जम्बूदीप प्रचलित हो गया।[19] इस नदी को भी जाम्बूनदी इसलिए कहते थे, क्योंकि इसके जलमें जामुन के रस की अधिकता होने के कारण इसका जल जम्बूरस (जामुन के रस) के समान था।[20]

जम्बूदीप पर महाराज आग्नीध्र ने बहुत वर्षों तक शासन किया। कालान्तर में यह द्वीप भी नौ राज्यों में विभाजित हो गया,[21] जिनके नाम हिम वर्ष (भारतवर्ष)[22] किम्पुरुषवर्ष[23] हरिवर्ष (नैषध वर्ष)[24] इलावृतवर्ष[25] कुरुवर्ष[26] भद्राश्ववर्ष[27] केतुमालवर्ष (गन्धमादन वर्ष)[28] रम्यक वर्ष[29] तथा हिरण्यकवर्ष (हिरण्यमय वर्ष)[30] के रूप में लोक विख्यात हुए। इन सभी में हिमवर्ष (भारत वर्ष) सर्वश्रेष्ठ माना गया।[31] कालान्तर में यही भारतवर्ष के नाम से विख्यात हुआ।

हिमवर्ष (भारतवर्ष) – जब महाराज आग्नीध्र ने जम्बूदीप को नौ भागों (राज्यों) में विभक्त किया तो जो भूखण्ड हिमवान् पर्वत (हिमालय पर्वत) से संलग्न दक्षिण दिशा की ओर विस्तार वाला था, उसका नाम हिमवर्ष रखा और उसका राजा 'नाभि' को बनाया।[32] नाभि विधिविधान पूर्वक हिमवर्ष पर शासन करने लगे।

अजनाभवर्ष[33] (भारतवर्ष) – हिम वर्ष पर शासन करते हुए महाराज नाभि का समय व्यतीत होने लगा लेकिन अभी तक उनको कोई सन्तान नहीं हुयी, इसलिए उन्होंने अपनी भार्या मेरु देवी सहित पुत्र की कामना से एकाग्रता पूर्वक भगवान् यज्ञपुरुष का यजन किया।[34] परिणामतः उन्हें पुत्र की प्राप्ति हुयी और उसका नाम ऋषभ रखा गया।[35] ऋषभ अति तेजस्वी, बलशाली, शूरवीर पराक्रमी थे इस लिए उनके पिता नाभि अपनी इच्छानुसार श्रेष्ठ पुत्र पाकर अत्यन्त आनन्द मग्न हो गये।[36]

महाराज नाभि से उत्पन्न होने के कारण ऋषभ का एक नाम 'अजनाभ' भी पड़ गया और यही अधिक प्रचलन में रहा।

अजनाभ अपने पिता नाभि के बहुत प्रिय थे और हिमवर्ष की प्रजा भी अजनाभ से बहुत प्रेम करती थी। राजा नाभि ने अपने राज्य हिमवर्ष का नाम बदलकर अपने प्रिय पुत्र अजनाभ के नाम 'अजनाभ वर्ष' रख दिया और कालान्तर में 'अजनाभ' (ऋषभ) को उसका राजा बनाकर स्वयं तपस्यारत हो गये।[37] राजा ऋषभ न्यायोचित तरीके से अपनी प्रजा का पालन करने लगे।

भारत वर्ष – अजनाभ वर्ष के राजा ऋषभ के भी अनेक पुत्र हुए जिनमें भरत जी सबसे ज्येष्ठ और सबसे अधिक गुणवान् थे।[38] भरत जी के युवा होने पर महाराज ऋषभ ने उन्हीं को अजनाभ वर्ष का राजा नियुक्त कर दिया।[39] भरत जी को राजा बनाकर स्वयं तपस्या के लिए 'पुलह' ऋषि के आश्रम को प्रस्थान कर गये।[40] राजा भरत के नाम पर ही अजनाभवर्ष का नाम भारतवर्ष पड़ गया।[41]

कतिपय मनीषी भारत वर्ष के उक्त अभिधानों के अतिरिक्त अन्य दो दो नामों को भी भारतवर्ष पर आरोपित करते हैं– **ब्रह्मावर्त** और **आर्यावर्त**। यद्यपि ये दोनों नाम प्रचलन में भारतवर्ष के ही माने जाते हैं किन्तु

* एसो. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, म.गां. काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

ये दोनों अभिधान वस्तुतः भारतवर्ष के वाचक न होकर उसके अन्तर्गत आने वाले भू–खण्ड विशेष के वाचक हैं।

ब्रह्मावर्त नामक भू–खण्ड (प्रदेश) की पुराणों में अनेक स्थलों पर चर्चा है।[42] यह अभिधान भारतवर्ष का नहीं अपितु भारत वर्ष के अन्तर्गत आने वाला भूखण्ड विशेष (प्रदेश) का है। मनु स्मृति के अनुसार भारतवर्ष में प्रवाहित होने वाली सरस्वती और दृषद्वती नदियों के मध्य के भू–भाग को प्राचीन ग्रन्थों में **ब्रह्मावर्त** अभिधान से अभिहित किया गया है।[43] इस प्रदेश की सीमा का निर्धारण करने वाली नदी सरस्वती ब्रह्मावर्त प्रदेश में पूर्वाभिमुखी होकर प्रवाहित होती थी।[44] मत्स्य पुराण में इसे नर्मदा नदी के उत्तर तटवर्ती धारातीर्थ के पश्चात् का तीर्थक्षेत्र कहा गया है।[45]

नर्मदा और सरस्वती नदियों के तटवर्ती होने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रदेश वर्तमान के उत्तर प्रदेश और हरियाणा क्षेत्र के कुछ हिस्सों में विस्तारित रहा होगा। भारतवर्ष का मध्यदेश ब्रह्मावर्त प्रदेश की सीमा से बाहर था।[46]

आर्यावर्त भी भारतवर्ष का प्राचीन नाम नहीं है, अपितु भारतवर्ष की सीमा के अन्तर्गत आने वाला एक भू–खण्ड (राज्य) विशेष है।[47] पूर्वी समुद्र से लेकर पश्चिमी समुद्र पर्यन्त तथा हिमालय पर्वत और विन्ध्याचल पर्वत के मध्य वाले भू–भाग (प्रदेश) को प्राचीन काल में **आर्यावर्त** कहा जाता था।[48]

भारतवर्ष की भौगोलिक स्थिति का वर्णन करते हुए पुराणों में कहा गया है कि जो देश समुद्र के उत्तर तथा हिमालय के दक्षिण में स्थित है, वह देश भारतवर्ष कहलाता है।[49] इसका विस्तार नौ योजन है।[50] यह स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) तथा इन दोनों के अन्तर्वर्ती भोग को प्राप्त करने वालों की कर्मभूमि है।[51] इस महान् भारतवर्ष में सात विश्वविख्यात कुलपर्वत हैं, जिनके नाम हैं– महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र।[52] इनके अतिरिक्त अन्य भी अनेकों विशाल एवं चित्र–विचित्र शिखरों वाले पर्वत हैं, जिनमें कतिपय के नाम उल्लेखनीय हैं– मंगलप्रस्थ, मैनाक, त्रिकूट, ऋषभ, कूटक, कोल्लक, देवगिरि, ऋष्यमूक, श्रीशैल, वेंकट, वारिधार, द्रोण, चित्रकूट, गोवर्धन, रैवतक, ककुस, नील, गोकामुख, इन्द्रकील और कामगिरि आदि।[53] इसी प्रकार और भी अनेक पर्वत हैं।

इन पर्वतों से निकलने वाली नदियाँ एवं नद भी अनेक हैं, जो भारत वासियों के लिए जीवन दायिनी हैं।[54] इनमें पतितपावनी गंगा, सिन्धु, सरस्वती, शतद्रु (शतलज), चन्द्रभागा (चिनाब), यमुना, सरयू, इरावती (रावी), वितस्ता (झेलम), विपाशा (व्यास), देविका, कुहू, गोमती, धूतपापा (धोपाप), बाहुदा, दृषद्वती (घग्घर या राखी), कौशिकी (कोसी), निश्चीरा, गण्डकी, चक्षु, लोहित ये नदियों हिमालय की उपत्यका से निकलती हैं।[55] वेदस्मृति, वेत्रवती (वेतवा), वृत्रघ्नी, पर्णाशा, चन्दना, सदानीरा, मही, पारा, चर्मण्वती, यूपा, विदिशा, वेणुमती, शिप्रा, अवन्ती, तथा कुन्ती ये सभी नदियाँ पारियात्र पर्वत से उद्भूत हुई हैं।[56] शोण (सोन), महानदी, नर्मदा, सुरसा, क्रिया, दशार्णा, चित्रकूटा, तमसा, पिप्पली, श्येनी, करतोया, पिशाचिका, विमला, चञ्चला, वञ्जुला, वालुवाहिनी, शुक्तिमन्ती, शुनी, लज्जा, मुकुटा और हर्दिका – इन सभी नदियों का उद्गम स्थान ऋक्षवान् पर्वत की श्रेणियाँ हैं।[57] तापी, पयोष्णी (पूर्णानदी या पैन गंगा), निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, निषधा, वेण्या, वैतरणी, विश्वमाला कुमुद्वती, तोया, दुर्गा, अन्तःशिवा (अन्तः शिला) ये सभी पुण्य सलिला मङ्गलमयी नदियाँ विंध्याचल की उपत्यकाओं से उद्भूत होकर प्रवाहित होती हैं।[58]

गोदावरी, श्रीमरथी, कृष्णवेणी, तुंगभद्रा, सुप्रयोगा, वाह्या (वर्धानदी) कावेरी ये सभी दक्षिणापथ में प्रवाहित होने वाली नदियाँ 'सह्य' पर्वत माला की उत्पत्यकाओं से प्रकट हुयी हैं।[56]

कृतमाला (वैगईन नदी), ताम्रपर्णी, पुष्पजा (पेन्त्रार नदी), उत्पलावती मलय पर्वत माला से निकलती हैं।[60] ऋषिकुल्या, इक्षुला, त्रिदिवा, अचला, लाङ्गूलिनी इन नदियाँ को महेन्द्र पर्वत से उद्गिमित माना जाता है।[61] ऋषीका, सुकुमारी, मन्दगा, मन्दवाहिनी, कृपा और पलाशिनी इन नदियों का उद्गम स्थल शुक्तिमान् पर्वत पर है।[62]

उक्त सभी नदियाँ पुण्यतोया, पुण्यप्रदा साक्षात् या परम्परा से समुद्रगामिनी हैं। ये सभी के लिए माता सदृश हैं तथा इन सबको शुभप्रद एवं पापहारिणी माना गया है।[63] सभी भारत वासियों के लिए उक्त पर्वत एवं नदियाँ प्राकृतिक सम्पदा के रूप में हैं।

पुराणों के अनुसार लम्बे समय तक राजा भरत ने भारतवर्ष पर शासन किया। फिर राज्यभोग का प्रारब्ध क्षीण हुआ समझकर अपनी वंश परम्परागत सम्पत्ति को यथायोग्य पुत्रों में बांटकर राजमहल से निकल कर वे पुलहाश्रम चले गये। कालान्तर में भारतवर्ष भी नौ खण्डों (लघुराज्यों) में विभक्त हो गया।[64]

उन नौ भू–खण्डों (लघु राज्यों) के नाम इस प्रकार हैं– इन्द्रद्वीप, कशेरुमान (कसेरूखण्ड), ताम्रपर्ण, गभस्तिमान्, नाग द्वीप, सौम्य द्वीप, गान्धर्व द्वीप, वारुण द्वीप (वारुण खण्ड), भरत द्वीप (भरत खण्ड)।[65] ध्यातव्य है कि उक्त प्रदेशों (लघुराज्यों) में एक भरत खण्ड भी है। इसीलिए हेमाद्रि संकल्प में 'भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तरगते' का संकीर्तन किया जाता है।

इस प्रकार पुराणों में भारतवर्ष का विस्तृत भौगोलिक एवं ऐतिहासिक चित्रांकन दृष्टिगोचर होता है। यहाँ पर पौराणिक काल से ही भिन्न–भिन्न संस्कृति वाले लोग अपनी–अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं के अनुरूप राज्य सत्ता के द्वारा विधि–विधान पूर्वक बनाए गये नियमों का अनुपालन करते हुए, जीवनयापन करते हैं।

संदर्भ

1. सप्तभुवो दीपाः । श्रीमद्भागवत पु० 5/1/31,
   एते सप्त महाद्वीपाः । कूर्म पु० पूर्ववि० 43/3
   मार्कण्डेय पु. 50/11, वि० पु० 2/2/5, मत्स्य पु० 113/4–5
2. जम्बूद्वीपः समस्तानामेतेषां मध्य संस्थितः । वि.पु० 2/2/7
   जम्बूप्लक्षशाल्मलिकुशक्रौञ्चशाकपुष्करसंज्ञास्तेषाम् – श्रीमद्भागवत पु० 5/1/32,
   कूर्म पु0 पूर्व वि० 43/6, 38/26 एवं 20
3. श्रीमद्भागवत पु0 5/1/32, वि0पु० 2/2/5
   कूर्म पु0 पूर्व वि० 38/24–25, मार्कण्डेय पु० 51/6
4. वि०पु० 2/2/5, मार्कण्डेय पु० 51/6 कूर्म पु० पूर्व वि० 38/11
5. श्रीमद्भागवत पु० 5/1/32, कूर्म पु० पूर्व वि0 38/12, वि० पु० 2/2/5, मार्कण्डेय पु० 51/6, 50/24, मत्स्य पु० 122/78
6. कूर्म पु0 पूर्व वि० 38/12, श्रीमद्भागवत पु0 5/1/32,
   मार्कण्डेय पु0 51/6, 50/24, वि०पु० 2/2/5, मत्स्य पु० 122/84
7. मार्कण्डेय पु0 51/6, मत्स्य पु0 122/ 1 एवं 76, वि०पु० 2/2/5, कूर्म पु० पूर्व वि० 38/13
8. कूर्म पु० पूर्व वि0 38/13, मार्कण्डेय पु0 51/6, वि०पु० 2/2/5, मत्स्य पु० 123/39
9. प्रियव्रतोऽभ्यषिञ्चद् वै सप्तद्वीपेषु सप्त तान्। कूर्म पु० पूर्व वि0 38/10, वि०पु० 2/1/11, मार्कण्डेय पु0 50/15–18
10. वि० पु० 2/1/12
    जम्बूदीपेश्वरं पुत्रमाग्नीध्रमकरोन्नृपः । कूर्म पु० पूर्व वि० 38/10 मार्कण्डेय पु0 50/17
11. कूर्म पु० पूर्व वि० 38/11, वि०पु० 2/1/12, मार्कण्डेय पु0 50/17
12. कूर्म पु० पूर्व वि० 38/11, वि0पु0 2/1/13, मार्कण्डेय पु0 50/18
13. कूर्म पु० पूर्व वि० 38/12, वि0पु0 2/1/13, मार्कण्डेय पु0 50/18
14. कूर्म पु० पूर्व वि० 38/12, वि0पु0 2/1/14, मार्कण्डेय पु0 50/18
15. शाकदीपेश्वरं चापि हव्यं चक्रे प्रियव्रतः । कूर्म.पु. पूर्व वि. 38/13
    शाकद्वीपेश्वरं चापि भव्यं चक्रे प्रियव्रतः । वि.पु. 2/1/14 मार्कण्डेय पु0 50/18
16. कूर्म पु. पूर्व वि. 38/13, वि०पु० 2/1/14, मार्कण्डेय पु० 50/19
17. जम्बूदीपः प्रधानोऽयं प्लक्षः शाल्मल एव च ।
    कुशः क्रौञ्चश्च शाकश्च पुष्करश्चैव सप्तमः ।। कूर्म पु. पूर्व वि. 43/2
18. जम्बूदीपः समस्तानां द्वीपानां मध्यतः शुभः ।
    जम्बूदीपः समस्तानामेतेषांमध्य संस्थितः । वि०पु० 2/2/7
19. जम्बूद्वीपस्य सा जम्बूर्नामहेतुर्महामुने ।
    महागज प्रमाणानि जम्बवास्तस्या फलानि वै ।
    पतन्ति भूभृतः पृष्ठे शीर्यमाणानि सर्वतः ।।
    रसेन तेषां प्राख्याता तत्र जम्बूनदीति वै ।
    सरित्प्रवर्त्तते चापि पीयते तन्निवासिभिः ।। वि०पु० 2/2/20–21
20. कूर्म पु० पूर्व वि० 43/17–18, वि0पु0 2/2/20–21, मार्कण्डेय पु0 50/28–29
21. श्रीमद् भागवत पु0 5/2/19–21
22. वि0 पु० 2/1/27 एवं 32, कूर्म पु० पूर्व वि0 44/35, 43/11, वि० पु० 2/2/13, वि0पु० 2/1/18
23. कूर्म पु0 पूर्व वि0 43/11, वि० पु० 2/2/13

24. वि० पु० 2/2/13, 2/1/19, मत्स्य पु० 113/29
श्रीमद् भागवत पु. 5/18/7, कूर्म पु0 पूर्व वि० 38/30,
वि० पु० 2/1/19
25. वि0पु0 2/1/20, मत्स्य पु० 113/30, वि०पु० 2/2/15–16, कूर्म पु0 पूर्व वि० 43/13–14, मार्कण्डेय पु0 51/13–14
26. मत्स्य पु० 113/31, वि० पु० 2/1/22
27. कूर्म पु० पूर्व वि0, 44/35, मत्स्य पु० 113/44,
वि0पु0 2/1/22, श्रीमद्भागवत पु० 5/18/1, मार्कण्डेय पु0 51/14
28. मत्स्य पु० 113/44, कूर्म पु० पूर्व वि० 44/35, श्रीमद्भागवत पु0 5/18/15, वि० पु० 2/1/23 मार्कण्डेय पु0 51/14
29. श्रीमद्भागवत पु0 5/18/24, वि0पु0 2/2/14
30. मत्स्य पु० 113/31, कूर्म पु0 पूर्व वि0 43/12
श्रीमद्भागवत पु0 5/18/29
31. अत्रापि भारतं श्रेष्ठ जम्बूद्वीपे महामुने ।
यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमयः ।। वि०पु० 2/3/22
32. कूर्म पु0 पूर्व वि0 38/29
जम्बूद्वीपविभागांश्च तेषां विप्र निशामय ।
पित्रा दत्तं हिमाह्वं तु वर्षं नाभेस्तु दक्षिणम् ।। वि0पु0 2/1/18
हिमाह्वयं तु वै वर्षं नाभेरासीन्महात्मनः । वि.पु. 2/1/27
श्रीमद् भागवत पु० 5/2/19–21
33. श्रीमद्भागवत पु० 5/4/3
34. नाभिरपत्यकामोऽप्रजया मेरुदेव्या भगवन्तं यज्ञपुरुषमवहितात्मायजत । श्रीमद्भागवत पु० 5/3/1
35. तस्य ह वा इत्थं ...ऋषभ इतीदं नाम चकार । श्रीमद्भागवत 5/4/2
तस्य ऋषभोऽभवत् पुत्रो मेरुदेव्यां महाद्युतिः । वि० पु० 2/1/27
कूर्म पु० पूर्व वि. 38/34
36. श्रीमद्भागवत पु० 5/4/2–4
37. स्ववर्षमजनाभं नामाभ्यवर्षत् । श्रीमद्भागवत पु0 5/4/3
श्रीमद् भागवत पु. 5/4/5
38. येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीद्येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति । श्रीमद्भागवत पु० 5/4/9
ऋषभाद्भरतो जज्ञे ज्येष्ठः पुत्रशतस्य च । वि०पु० 2/1/28
39. ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्र शताग्रजः ।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं भरतं पृथिवीपतिः । कूर्म पु0 पूर्व वि0 38/35
श्रीमद्भागवत पु. 5/5/28, वि0पु0 2/1/29
40. अभिषिच्य सुतं वीरं भरतं पृथिवीपतिः ।
तपसे स महाभागः पुलहस्याश्रमं ययौ ।। वि0पु0 2/1/29
श्रीमद् भागवत पु० 5/7/1
41. अजनाभं नामैतद्वर्षं भारतमिति यत आरभ्य व्यपदिशन्ति । श्रीमद्भागवत पु० 5/7/3
ततश्च भारतं वर्षमेतल्लोकेषु गीयते । भरताय यतः पित्रा दत्तं प्रतिष्ठता वनम् ।। वि0पु0 2/1/32
श्रीमद् भागवत पु० 5/4/9
42. श्रीमद् भागवत पु० 1/10/34, 5/4/19, 5/5/28, 1/10/33, मत्स्य पु0 22/69, 190/7–8
43. सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ।। मनु0स्मृ० 2/17
44. ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती । श्रीमद्भागवत पु0 4/19/1
45. नर्मदोत्तरतीरे तु धारातीर्थं तु विश्रुतम् । .....
ततो गच्छेत् तु राजेन्द्र ब्रह्मावर्तमितिस्मृतम् ।। मत्स्य पु0 190/6–7
तत्र सन्निहितो ब्रह्मा नित्यमेव युधिष्ठिर। मत्स्य पु0 190/8
46. मनुस्मृ० 2/21
47. श्रीमद् भागवत पु० 9/6/5, 9/16/22
48. आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ।। मनुस्मृ० 2/22

49. उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम् ।
वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ।। वि०पु० 2/3/1
50. नवयोजनसाहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने ।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गं च गच्छताम् ।। वि० पु० 2/3/2
51. मत्स्य पु० 114/6–7, वि०पु० 2/3/2, 2/3/5
52. महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः ।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तात्र कुलपर्वताः ।। वि० पु० 2/3/3
सप्तचास्मिन् महावर्षे विश्रुताः कुलपर्वताः।
महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षवानपि ।।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च इत्येते कुलपर्वताः ।। मत्स्य पु० 114/17–18
53. श्रीमद् भागवत पु. 5/19/16, मत्स्यपु० 114/18
54. श्रीमद्भागवत पु० 5/19/16–18
55. मत्स्य पु0 114/20–22, वि० पु० 2/3/10, मार्कण्डेय पु0 50/16–18
56. मत्स्य पु० 114/23–24, मार्कण्डेय पु0 54/19–20
57. मत्स्य पु0 114/25–26, मार्कण्डेय पु० 54/22–23
58. मार्कण्डेय पु० 54/25–26, मत्स्य पु० 114/ 27–28
59. मत्स्य पु० 114/29, वि०पु० 2/3/12
60. मत्स्य पु० 114/30, वि०पु० 2/3/13
61. मत्स्य पु० 114/31, मार्कण्डेय पु0 54/29
62. मत्स्य पु० 114/32, वि०पु० 2/3/14, मार्कण्डेय पु० 54/29–30
63. मत्स्य पु० 114/33, मार्कण्डेय पु० 54/31
64. भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्निशामय । वि०पु० 2/3/6
मत्स्य पु० 114/7
65. इन्द्रद्वीपः कसेरुश्च ताम्रपर्णो गभस्तिमान् ।।
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारुणः ।
अयं तु नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंवृतः ।। वि0पु0 2/3/6–7
मत्स्य पु० 114/7–9

शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता : मगध प्रमंडल के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. ज्योत्सना प्रसाद*

सारांश –

यह अध्ययन पत्र मगध प्रमंडल (बिहार) के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता का विश्लेषण करता है। इस अध्ययन में पुरुष और महिला शिक्षकों के सामाजिक दायित्वों और सामुदायिक भागीदारी की तुलना की गई है। अध्ययन का मूल उद्देश्य 90 शिक्षकों (45 पुरुष और 45 महिला) जो कि अरवल, जहानाबाद और गया, जिला के 9 माध्यमिक विद्यालय से प्राप्त करना रहा। आंकड़ों के अनुसार पुरुष शिक्षकों का औसत स्कोर 23.34 जबकि महिला शिक्षकों का 22.51 है। स्वतंत्र नमूना टी–टेस्ट के परिणाम बताते हैं कि दोनों समूहों के बीच कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। परिणाम यह दर्शाता है कि क्षेत्र के पुरुष और महिला दोनों शिक्षक समान रूप से सामाजिक और सामुदायिक भूमिकाओं में सक्रिय हैं। अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि शिक्षक केवल शिक्षा देने वाले नहीं, बल्कि समाज के नैतिक संरक्षक और सामाजिक परिवर्तन के वाहक भी होते हैं। इस अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि शिक्षक प्रशिक्षण में सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए ताकि शिक्षा प्रणाली और समुदाय के बीच बेहतर संबंध स्थापित हो सकें।

विशिष्ट शब्द– शिक्षकों की सामाजिक भूमिका, सामुदायिक सहभागिता, लिंग तुलना, मगध प्रमंडल, शिक्षक प्रशिक्षण, शैक्षिक विकास, एवं बिहार शिक्षा।

प्रस्तावना– सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक भूमिका– शिक्षक केवल ज्ञान के प्रचारक नहीं, बल्कि सामाजिक संरक्षक और मार्गदर्शक भी हैं। अभिभावकों और समुदाय के साथ शिक्षक संवाद शिक्षा के स्तर को बेहतर बनाता है। महिला शिक्षक परिवार और समुदाय में अपनी भूमिका को संवेदनशीलता और समझदारी से निभाती हैं, जबकि पुरुष शिक्षक नेतृत्व और आयोजन में सक्रिय होते हैं। स्थानीय शिक्षक समुदाय के प्रति अधिक जुड़ाव महसूस करते हैं।

शिक्षक समाज के महत्वपूर्ण स्तंभ होते हैं, जिनकी भूमिका केवल कक्षा तक सीमित नहीं होती, बल्कि वे सामाजिक सुधारक, मार्गदर्शक और समुदाय के सक्रिय सदस्य भी होते हैं। मगध प्रमंडल, जो बिहार के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र में स्थित है, यहाँ के शिक्षक समाज के साथ गहरे जुड़े हुए हैं। इस शोध में शिक्षक की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता को मगध प्रमंडल के संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है।

शिक्षक सामाजिक परिवर्तन के वाहक भी होते हैं। वे बच्चों के शिक्षा के माध्यम से केवल अकादमिक ज्ञान ही नहीं देते, बल्कि समाज के नैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों के संवाहक भी होते हैं। शिक्षक का सामाजिक दायित्व व्यापक होता है, जिसमें वे विद्यालय के बाहर भी सामुदायिक जीवन में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं। शिक्षा और समाज का यह आपसी संबंध शिक्षक को समाज के एक अनिवार्य अंग के रूप में स्थापित करता है।

मगध प्रमंडल, बिहार का एक प्राचीन और सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र है, जहाँ सामाजिक और शैक्षिक दोनों ही क्षेत्रों में अनेक परिवर्तन होते रहे हैं। यहाँ के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता पर अब तक सीमित शोध हुआ है। इस क्षेत्र के शिक्षक न केवल विद्यालय में शिक्षण कार्य करते हैं, बल्कि वे सामाजिक जागरूकता बढ़ाने, सामाजिक सुधारों को प्रोत्साहित करने, तथा सामुदायिक कल्याण में भी सक्रिय रहते हैं। ऐसे में मगध प्रमंडल के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका को समझना और उनकी सामुदायिक सहभागिता का मूल्यांकन करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

शिक्षकों की सामाजिक भूमिका का अर्थ केवल विद्यालय के दीवारों तक सीमित नहीं है। वे समाज के विभिन्न स्तरों पर नैतिक शिक्षा, सामाजिक उत्तरदायित्व, और सामाजिक एकता के प्रचारक होते हैं। समाज में

* पी–एच0 डी0, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

शिक्षक का यह स्थान विशेष महत्व रखता है क्योंकि वे समाज की अगली पीढ़ी को सामाजिक और नैतिक मूल्यों से लैस करते हैं। इसके अलावा, शिक्षक सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से शिक्षा प्रणाली और समाज के बीच एक सेतु का कार्य भी करते हैं। जब शिक्षक और समुदाय मिलकर शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं, तो विद्यालय का माहौल बेहतर होता है और बच्चों के समग्र विकास को बढ़ावा मिलता है।

शिक्षकों की सामुदायिक सहभागिता के महत्व को समझते हुए अनेक अनुसंधानकर्ता इस विषय पर कार्य कर चुके हैं। सामुदायिक सहभागिता से विद्यालय के संसाधनों में वृद्धि होती है, अभिभावकों और समुदाय के सदस्यों का समर्थन प्राप्त होता है, तथा बच्चों की पढ़ाई में बाधाएं कम होती हैं। शिक्षक समुदाय के साथ जुड़ाव स्थापित कर बच्चों की शिक्षा को और प्रभावी बना सकते हैं। इसके अतिरिक्त, शिक्षक सामुदायिक समस्याओं जैसे बाल विवाह, महिला सशक्तिकरण, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण आदि में भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं।

लिंग के आधार पर शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता में अंतर भी एक महत्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र है। पुरुष और महिला शिक्षक सामाजिक रूप से समान रूप से सक्रिय हो सकते हैं, लेकिन उनकी भूमिका के स्वरूप में भिन्नता हो सकती है। महिलाएं आमतौर पर संवेदनशीलता और व्यक्तिगत संबंधों में अधिक रुचि दिखाती हैं, जबकि पुरुष शिक्षक नेतृत्व और आयोजन में अधिक संलग्न रहते हैं। इस संदर्भ में मगध प्रमंडल के शिक्षकों के बीच लिंग आधारित तुलना करके सामाजिक भूमिका और सहभागिता के विभिन्न पहलुओं को समझना आवश्यक है।

मगध प्रमंडल में शिक्षा की स्थिति और शिक्षक समुदाय की सामाजिक भूमिका के अध्ययन से यह पता चलता है कि यहाँ के शिक्षक स्थानीय सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए अपनी भूमिका निभाते हैं। परंपरागत सामाजिक संरचनाएं यहाँ के शिक्षक समुदाय को प्रभावित करती हैं, जिससे उनकी सहभागिता के तरीके निर्धारित होते हैं। क्षेत्रीय रीति–रिवाजों, सामाजिक मान्यताओं और शैक्षिक स्तर के अनुसार शिक्षकों की सामाजिक भूमिका में विविधता देखने को मिलती है।

इस अध्ययन का उद्देश्य मगध प्रमंडल के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका को व्यापक रूप से समझना और उनकी सामुदायिक सहभागिता को मापना है। साथ ही पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामाजिक भूमिका और सहभागिता के स्तर की तुलना भी इस शोध का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके अलावा, शिक्षक प्रशिक्षण और शैक्षिक नीतियों में सामाजिक भूमिका के महत्व को रेखांकित करना इस अध्ययन की प्राथमिकताओं में शामिल है।

शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता के विश्लेषण से न केवल शिक्षा क्षेत्र में सुधार के सुझाव मिलेंगे, बल्कि समुदाय और विद्यालय के बीच बेहतर समन्वय भी स्थापित होगा। इससे शिक्षा का सामाजिक प्रभाव बढ़ेगा और बच्चों का समग्र विकास सुनिश्चित होगा। साथ ही, शिक्षक और समुदाय के बीच संवाद स्थापित करने के लिए आवश्यक रणनीतियों का निर्माण किया जा सकेगा।

शिक्षकों की सामाजिक भूमिका को लेकर अनेक विद्वानों ने विभिन्न आयामों में चर्चा की है। शिक्षक केवल कक्षा में ज्ञान प्रदान करने वाले नहीं होते, बल्कि वे समाज के नैतिक संरक्षक, मार्गदर्शक, सलाहकार और प्रेरणास्रोत भी होते हैं। प्रोफेसर रीड (त्मक, 2015) के अनुसार, शिक्षक समाज में सामाजिक न्याय और समानता के प्रचारक होते हैं। वे बच्चों के मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारतीय संदर्भ में, सिंह (2017) ने अपने अध्ययन में बताया कि शिक्षक गांवों और कस्बों में सामाजिक संगठन की रीढ़ होते हैं। वे केवल शिक्षा तक सीमित नहीं रहते, बल्कि सामाजिक मुद्दों जैसे बाल विवाह, स्वच्छता, महिला सशक्तिकरण आदि में भी सक्रिय भागीदारी करते हैं।

सामुदायिक सहभागिता शिक्षा के प्रभावी होने के लिए आवश्यक मानी जाती है। ब्लूम (2010) के अनुसार, जब शिक्षक, अभिभावक और समुदाय मिलकर कार्य करते हैं, तो शिक्षा की गुणवत्ता और बच्चों की उपलब्धि में सुधार होता है। सामुदायिक सहभागिता से न केवल संसाधनों की उपलब्धता बढ़ती है, बल्कि स्कूल का माहौल भी सकारात्मक बनता है।

कुमार एवं कौर (2019) ने पंजाब के ग्रामीण विद्यालयों पर किए गए शोध में पाया कि सामुदायिक सहभागिता स्कूल की समस्याओं को समझने और हल करने में सहायता करती है। शिक्षक और अभिभावकों के बीच अच्छा संवाद बच्चों के हित में होता है और इससे कतवचवनज दर कम होती है।

लिंग के आधार पर शिक्षकों की सामाजिक भूमिका में कुछ मतभेद देखने को मिलते हैं। गुप्ता (2018) ने अपनी रिसर्च में पाया कि महिला शिक्षक भावनात्मक और संवेदनशीलता के कारण छात्र–छात्राओं के व्यक्तिगत विकास में अधिक संलग्न होती हैं, जबकि पुरुष शिक्षक संगठनात्मक और नेतृत्व क्षमता में अधिक सक्रिय रहते हैं।

दूसरी ओर, शर्मा एवं सिंह (2020) के अध्ययन से पता चलता है कि दोनों लिंग के शिक्षक सामुदायिक सहभागिता में बराबर के भागीदार हैं, लेकिन सामाजिक मान्यताओं के कारण महिलाओं को ज्यादा सामाजिक सक्रियता दिखाने में बाधाएँ आती हैं।

मगध प्रमंडल, जो बिहार के सांस्कृतिक केंद्र के रूप में जाना जाता है, यहाँ के सामाजिक–सांस्कृतिक माहौल में शिक्षक समुदाय की भूमिका विशिष्ट है। पटेल (2016) ने मगध क्षेत्र के शिक्षकों पर किए अध्ययन में पाया कि यहाँ के शिक्षक पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं को समझते हुए शिक्षा के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन लाने की कोशिश करते हैं।

इसके अतिरिक्त, झा (2018) के अध्ययन में उल्लेख है कि मगध के शिक्षकों की सामुदायिक सहभागिता अधिकतर स्थानीय रीति–रिवाजों और सामाजिक आयोजनों तक सीमित है, लेकिन धीरे–धीरे वे सामुदायिक विकास की योजनाओं में भी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

सामाजिक भूमिका सिद्धांत के अनुसार, व्यक्ति के व्यवहार का निर्धारण उसकी समाज में स्थापित भूमिकाओं से होता है। पार्सन्स (1951) ने इस सिद्धांत में बताया कि शिक्षक की भूमिका केवल पेशेवर नहीं होती, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारियों से भी जुड़ी होती है। इस सिद्धांत के अनुसार, शिक्षक को समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार करना होता है।

अतः, यह अध्ययन न केवल मगध प्रमंडल के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता को समझने का प्रयास है, बल्कि यह शिक्षा और समाज के बीच अंतर्संबंध को मजबूत करने का भी माध्यम है। इस शोध के परिणाम शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षा नीतियों, और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के लिए उपयोगी होंगे।

अध्ययन का महत्व– मगध प्रमंडल के सामाजिक–शैक्षिक संदर्भ में शिक्षकों की भूमिका पर किए गए अध्ययन सीमित हैं। शिक्षक न केवल ज्ञान के प्रसारक होते हैं, बल्कि वे समाज में नैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों के संरक्षक भी होते हैं। सामुदायिक सहभागिता से शिक्षा की गुणवत्ता और प्रभावशीलता बढ़ती है। इसलिए शिक्षक–समुदाय संबंधों का अध्ययन आवश्यक है।

अध्ययन प्रश्न–

1. मगध प्रमंडल के शिक्षक समाज में शिक्षकों की सामाजिक भूमिका क्या है?
2. शिक्षक समुदाय किस प्रकार से सामुदायिक गतिविधियों में भाग लेते हैं?
3. पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता में क्या अंतर पाया जाता है?
4. शिक्षकों की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता का शिक्षा प्रणाली पर क्या प्रभाव पड़ता है?

अध्ययन का उद्देश्य

1. मगध प्रमंडल के शिक्षक समुदाय की सामाजिक भूमिका का गहन अध्ययन करना।
2. सामुदायिक सहभागिता के स्तर का मापन एवं विश्लेषण करना।
3. पुरुष और महिला शिक्षकों के सामाजिक भूमिका और सहभागिता के पैमानों की तुलनात्मक जांच करना।
4. शिक्षा और सामुदायिक विकास में शिक्षकों की भूमिका को स्पष्ट करना।
5. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सामाजिक भूमिका एवं सामुदायिक सहभागिता के महत्व पर सुझाव देना।

डेटा संग्रहण– स्थानः मगध प्रमंडल के तीन जिलों के नौ विद्यालयलयों में से 90 शिक्षक (45 पुरुष, 45 महिला)। जो कि अरवल, जहानाबाद और गया, जिला के 9 माध्यमिक विद्यालय से प्राप्त करना है। संरचित प्रश्नावली और साक्षात्कार। सामुदायिक सहभागिता से संबंधित एक मानकीकृत स्केल (score out of 30)।

अध्ययन की सीमाएं – अध्ययन केवल मगध प्रमंडल के तीन जिलों तक सीमित है, जिससे व्यापक सामान्यीकरण में सावधानी आवश्यक। शिक्षक और अभिभावकों के अलावा समुदाय के अन्य सदस्यों को भी

शामिल करके भविष्य में व्यापक अध्ययन किया जा सकता है। जो कि सामाजिक भूमिका की माप में और अधिक सूक्ष्म तथा विविध पैमाने विकसित किए जा सकते हैं।

परिकल्पना– पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता के स्तर में महत्वपूर्ण अंतरों को देखना है।

परिणाम–

पुरुष और महिला शिक्षकों के समूहों के बीच सामुदायिक सहभागिता के स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना टी–टेस्ट का उपयोग किया गया। समूह के माध्य मान के प्राप्तांकों का सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा। अतः समूहों के बीच सामुदायिक सहभागिता के स्कोर के प्राप्तांकों को सारणी–1 में निरूपित किया जा रहा हैः–

सारणी–1

पुरुष और महिला शिक्षकों के समूहों के बीच सामुदायिक सहभागिता स्कोर के माध्य मान के प्राप्तांकों का सार्थकता अंतर

शिक्षक समूह	N	सामुदायिक सहभागिता		t	*df*	सार्थकता
		Mean	SD			
पुरुष	45	23.34	3.06	1.18	88	p>.05NS
महिला	45	22.51	3.56			

सारणी–1 में *पुरुष और महिला शिक्षकों के समूहों के बीच सामुदायिक सहभागिता पर* सार्थक अंतर (t=1.186, df=88, p>0.05) नहीं पाया गया, जो सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण नहीं है। पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामुदायिक सहभागिता के औसत स्कोर में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। दोनों समूह समाज में शिक्षक की भूमिका निभाने में लगभग समान रूप से सक्रिय हैं। अतः परिणाम परिकल्पना कि सार्थकता को दर्शाती है।

निष्कर्ष –

यह शोध पत्र मगध प्रमंडल के शिक्षक समुदाय की सामाजिक भूमिका और सामुदायिक सहभागिता का विश्लेषण करता है। अध्ययन में पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामाजिक भूमिका तथा सामुदायिक सहभागिता के स्तर की तुलना की गई है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार, पुरुष शिक्षकों का औसत स्कोर 23.34 तथा महिला शिक्षकों का 22.51 है, जिसमें सांख्यिकीय परीक्षण (स्वतंत्र नमूना टी–टेस्ट) से कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि दोनों लिंग के शिक्षक सामाजिक एवं सामुदायिक गतिविधियों में लगभग समान रूप से सक्रिय हैं।

शिक्षकों की सामाजिक भूमिका केवल कक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि वे समाज के नैतिक संरक्षक, मार्गदर्शक और प्रेरणास्रोत भी हैं। सामुदायिक सहभागिता से शिक्षा की गुणवत्ता और बच्चों के विकास में सुधार होता है। मगध प्रमंडल में शिक्षक स्थानीय सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों को समझते हुए सामाजिक परिवर्तन में योगदान देते हैं। अध्ययन में सुझाया गया है कि शिक्षक प्रशिक्षण और नीति निर्माण में सामाजिक भूमिका एवं सामुदायिक सहभागिता पर विशेष ध्यान दिया जाए ताकि शिक्षा प्रणाली और समुदाय के बीच बेहतर संवाद स्थापित हो सके। मगध प्रमंडल के शिक्षक समाज की सामाजिक भूमिका व्यापक है, जिसमें वे शिक्षा के साथ–साथ सामाजिक जागरूकता, नैतिक शिक्षा और सामुदायिक विकास में भी सक्रिय योगदान देते हैं। पुरुष और महिला शिक्षकों के बीच सामुदायिक सहभागिता के स्तर में कोई महत्वपूर्ण भेद नहीं पाया गया, जो दर्शाता है कि दोनों लिंग समाज सेवा में समान रूप से समर्पित हैं।

सुझाव–

1. शिक्षक प्रशिक्षण में सामाजिक और सामुदायिक भूमिका पर विशेष ध्यान दिया जाए।
2. विद्यालय और समुदाय के बीच संवाद को बढ़ावा देने के लिए सामुदायिक कार्यक्रम आयोजित किए जाएं।
3. महिला शिक्षकों को और सशक्त बनाने के लिए सामाजिक नेतृत्व कौशल विकास कार्यक्रम लागू किए जाएं।
4. सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देने के लिए स्थानीय संसाधनों का प्रयोग किया जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. कुमार, अ., व कौर, जे. (2019) ग्रामीण विद्यालयों में सामुदायिक सहभागिता का प्रभाव. शिक्षा और समाज, 12(3), 45–58।
2. सिंह, आर. (2017) गांवों में शिक्षक की सामाजिक भूमिकाः एक सामाजिक अध्ययन. पटना– बिहार सामाजिक विज्ञान अकादमी।
3. गुप्ता, वी. (2018) पुरुष और महिला शिक्षकों की भूमिका में अंतरः एक तुलनात्मक अध्ययन. शिक्षाशास्त्र जर्नल, 15(2), 72–85।
4. पटेल, एस. (2016) मगध क्षेत्र के शिक्षकों की सामाजिक भूमिका. बिहार शोध पत्रिका, 9(1), 101–114।
5. झा, पी. (2018) मगध प्रमंडल में शिक्षक और सामुदायिक सहभागिता. दिल्ली– सामाजिक विज्ञान प्रकाशन।
6. पार्सन्स, टी. (1951) सामाजिक भूमिका सिद्धांत. न्यूयॉर्क मैकमिलन। (मूल अंग्रेजी ग्रंथ का हिंदी अनुवाद)
7. रीड, जे. (2015) शिक्षक और सामाजिक न्याय. मुंबई– शैक्षिक प्रकाशन।

बुद्धस्य सामाजिकी अवधारणा

डॉ. लेखमणी त्रिपाठी*

महामनस्वी श्रीबुद्धदेवः समाजोद्धारस्य प्रतिनिधि शिरोमणिर्मन्यतोयाभी रूढिभिस्तत्कालीनः समाजो ग्रस्त आसीत्, असंगतासु नानाविध मान्यतासु प्रसक्त आसीत्, तासां सम्यक्तया समग्रतया चोन्मूलनार्थं बुद्धदेवः प्रातिनिध्यमुवाह। बुद्धस्य या विचारक्रान्तिरासीत्, सा न केवलं भारतवर्षमपितु विश्वस्य नानाभूभागेषु प्रसारमवाप्तवती। बुद्धेन सिद्धान्तितं यद् वर्णविभागादयो मानवसमूहविभागा व्यर्थप्रायाः सन्ति। दिव्यावदाने बुद्धाभिमतं प्रतिपादयन् ग्रन्थकार एकजातिमूलं समाजमेव मानवानां कृते सम्प्रोक्तवान्। यथा दिव्यावदाने–

एकैव जातिर्लोकेऽस्मिन् सामान्या न पृथग्विधा।।[1]

इनेन वचनेन अनुमीयते यत् पूर्वकालतः प्रचलितो ये। वर्णविभागः आश्रमविभगश्च आसीत्, स न बुद्धाय रोचते स्म। बुद्धो निर्वाणलाभमेव मानवजीवनस्य परमामुपलब्धिं मेने। तन्मते प्रत्येकं जीवेषु साधारणं चैतन्यमात्रं ज्ञेयम्, न तच्चैतन्यमात्मा भवितुमर्हति। असावीश्वरस्यास्तित्वविषयकप्रश्नं प्रश्नतया एव नांगीकरोतिस्म। नैतिकनियमाना मनुपालनं, यदर्थं तेन धर्मचक्रप्रवर्तनं कृतम्, तदेव धर्मः पुरुषार्थो वा आसीत्। बुद्धस्य जीवनदर्शनं कारुण्यप्रेरितं महत्तरं च आसीत्। बुद्धो न केवलमात्मन एव कल्याणमिच्छतिस्म अपितु स जगतोऽस्य पारेसंख्यं दुःखदावार्दितानां विमुक्तिमैच्छत्। सर्वेषां हितं भवेत्, सर्वेऽपि निर्वाणपदवीमवाप्नुयुरिति बुद्धस्य उदारतरं चिन्तनं प्रतिभातिस्म। करणीयमेत्तसुत्ते बुद्धस्य सामाजिकक्या अवधारणायाः सम्यग् ६पेण परिचयो लभ्यते यत्र अप्पदीपो भव इत्यस्यामरवाक्यस्य उद्घोषको बुद्धदेवः लोकतान्त्रिकीं सामाजिकहितानुबन्धिनीं जीवनप्रणालीं समर्थितवान्। तस्य कमपि भेदं भेदराहित्यं वा प्रतिविशेष आग्रहो नासीदपितु सर्वेऽपि मानवा निर्वाणाय एव समुत्पन्नाः, अतस्ते स्व–स्वाभीष्टं परस्परं प्रीत्या वर्तन्तः साधयेयु रिति बौद्धचिन्तन निष्कर्षः प्रतिभाति। बुद्धेन सम्प्रदायवादापेक्षया सर्वमानवकल्याणवादः समर्थितः। यागि सुत्तेऽस्मिन्–

"ये केचिपाणभूतत्थि तसा वा थावरा वा अनवसेसा।
दीघा वा ये महन्ता वा मज्झिमा रस्सका ऊणुकथूला।।
दिट्ठा वा ये अदिष्ठा ये च इरे वसन्ति अविदूरे।
भूता वा सम्भवेसी वा सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितता।।
न परो परं निकुब्बेथ तातिमंजेथ कत्थचि न कञ्चि।
व्यारोसना पटिघसञ्ञा नाञ्ञमञ्ञस्स दुक्खमिच्छेय।।
माता यथा नियं पुत्तं आयुसा एक पुत्त मनुरक्खे।
एवम्पि सब्बभूतेसु मानसं भावये अपरिमाणं।।
मेतं च सब्ब लोकस्मिं मानसं भाषये अपरिमाणं।
उद्धं अधो च तिरियं च असम्बाधं अवेरं असपतं।।"[2]

बुद्धस्य चिन्तिते समाजे सर्वेषां जनानां समानतया अधिकार आसीत् तन्मते उच्चवर्णीया, हीनवर्णीया, मूर्खाः, विद्वांसः, अणुभूताः, महत्तराः, दूरवर्तिनः, समीपवर्तिनः ये केऽपि जन्तवस्ते सुखेन निवसन्तु। परस्परं वैमनस्यं, विरोधो दुःखापादोच्छा वा केनचिदपि नानुष्ठेया। विनां बाधां शत्रुतां च विना सर्वेऽपि प्राणिनः परमार्थसिद्धये अग्रसरा भवन्तु।

बौद्धकालीने समाजे चत्वारो वर्णा आसन्–ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य– शूद्राख्याः। बह्वयो जातयश्चापि आसन्। ताः प्रायेण वर्णसांकर्यवशादभूवन्। वज्रसूचीप्रणेत्रा अपि जातिबहुत्वं स्वीकुर्वता एकैव जातिरित्यादिरूपं दिव्यावदानाभिमतं समर्थितम्। बुद्धकालिके समाजे वर्णवादात् जातिवादाच्च पृथग्भूय सामाजिकाः कर्मवादस्य प्राधान्यं स्वीचक्रिरे। स्वयं बुद्धदेवोऽपि एवमाह–

न जच्चा बसलो होति न जच्चा होति बाम्हणो।
कम्मुना बसलो होतिं कम्मुना होति बाम्हणो।।[3]

---

* अतिथ अध्यापक, बौद्ध दर्शन विभाग, श्रमण विद्या संकाय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

[1] दिव्या0 323/14

[2] करणीयमेतस्सुत्त 4–8 गाथा

तत्सामयिकः समाजो हीनतामुच्चताञ्चोभयमपि परित्यज्य स्वस्थविचारपरायण आसीत्। अश्वघोषो निम्नकुलजानां दुर्दशामवलोक्य क्रुद्ध इवाह– उच्चकुलोत्पन्नानां कृते न कथमपि निम्नकुलोत्पन्नास्तत्तदधिकारेभ्यो वञ्चनीयाः।[4] एवम्प्रकारेण एषा श्रमणविचारधारा मानवजातेरैक्यभावनां पोषयतिस्म। यद्यपि एतत्सत्यमस्ति यद् बुद्धकालिकेऽवसरे एकजातिवादः सोत्साहं जागर्तिस्म, तथापि सर्वथा न प्राक्तनीवर्णाश्रमव्यवस्था निर्मूला अभवत्। सौन्दरनन्दस्य आज्ञाव्याकरणनाम्नि अष्टादशे सर्गे उल्लेखो लभ्यते यद् द्विजबालको वेदाध्ययनं समाप्य, वैश्यो व्यापारेण प्रचुरं धनमर्जयित्वा क्षत्रियश्च शत्रुसैन्यं पराजित्य स्वीयमुपाध्यायमुपसर्पति। तत्समयेऽपि ब्राह्मणादीनां मन्वादिधर्मशास्त्रिसमर्थितानि एव कर्तव्य–दायित्वादीनि भवन्ति स्म।

एवमेव आश्रमव्यवस्थाया अपि स एव क्रम आसीत् यः, पारम्परिकेभेऽभीष्टमभवत्। बुद्धकालिके समाजे चत्वारः पुरुषार्थाः पूर्वाचार्य समर्थिता धर्म–अर्थ–काम–मोक्षाख्या आसन्। यद्यपि धर्मस्य (वैदिकस्य) स्थानं बुद्धप्रवर्तितेन धर्मेण गृहीतमासीत् बहुलतया, तथापि वैदिकाचाराः पाल्यन्ते स्म। कामस्य स्थितिः उभयत्र सदृशी एवासीत्। अर्थोपार्जनमपि परम्परापरीतमासीत्। न तत्र बौद्धविचाराणां कश्चिद् विशेषो हस्तक्षेपः समभवत्। मोक्षस्य स्थानं पारम्परिकमुक्तेरपेक्षया तथागतप्रदर्शितं निर्वाणं जग्राह। समाजस्य पारिवारिकव्यवस्थायां मातापितरौ प्रति विशेषेण श्रद्धा आवेद्ये स्म। पत्नी पतिश्चोभावपि प्रधानतया पारिवारिकौ आस्ताम्। पारिवारिकेषु पितृव्यः, पितृव्यपत्नी, भ्रातृव्यः, भ्रातुष्पुत्रः, पुत्री, पुत्रादयो भवन्ति स्म प्रधानसम्बन्धिनः। अतिथिपरिचर्या प्रमुखधर्मेष्वन्यतमः समभवत्। गृहस्थः जीवनमामोदप्रमोदविलसितं सानन्दं यापयन्तिस्म। गुरुजनानां समर्चना अर्घ्य–पाद्य–मधुपर्कादिनिवेदनपुरस्सरं समाचर्यते स्म। जनाः शिरोवेष्टनादिकमवतार्य एव गुरुजनानामभिवादनं कुर्वन्ति स्म। बुद्धकालिके समाजे गर्भाधान–पुंसवन–नामकरण–अन्नप्राशन–विवाह–अन्त्येष्टि–दीक्षाख्याः संस्काराः सविशेषं प्रचलिता आसन्। शुद्धोदन,ख स्वयमेव महामायादेव्यां गर्भधानमकरोत्, ततो बुद्धस्य जन्माभवत्। बुद्धमातुर्महामायायाः पुंसवनसंस्कार– स्यापि उल्लेखोऽवाप्यते। जन्मनो दशदिनानन्तरं नामकरणसंस्कारोऽनुष्ठीयते स्म। राजकुमारस्य गौतमस्य सिद्धार्थ इति नाम प्रसिद्धमेव। विवाहसंस्कारस्तदानीन्तने समाजे सम्यक्तया प्रचलित आसीत्। विवाहस्य द्वौ क्रमौ तत्समये आस्ताम्– अनुलोमक्रमः, प्रतिलोमक्रमश्च। अनुलोमक्रमस्तु प्रसिद्ध एव, इदानीमपि सामाजिकदृष्ट्यानुलोमक्रम आद्रियते, परं तत्समये प्रतिलोमक्रमोऽपि स्वीक्रियते स्म। यथा सेनजितस्तनया चाण्डालमुवाह, एवमेव कश्चिद् धीवरः कुमुदवतीं परिणिनाय।[5]

मृतकसंस्कारोऽपि बहुतरमहोत्सवपूर्वक मायोज्यतेस्म। तत्समये सुगन्धितवल्कलानां, सुरभियत्राणां तथागुरुचन्दनादिकाष्ठानां माध्यमेव चितानिर्माणं भवतिस्म। वर्णाश्रमिणो दाहादिना कर्मसम्पादयन्ति, किन्तु बौद्धाः क्वचिद् दाहं, क्वचित् परित्यागं वा कुर्वन्ति स्म। मृतकबौद्धानां चिताः प्रायेण चैत्यसमीपे एव निर्माप्यन्ते स्म। तेषामस्थीनि कस्मिंश्चित् पात्रे निधाय स्तूपनिर्माणं बभूव। दाहकर्मणोऽनन्तरं मृतानुयात्रिणः स्नानं कृत्वा एव स्वस्वगृहं व्रजन्तिस्म, स्नानमेतत् 'मृतकस्नानम्' इत्युक्तम्। बुद्धपुरो दीक्षा अपि प्रमुखः संस्कारो मन्यते स्म। दीक्षायोग्यं पात्रं, दीक्षाकालः, पात्रस्वीकृतिः, दीक्षाकर्तुरनुमतिः केशमुण्डनं, काषायधारणं, चीवरदानं चेत्यादिकस्य विचारस्तदा भवति स्म। बुद्धविहारेषु एव दीक्षा दीयते स्म। भोजनं शाकानां मांसानां चोभयमपि भवति स्म। यद्यपि बुद्धो हिंसाया विरोधी आसीत्तथापि विना भिक्षोः प्रयत्नात् यदि मांसं भैक्ष्यरूपेणोपलभ्यते स्म तु तद् ग्राह्यमासीत्। एवम्प्रकारेण समासतो बुद्धकालिकसमाजस्य रूपरेखा समुपस्थापिता, अतोऽग्रे बौद्धधर्मस्य प्राणभूतानां सद्धर्मादितत्त्वानां वैशद्येन पर्यालोचनं करिष्यते।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. धम्म पद
2. बोधीचर्यावतार
3. अभिधर्मकोश
4. विशुद्धिमग्गो

◀◀ ▶▶

[3] सुत्तनिपात0 वसलसुत्त0 27 गाथा
[4] बु0च0 23/59
[5] सौन्दर0 8/44

समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव: विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में एक अध्ययन

निशा राणा*

सारांश

समीक्षा "समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव: विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में एक अध्ययन" पर अध्ययनों को समेकित करती है ताकि समावेशी विविध वातावरणों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण, प्रभावशीलता और चुनौतियों में ज्ञान अंतराल को पाटा जा सके। समीक्षा का उद्देश्य बढ़ी हुई पहुँच और गुणवत्ता, सहायक प्रौद्योगिकी के मानकीकरण, कार्यान्वयन में बाधाओं के निर्धारण, शैक्षणिक और सामाजिक प्रदर्शन पर हस्तक्षेप के प्रभावों की तुलना, और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग को सुगम बनाने वाले शैक्षणिक दृष्टिकोणों की जाँच में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के योगदान का आकलन करना था। विविध पद्धतियों का उपयोग करते हुए, कई महाद्वीपों में अनुभवजन्य और गुणात्मक अनुसंधान की एक व्यवस्थित समीक्षा की गई। निष्कर्ष बताते हैं कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी नई एआई और वीआर प्रौद्योगिकियों सहित अनुकूली और सहायक प्रौद्योगिकियों के माध्यम से विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों में सीखने, प्रेरणा और जुड़ाव को काफी बढ़ाता है। विभिन्न सहायक प्रौद्योगिकियां व्यक्तिगत शिक्षण का समर्थन करती हैं, लेकिन लागत, पहुंच और मानकीकरण के कारण इनमें बाधा आती है। पर्याप्त शिक्षक प्रशिक्षण की कमी, संसाधनों की कमी और विशेष रूप से विकासशील देशों में, बुनियादी ढाँचे की सीमाओं के रूप में सार्वभौमिक बाधाएँ बनी हुई हैं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी संचार और सहभागिता को प्रोत्साहित करके सामाजिक समावेशन को भी बढ़ावा देता है, हालाँकि इसके लाभ समायोजन की गुणवत्ता और शिक्षकों की जागरूकता पर निर्भर करते हैं। सफल शैक्षणिक मॉडल सार्वभौमिक शिक्षण डिज़ाइन के सिद्धांतों और सामूहिक व्यावसायिक शिक्षा पर ज़ोर देते हैं, फिर भी बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण ढाँचे अभी भी सीमित हैं। सामान्य तौर पर, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में समावेशी शिक्षा को समर्थन देने की उच्च क्षमता है, बशर्ते कि प्रणालीगत समर्थन, नीतिगत सुसंगतता, और कार्यान्वयन और निष्पक्षता को अधिकतम करने के लिए अधिक कठोर, संदर्भ-विशिष्ट अनुसंधान की आवश्यकता हो।

महत्वपूर्ण शब्द:सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, समावेशी शिक्षा, सहायक प्रौद्योगिकियाँ, अनुकूली शिक्षण, शैक्षिक समता

परिचय: समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी) के प्रभाव पर शोध, विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए सीखने की सुगमता और परिणामों को बेहतर बनाने की इसकी क्षमता के कारण, एक महत्वपूर्ण शोध क्षेत्र के रूप में उभरा है। हाल के दशकों में, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का एकीकरण बुनियादी सहायक उपकरणों से परिष्कृत अनुकूली और इंटरैक्टिव तकनीकों में विकसित हुआ है, जो व्यक्तिगत और समतामूलक शिक्षा मॉडल (मसरुरोहएटअल., 2024) (अनाग्नोस्टोपोलौएटअल., 2021) (वुलैंडारीएटअल., 2024) की ओर एक बदलाव को दर्शाता है। यह विकास समावेशिता और समता पर ज़ोर देने वाली वैश्विक शैक्षिक नीतियों के अनुरूप है, और यह स्वीकार करता है कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी विविध शिक्षार्थियों (यिंगवेएटअल., 2021) (काओ, 2019) के लिए भागीदारी और उपलब्धि में अंतर को पाट सकता है। उल्लेखनीय रूप से, मुख्यधारा के परिवेशों में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों का बढ़ता नामांकन उनके शैक्षणिक और सामाजिक एकीकरण में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के व्यावहारिक महत्व को रेखांकित करता है (बैगनएटअल., 2018) (मिक्रोपोलोस और इत्राकी, 2022)। उदाहरण के लिए, अध्ययनों से पता चलता है कि समावेशी कक्षाओं में लगभग 6% प्राथमिक छात्र विशेष आवश्यकताओं वाले हैं, जो इस शैक्षिक चुनौती के पैमाने को उजागर करता है (बैगनएटअल., 2018)।

मान्यता प्राप्त लाभों के बावजूद, समावेशी शिक्षा के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभावी ढंग से लाभ उठाने में महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं। विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों को अक्सर उपयुक्त तकनीकों तक सीमित पहुँच, अपर्याप्त शिक्षक प्रशिक्षण और अपर्याप्त बुनियादी ढाँचे जैसी बाधाओं का सामना करना पड़ता है (सेतियावानएटअल., 2023) (माचेक एट अल., 2024) (ÇİFTÇİ, 2024)। इसके अलावा, शोध से विभिन्न प्रकार की विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ताओं और शैक्षिक संदर्भों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रभाव के बारे में ज्ञान का अंतर पता चलता है (मुख्तारकीज़ीएटअल., एन.डी.) (बटानेरोएटअल., 2022) (फर्नांडीज-सेंरोएटअल., 2023)। जहाँ कुछ अध्ययन शैक्षणिक प्रदर्शन और सामाजिक समावेशन पर सहायक और अनुकूली तकनीकों के सकारात्मक प्रभावों पर ज़ोर देते हैं (साहितोएटअल., 2024) (एलेक्सोपोलूएटअल., 2021) (वूग्लानिस और सलापाटा, 2024), वहीं अन्य असंगत कार्यान्वयन और परिवर्तनशील परिणामों की ओर इशारा करते हैं (मार्सिनो, 2018) (एडम और टैटनॉल, 2014) (एडम और टैटनॉल, 2012)। यह विवाद सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी हस्तक्षेपों की प्रभावकारिता और उनकी सफलता को प्रभावित करने वाले प्रणालीगत कारकों (दावरे और वैद्य, 2024) (विलियम्स, 2005) (माचेक एट अल., 2024) पर भिन्न दृष्टिकोणों को दर्शाता है। इस अंतर के परिणामों में शैक्षिक समानता को अनुकूलित करने के अवसरों का चूकना और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के बीच डिजिटल विभाजन को बनाए रखने का जोखिम शामिल है (मस्तम और ज़हरुदीन, 2024) (मागुवे, एन.डी.)।

* **सहायक प्रोफेसर (एसी), उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय** (UoU), **हलद्वानी (नैनीताल) 263139, उत्तराखंड**
nisha.rana.812622@gmail.com

इस समीक्षा का मार्गदर्शन करने वाला वैचारिक ढांचा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी , समावेशी शिक्षा और सहायक प्रौद्योगिकी की परिभाषाओं को एकीकृत करता है, और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों के लिए पहुँच, भागीदारी और व्यक्तिगत शिक्षा को सुविधाजनक बनाने में उनकी परस्पर संबंधित भूमिकाओं पर ज़ोर देता है (एनाग्नोस्टोपोलूएटअल., 2021) (बटानेरोएटअल., 2022) (काओ, 2019)। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में डिजिटल उपकरण और प्लेटफ़ॉर्म शामिल हैं जो सूचना तक पहुँच और संचार का समर्थन करते हैं, जबकि समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी विद्यार्थियों को उनकी क्षमता की परवाह किए बिना गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है (काओ, 2019) (एनाग्नोस्टोपोलूएटअल., 2021)। सहायक तकनीक विशेष रूप से उन उपकरणों और सेवाओं को संदर्भित करती है जो कार्यात्मक सीमाओं की भरपाई करते हैं, स्वतंत्र शिक्षण और सामाजिक जुड़ाव को सक्षम बनाते हैं (बटानेरोएटअल., 2022)। यह ढाँचा शैक्षिक समावेशन और छात्र परिणामों पर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रभाव की व्यवस्थित जाँच का आधार है।

इस व्यवस्थित समीक्षा का उद्देश्य विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की भूमिका पर वर्तमान शोध की स्थिति का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना, प्रभावी प्रथाओं, चुनौतियों और ज्ञान में अंतराल की पहचान करना है। अनुभवजन्य साक्ष्य और सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि को संश्लेषित करके, इस समीक्षा का उद्देश्य इस बात की सूक्ष्म समझ में योगदान देना है कि विविध शिक्षार्थियों का समर्थन करने और नीति और व्यवहार को सूचित करने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को कैसे अनुकूलित किया जा सकता है। यह फोकस सीधे पहचाने गए अंतरालों और विवादों को संबोधित करता है, समावेशी सेटिंग्स में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण पर एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है।

यह समीक्षा एक व्यवस्थित साहित्य पद्धति का उपयोग करती है, जिसमें पिछले दशक में प्रकाशित कई डेटाबेस से सहकर्मी-समीक्षित अध्ययनों का चयन किया गया है। समावेशन मानदंड समावेशी शिक्षा के संदर्भ में विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों पर अनुभवजन्य शोध पर ज़ोर देते हैं। विश्लेषणात्मक ढाँचों में विषयगत संश्लेषण और आलोचनात्मक मूल्यांकन शामिल हैं ताकि सुगम्यता, शैक्षणिक प्रभावशीलता और सामाजिक समावेशन के इर्द-गिर्द निष्कर्षों को व्यवस्थित किया जा सके। समीक्षा की संरचना इस प्रकार की गई है कि पहले क्षेत्र का संदर्भ और महत्व प्रस्तुत किया जाए, उसके बाद समस्या की पहचान, वैचारिक रूपरेखा और साक्ष्य का संश्लेषण किया जाए, और अंततः भविष्य के शोध और अभ्यास के लिए सिफारिशें की जाएँ।

उद्देश्य कथन : इस समीक्षा का उद्देश्य "समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभाव: विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में एक अध्ययन" पर मौजूदा साहित्य की आलोचनात्मक समीक्षा करना है ताकि समावेशी शिक्षण प्रक्रियाओं को सक्षम बनाने में सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों (सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी) के एकीकरण, प्रभावशीलता और मुद्दों के बारे में मौजूदा साक्ष्यों को एकीकृत किया जा सके। यह समीक्षा महत्वपूर्ण है क्योंकि यह इस बात को समझने की बढ़ती आवश्यकता को संबोधित करती है कि सहायक प्रौद्योगिकी और तकनीकी उपकरण विभिन्न विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों के लिए पहुँच, भागीदारी और सीखने को कैसे बढ़ा सकते हैं। अनुभवजन्य अध्ययनों और सैद्धांतिक ढाँचों के आलोचनात्मक मूल्यांकन ने समावेशी परिवेश में सर्वोत्तम प्रथाओं, कार्यान्वयन में कमियों और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को सफलतापूर्वक अपनाने के प्रेरकों को खोजने के प्रयास में रिपोर्ट का मार्गदर्शन किया। अंत में, एकीकरण का उद्देश्य शिक्षकों, नीति निर्माताओं और शोधकर्ताओं को यह बताना है कि सभी विद्यार्थियों के लिए समावेशी और कुशल शिक्षा उपलब्ध कराने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जाए।

अध्ययन की पद्धति : इस शोध में अध्ययन पद्धति के रूप में साहित्य समीक्षा को अपनाया गया है। इस पद्धति के अंतर्गत समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के प्रभावविशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों से संबंधित राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय शोध लेख, सरकारी रिपोर्टें, नीति दस्तावेज़, शैक्षिक जर्नल और विशिष्ट पुस्तकें, विश्वसनीय डेटाबेस जैसे Google Scholar, JSTOR, ResearchGate,Scopus एवं अन्य साहित्यों का चयन कर गहन अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया।

साहित्य संग्रहण के लिए "भारत में समावेशी शिक्षा और सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकीप्रभावविशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों ", चुनौतियाँ, लाभ जैसी मुख्य शब्दावली का उपयोग कर प्रकाशित शोध कार्यों को चयनित किया गया। समीक्षात्मक अध्ययन में उन स्रोतों और शोधों को प्राथमिकता दी गई जो विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रभाव, लाभ एवं चुनौतियों को रेखांकित और प्रमाणित करते हैं। संग्रहित साहित्य को बिषयानुसार श्रेणियों में विभाजित कर विवेचनात्मक विश्लेषण किया गया।

विश्लेषण और संश्लेषण : विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रभाव पर समीक्षित साहित्य, सीखने की पहुँच, सहभागिता और शैक्षणिक परिणामों पर प्रौद्योगिकी के सामान्यतः सकारात्मक प्रभाव को दर्शाता है। कई अध्ययन विविध शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी उपकरणों के अनुकूलन और अनुकूलनशीलता को प्रमुख शक्तियों के रूप में उजागर करते हैं। हालाँकि, विशेष रूप से शिक्षक प्रशिक्षण, संसाधन आवंटन और अवसंरचनात्मक सहायता के संबंध में, महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं, जो सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण की पूर्ण क्षमता को सीमित करती हैं। गुणात्मक केस स्टडी से लेकर मात्रात्मक विश्लेषण तक, अध्ययनों में पद्धतिगत विविधता एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है, लेकिन निष्कर्षों की मजबूती और सामान्यीकरण में परिवर्तनशीलता भी लाती है। कुल मिलाकर, जहाँ सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी समावेशन को बढ़ावा देने में आशाजनक है, वहीं साहित्य इसके कार्यान्वयन को अनुकूलित करने के लिए प्रणालीगत समर्थन और आगे के अनुभवजन्य शोध की आवश्यकता पर भी ज़ोर देता है।

पहलू	खूबियाँ	कमज़ोरियाँ
सीखने के परिणामों को बेहतर बनाने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की प्रभावशीलता	कई अनुभवजन्य अध्ययनों से पता चलता है कि अनुकूली शिक्षण मॉड्यूल और सहायक तकनीकों सहित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी , विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के शैक्षणिक प्रदर्शन, प्रेरणा और जुड़ाव में उल्लेखनीय सुधार करती है (मसरुरोहएटअल., 2024) (वुलैंडारी और हरसिवी, 2024) (साहितोएटअल., 2024) (प्रिस्टियानांटाएटअल., 2024) (पर्डिसनएटअल., 2024)। वाक् उत्पन्न करने वाले उपकरण, आभासी वास्तविकता और शैक्षिक अनुप्रयोगों जैसी तकनीकों ने साक्षरता, संख्यात्मकता और सामाजिक कौशल में उल्लेखनीय वृद्धि दिखाई है (साहितोएटअल., 2024) (इयामुरेमीएटअल., 2023) (कैनो और सांचेज़-इबोरा, 2015)। व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार सीखने के अनुभवों को वैयक्तिकृत करने की सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की क्षमता इसकी प्रभावशीलता का समर्थन करने वाला एक आवर्ती विषय है (मसरुरोहएटअल., 2024) (रे और ज़वेरी, 2024)।	सकारात्मक परिणामों के बावजूद, कुछ अध्ययन मिश्रित या अनिर्णायक परिणाम प्रस्तुत करते हैं, विशेष रूप से गणित के लिए कंप्यूटर-सहायता प्राप्त शिक्षण में, जहाँ पद्धतिगत सीमाएँ वैधता को प्रभावित करती हैं (सियो और ब्रायंट, 2009)। इसके अतिरिक्त, विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ता के प्रकारों और शैक्षिक संदर्भों में प्रौद्योगिकी प्रभावशीलता में परिवर्तनशीलता सामान्यीकरण को जटिल बनाती है (प्रिस्टियानांटाएटअल., 2024) (पंगगाबीनएटअल., 2024)। कुछ हस्तक्षेपों में निरंतर लाभों की पुष्टि के लिए दीर्घकालिक अनुवर्ती कार्रवाई का अभाव होता है (साहितोएटअल., 2024)।
सहायक तकनीकों के प्रकार और कार्यक्षमताएँ	साहित्य में सहायक तकनीकों की एक विस्तृत श्रृंखला की पहचान की गई है, जिसमें ब्रेल उपकरणों और स्पीच-टू-टेक्स्ट सॉफ़्टवेयर जैसे निम्न-तकनीकी उपकरणों से लेकर एआई-संचालित अनुकूली प्रणालियाँ और रोबोटिक्स जैसे उच्च-तकनीकी समाधान शामिल हैं (टेक्नोलोजीएटअल., 2024) (एनकार्नाकाओएटअल., 2016) (श्रीवास्तव एटअल., 2021) (चालकीदकिसएटअल., 2024)। ये उपकरण संचार, पाठ्यक्रम तक पहुँच और स्वतंत्र शिक्षण को सुगम बनाते हैं, जिससे समावेशिता बढ़ती है (ओबोहवेमु, 2024) (लेइटएटअल., 2015) (खेकएटअल., 2006)। एआई और वीआर जैसी उभरती तकनीकों का एकीकरण इमर्सिव और व्यक्तिगत शिक्षण के लिए आशाजनक अवसर प्रदान करता है (विनोद एटअल., 2024) (चालकीदकिसएटअल., 2024)।	कई अध्ययन उन्नत तकनीकों की उच्च लागत और सीमित पहुँच पर प्रकाश डालते हैं, विशेष रूप से विकासशील देशों में, जो व्यापक रूप से अपनाने में बाधा डालते हैं (ग्रोनलंडएटअल., 2010) (मैचेकएटअल., 2024)। सहायक उपकरणों के बीच मानकीकरण और अंतर-संचालनीयता का भी अभाव है, जो निर्बाध एकीकरण में बाधा डाल सकता है (रामनाथनएटअल., 2024)। इसके अलावा, कुछ तकनीकों को विविध शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए महत्वपूर्ण अनुकूलन की आवश्यकता होती है, जो हमेशा संभव नहीं होता है (गोम्सएटअल., 2024)।
सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी पहुँच और शिक्षक तैयारी में चुनौतियाँ	एक सुसंगत निष्कर्ष सफल सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण में शिक्षक प्रशिक्षण और व्यावसायिक विकास की महत्वपूर्ण भूमिका है (सेतियावानएटअल., 2023) अध्ययन इस बात पर जोर देते हैं कि अपर्याप्त प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता की कमी और शिक्षकों के बीच सीमित डिजिटल साक्षरता सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रभावी उपयोग में बाधा डालती है (डावरे और वैद्य, 2024) (मैचेकएटअल., 2024) (कैम्पाडोएटअल., 2023)। अपर्याप्त हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर और इंटरनेट कनेक्टिविटी जैसी बुनियादी ढाँचे की कमी, पहुँच को और बाधित करती है (बोंडारेंको, 2018) (बुडनिक और कोटिक, 2020) (प्राडोएटअल., एन.डी.)।	कई शैक्षिक सेटिंग्स, विशेष रूप से विकासशील क्षेत्रों में, वित्तीय बाधाओं, नीतिगत समर्थन की कमी और कर्मचारियों के बीच बदलाव के प्रति प्रतिरोध सहित लगातार बाधाओं का सामना करती हैं (ग्रोनलंडएटअल., 2010) इसके अतिरिक्त, कुछ शोध सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी कार्यान्वयन में परिवारों और अंतःविषय टीमों की अपर्याप्त भागीदारी की ओर इशारा करते हैं (ज़ाहुतिना-विज़र और डेनिसियुक, 2024)।
सामाजिक समावेशन और सहभागिता पर प्रभाव	सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों के बीच सामाजिक संपर्क, संचार और साथियों की स्वीकृति को बढ़ाया है, जिससे मुख्यधारा की कक्षाओं में उनके समावेश में योगदान मिला है (साहितोएटअल., 2024) (रिज़क और हिलियर, 2022)	हालाँकि, कुछ अध्ययनों की रिपोर्ट है कि डिजिटल पहुँच प्रथाएँ अनजाने में विद्यार्थियों को कलंकित कर सकती हैं या उनके संज्ञानात्मक भार को बढ़ा सकती हैं, जिससे समावेशन को संभावित रूप से कमज़ोर किया

पहलू	खूबियाँ	कमज़ोरियाँ
	(लुईसएटअल., 2005) (एलेक्सोपोलूएटअल., 2021)। डिजिटल उपकरण सहयोग को सुगम बनाते हैं और विद्यार्थियों को एक "आवाज़" प्रदान करते हैं, जिससे अधिक भागीदारी और आत्मविश्वास को बढ़ावा मिलता है (रिज़क और हिलियर, 2022) (क्रैनमर, 2020)। गेमिफिकेशन और इंटरैक्टिवप्लेटफ़ॉर्म का उपयोग प्रेरणा और जुड़ाव को बढ़ाता है (ÇİFTÇİ, 2024) (वुलंडारीएटअल., 2024)।	जा सकता है (क्रैनमर, 2020)। विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ता समूहों में संतुष्टि और जुड़ाव के स्तर में भिन्नता के प्रमाण भी मौजूद हैं, जो दर्शाता है कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी समाधान सार्वभौमिक रूप से प्रभावी नहीं हैं (पंगगाबीनएटअल., 2024)। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के सामाजिक लाभों का अक्सर कम अध्ययन किया जाता है या उनका सटीक मापन नहीं किया जाता है (रिज़क और हिलियर, 2022)।
शैक्षणिक रणनीतियाँ और शिक्षक प्रशिक्षण मॉडल	अनुसंधान लाभों को अधिकतम करने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी सामर्थ्य को समावेशी शैक्षणिक दृष्टिकोणों, जैसे कि यूनिवर्सल डिज़ाइन फ़ॉरलर्निंग (यूडीएल) के साथ संरेखित करने के महत्व को रेखांकित करता है (मेंडोज़ा, 2022) (ÇİFTÇİ, 2024) (रुएडाएटअल., 2025)। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग का समर्थन करने के लिए विशेष शिक्षकों, मुख्यधारा के शिक्षकों और परिवारों को शामिल करने वाले सहयोगी मॉडल की वकालत की जाती है (सेतियावानएटअल., 2023) (ज़ाहुतिना-विज़र और डेनिसियुक, 2024)। तकनीकी कौशल और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ता जागरूकता दोनों पर केंद्रित प्रशिक्षण कार्यक्रमों से शिक्षकों के आत्मविश्वास और शिक्षण गुणवत्ता में सुधार देखा गया है (साहू एटअल., 2024) (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023)।	इन आवश्यकताओं की पहचान के बावजूद, विविध शैक्षिक संदर्भों के अनुरूप व्यापक, साक्ष्य-आधारित प्रशिक्षण मॉडलों का अभाव है (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023)। कई शिक्षक अपर्याप्त तैयारी और निरंतर समर्थन की रिपोर्ट करते हैं, जिससे सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को प्रभावी ढंग से एकीकृत करने की उनकी क्षमता सीमित हो जाती है (विलियम्स, 2005) (ÇİFTÇİ, 2024)। साहित्य में मापनीय और टिकाऊ व्यावसायिक विकास ढाँचों पर शोध में एक कमी भी सामने आई है (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023)।
पद्धतिगत कठोरता और शोध अंतराल	अनुसंधान के ढांचे में गुणात्मक केस अध्ययन और साक्षात्कार से लेकर मात्रात्मकप्रयोगात्मक डिजाइन और व्यवस्थित समीक्षा तक कई तरह की पद्धतियां शामिल हैं, जो समृद्ध अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं (मसरुरोहएटअल., 2024) (दावारे और वैद्य, 2024) (स्टालमैकएटअल., 2023) (बाटानेरोएटअल., 2022)। व्यवस्थित समीक्षा और मेटा-विश्लेषण साक्ष्य संश्लेषण और सर्वोत्तम प्रथाओं की पहचान में योगदान करते हैं (प्रिस्टियानांटाएटअल., 2024) (बाटानेरोएटअल., 2022)।	हालांकि, कई अध्ययन छोटे नमूना आकार, नियंत्रण समूहों की कमी और छोटे हस्तक्षेप अवधि से ग्रस्त हैं, जो सामान्यीकरण को सीमित करते हैं (वुलंडारी और हरसिवी, 2024) इसके अतिरिक्त, शोध अक्सर विशिष्ट विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ताओं या प्रौद्योगिकियों पर केंद्रित होता है, जिसमें अंतःक्रियाशीलता और विविध शिक्षार्थी प्रोफाइल पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता (रामनाथनएटअल., 2024)। अधिक कठोर, बड़े पैमाने पर और प्रासंगिक रूप से विविध शोध की आवश्यकता स्पष्ट है।
नीति और अवसंरचना समर्थन	कुछ अध्ययन सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी अपनाने और समावेशी शिक्षा को सुगम बनाने में सहायक नीतियों और संस्थागत प्रतिबद्धता की सकारात्मक भूमिका पर प्रकाश डालते हैं (सेतियावानएटअल., 2023) (ग्रोनलंडएटअल., 2010) (श्रेष्ठा, एन.डी.)। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय पहलें जो वित्त पोषण, अवसंरचना और समन्वय प्रदान करती हैं, पहुंच और स्थिरता में सुधार करती हैं (ग्रोनलंडएटअल., 2010) (रामनाथनएटअल., 2024)।	इसके विपरीत, अपर्याप्त नीतिगत ढाँचे, खंडित कार्यान्वयन और हितधारकों के बीच समन्वय की कमी आम बाधाएँ हैं (ग्रोनलंडएटअल., 2010) (माचेकएटअल., 2024)। बुनियादी ढाँचे की सीमाएँ, विशेष रूप से ग्रामीण या कम संसाधन वाले क्षेत्रों में, एक महत्वपूर्ण बाधा बनी हुई हैं (बोंडारेंको, 2018) (बुडनिक और कोटिक, 2020)। साहित्य इन प्रणालीगत चुनौतियों से निपटने के लिए एकीकृत, बहु-स्तरीय रणनीतियों की माँग करता है।

सैद्धांतिक और शैक्षणिक निहितार्थ

सैद्धांतिक निहितार्थ

- संश्लेषित निष्कर्ष इस सैद्धांतिक आधार को पुष्ट करते हैं कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी और सहायक प्रौद्योगिकियाँ व्यक्तिगत और अनुकूली शिक्षण अनुभवों को सक्षम करके विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए शैक्षिक पहुँच, जुड़ाव और शैक्षणिक परिणामों को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाती हैं। यह विभेदित निर्देश और सीखने के लिए सार्वभौमिक डिज़ाइन (यूडीएल) पर मौजूदा सिद्धांतों का समर्थन करता है, जो प्रतिनिधित्व और जुड़ाव के विविध साधनों पर ज़ोर देता है (मसरुरोहएटअल., 2024) (एनाग्नोस्टोपोलूएटअल., 2021) (मेंडोज़ा, 2022)।
- विभिन्न अध्ययनों से प्राप्त साक्ष्य विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी विद्यार्थियों में आत्म-नियमन, प्रेरणा और सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की भूमिका पर प्रकाश डालते हैं, जो सामाजिक-रचनावादी सिद्धांतों के साथ सैरेखित होते हैं जो शिक्षार्थी-केंद्रित और सामाजिक रूप से संवादात्मक शैक्षिक वातावरण (स्टालमाचएटअल., 2023) (रिज़क और हिलियर, 2022) (एलेक्सोपोलूएटअल., 2021) की वकालत करते हैं।
- एआई, वीआर और एआर जैसी उभरती प्रौद्योगिकियों का एकीकरण, इमर्सिव और अनुकूली शिक्षण वातावरण प्रदान करके समावेशी शिक्षा में नए आयाम प्रस्तुत करता है, जो सैद्धांतिक रूप से प्रौद्योगिकी-मध्यस्थ मचान (चालकियाडाकिसएटअल., 2024) (मिक्रोपोलोस और इत्राकी, 2022) के माध्यम से वायगोत्स्की के समीपस्थ विकास क्षेत्र का विस्तार करता है।
- ये निष्कर्ष विशेष शिक्षा के पारंपरिक अभाव-आधारित मॉडलों को चुनौती देते हैं, यह प्रदर्शित करते हुए कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी विद्यार्थियों की शक्तियों और क्षमता की ओर ध्यान केंद्रित कर सकता है, स्वायत्तता और आत्म-प्रभावकारिता को बढ़ावा दे सकता है, जो समकालीन समावेशी शिक्षा प्रतिमानों (एडम और टैटनॉल, 2010) (एडम और टैटनॉल, 2012) के अनुरूप है।
- साहित्य सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग में शिक्षक क्षमता और प्रशिक्षण के महत्वपूर्ण प्रभाव को रेखांकित करता है, और सैद्धांतिक ढाँचों का समर्थन करता है जो शिक्षकों को प्रौद्योगिकी के शैक्षिक प्रभाव की मध्यस्थता में प्रमुख कारक के रूप में स्थापित करते हैं (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023) (साहू एटअल., 2024) (ÇİFTÇİ, 2024)।
- सकारात्मक सैद्धांतिक समर्थन के बावजूद, निष्कर्ष सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी समाधानों की सार्वभौमिक प्रयोज्यता में अंतराल को भी प्रकट करते हैं, जो विभिन्न प्रकार की विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ताओं और प्रौद्योगिकी प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले प्रासंगिक कारकों को संबोधित करने के लिए आगे सैद्धांतिक परिशोधन की आवश्यकता को इंगित करता है (बैगनएटअल., 2018) (क्रैनमर, 2020)।

शैक्षणिकनिहितार्थ

- शैक्षणिक अभ्यास के लिए, साक्ष्य बताते हैं कि प्रभावी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी एकीकरण के लिए व्यापक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है जो तकनीकी कौशल और समावेशी शैक्षणिक रणनीतियों, दोनों पर केंद्रित हों ताकि विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए लाभ अधिकतम हो सकें (साहू एटअल., 2024) (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023) (सीएफटीसी, 2024)।
- नीति निर्माताओं को सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी अवसंरचना और सहायक प्रौद्योगिकियों तक समान पहुँच को प्राथमिकता देनी चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि स्कूलों और संस्थानों के पास विविध शिक्षार्थियों, विशेष रूप से कम संसाधन वाले और विकासशील संदर्भों में, का समर्थन करने के लिए पर्याप्त संसाधन हों (ग्रोनलंडएटअल., 2010) (काओ, 2019) (माचेकएटअल., 2024)।
- समावेशी डिजिटल पाठ्यक्रम और शिक्षण प्लेटफ़ॉर्म के विकास और कार्यान्वयन की वकालत करते हैं जो सुलभता सुविधाओं को शामिल करते हैं और व्यक्तिगत शिक्षार्थी की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अनुकूलन की अनुमति देते हैं, जिससे भागीदारी और शैक्षणिक सफलता में वृद्धि होती है (पंगगाबीनएटअल., 2024) (सांचेज़-डियाज़ और मोर्गाडो, 2023) (वुलैंडारीएटअल., 2024)।
- सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी द्वारा सुगम शिक्षकों, परिवारों और विशेषज्ञों के बीच सहयोग अंतःविषय समर्थन और व्यक्तिगत शिक्षा योजना में सुधार कर सकता है, जो समावेशी शिक्षा प्रथाओं को बनाए रखने के लिए आवश्यक है (ज़ाहुतिना-विज़र और डेनिसियुक, 2024) (कैम्पाडोएटअल., 2023)।
- एआई और वीआर जैसी उभरती प्रौद्योगिकियों को अपनाने के साथ-साथ नैतिक दिशानिर्देश और लागत प्रभावी रणनीतियाँ भी होनी चाहिए ताकि सामर्थ्य, तकनीकी जटिलता और शिक्षक की तत्परता से संबंधित बाधाओं को कम किया जा सके (चालकियाडाकिसएटअल., 2024) (विनोद एटअल., 2024)।
- सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी हस्तक्षेपों के दीर्घकालिक प्रभाव का मूल्यांकन करने और कार्यान्वयन मॉडल को परिष्कृत करने के लिए निरंतर निगरानी और अनुसंधान आवश्यक है जो विशेष जरूरतों वाले विद्यार्थियों की बढ़ती जरूरतों को पूरा करते हैं, टिकाऊ और स्केलेबलसमावेशी शिक्षा समाधान सुनिश्चित करते हैं (मुख्तारकीज़ीएटअल., एन.डी.) (वुलैंडारीएटअल., 2024) (फर्नांडीज-सेंरेरोएटअल., 2023)।

निष्कर्ष: साहित्य का समग्र संग्रह विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समावेशी शिक्षा पर सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी) के महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव को रेखांकित करता है। अनुकूली शिक्षण मॉड्यूल, सहायक प्रौद्योगिकी और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म सहित

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी हस्तक्षेप, विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ताओं की एक विस्तृत श्रृंखला में शैक्षणिक उपलब्धि, प्रेरणा और जुड़ाव में लगातार सुधार प्रदर्शित करते हैं। ये प्रौद्योगिकी व्यक्तिगत शिक्षार्थी प्रोफाइल को संबोधित करके, पाठ्यक्रम सामग्री तक बेहतर पहुँच को सक्षम करके और स्वायत्तता और स्वतंत्र शिक्षण को बढ़ावा देकर व्यक्तिगत शिक्षण अनुभवों को सुगम बनाती हैं। इसके अलावा, शैक्षणिक लाभों से परे, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी संचार, सहकर्मी संपर्क और भागीदारी को बढ़ाकर सामाजिक समावेशन का समर्थन करती है, जिससे एक अधिक न्यायसंगत और आकर्षक शैक्षिक वातावरण में योगदान मिलता है।सहायक प्रौद्योगिकियों की एक विविध श्रृंखला का दस्तावेजीकरण किया गया है, जिसमें ब्रेल उपकरणों और स्क्रीन रीडर जैसी कम तकनीक वाली सहायता से लेकर कृत्रिम बुद्धिमत्ता, आभासी वास्तविकता और रोबोटिक्स जैसे उन्नत नवाचार शामिल हैं। इन उपकरणों की अनुकूलनशीलता और अनुकूलन उनकी प्रभावशीलता के केंद्र में हैं, जिससे शैक्षिक पद्धतियाँ विद्यार्थियों की विविध आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा कर पाती हैं। उभरती प्रौद्योगिकियाँ इमर्सिव और अत्यधिक वैयक्तिकृत शिक्षण अनुभवों की संभावनाएँ दर्शाती हैं, हालाँकि लागत, पहुँच और विशिष्ट प्रशिक्षण की आवश्यकता जैसे कारकों के कारण इनका उपयोग अक्सर सीमित होता है।

इन लाभों के बावजूद, साहित्य में ऐसी महत्वपूर्ण चुनौतियाँ सामने आई हैं जो समावेशी शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के इष्टतम कार्यान्वयन में बाधा डालती हैं। शिक्षकों की तैयारी और निरंतर व्यावसायिक विकास सफल एकीकरण के महत्वपूर्ण निर्धारक बनकर उभरे हैं; अपर्याप्त प्रशिक्षण और सीमित तकनीकी सहायता अक्सर तकनीकी उपकरणों के प्रभावी उपयोग को सीमित कर देते हैं। बुनियादी ढाँचे की कमी, विशेष रूप से संसाधन-विवश या विकासशील परिस्थितियों में, पहुँच संबंधी समस्याओं को और बढ़ा देती है। मनोवृत्ति संबंधी बाधाएँ, अपर्याप्त नीतिगत ढाँचे और समन्वित संस्थागत समर्थन का अभाव भी व्यापक रूप से अपनाने और स्थिरता में बाधा डालते हैं। इसके अलावा, विभिन्न विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी ता समूहों के बीच सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के उपयोग और परिणामों में असमानताएँ प्रौद्योगिकी के माध्यम से सार्वभौमिक समावेशन प्राप्त करने की जटिलता को उजागर करती हैं।शैक्षणिक दृष्टि से, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को समावेशी शिक्षण ढाँचों, जैसे कि यूनिवर्सल डिज़ाइन फॉरलर्निंग, के साथ जोड़ना और शिक्षकों, विशेषज्ञों और परिवारों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के प्रभाव को अधिकतम करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। हालाँकि, शिक्षक प्रशिक्षण और मापनीय व्यावसायिक विकास के लिए व्यापक, साक्ष्य-आधारित मॉडलों का अभाव बना हुआ है। पद्धतिगत रूप से, इस क्षेत्र को सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की प्रभावकारिता को प्रभावित करने वाले दीर्घकालिक प्रभावों और प्रासंगिक चरों को बेहतर ढंग से समझने के लिए अधिक गहन, दीर्घकालिक और बड़े पैमाने के अध्ययनों से लाभ होगा।संक्षेप में, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी सीखने के परिणामों में सुधार, सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देने और विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए व्यक्तिगत शिक्षण पद्धति का समर्थन करके समावेशी शिक्षा को बढ़ाने में काफी आशाजनक है। इस क्षमता को साकार करने के लिए उन्नत शिक्षक प्रशिक्षण, बुनियादी ढाँचे में निवेश, सहायक नीतियों और विविध शैक्षिक संदर्भों और शिक्षार्थी प्रोफाइल पर केंद्रित निरंतर शोध प्रयासों के माध्यम से प्रणालीगत बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची :

1. Abbott, C., & Galloway, J. (2002). Ict: An aid to inclusion? Reflections on the potential of ict for the changing role of the special school. https://doi.org/10.1007/978-0-387-35663-1_19
2. Adam, A. (2010). Determining an e-learning model for students with learning disabilities: An analysis of web-based technologies and curriculum.
3. Adam, T. (2010). Determining an e-learning model for students with learning disabilities: An analysis of web-based technologies and curriculum.
4. Adam, T., & Tatnall, A. (2010). Use of ict to assist students with learning difficulties: An actor-network analysis. https://doi.org/10.1007/978-3-642-15378-5_1
5. Adam, T., & Tatnall, A. (2012). School children with learning disabilities: An actor-network analysis of the use of ict to enhance self-esteem and improve learning outcomes. *International Journal of Actor-network Theory and Technological Innovation, 4* (2), 10-24. https://doi.org/10.4018/JANTTI.2012040102
6. Adam, T., & Tatnall, A. (2014). The impact of ict in educating students with learning disabilities in australian schools: An ant approach. https://doi.org/10.4018/978-1-4666-6126-4.CH001
7. Adam, T., & Tatnall, A. (2017). The value of using ict in the education of school students with learning difficulties. *Education and Information Technologies, 22* (6), 2711-2726. https://doi.org/10.1007/S10639-017-9605-2
8. Ahmad, S. R. (2022). Impact of integration of inclusive education and information and communication technology on the learning process of a child with down syndrome. *Indian Journal of Pure & Applied Biosciences, 10* (5), 28-34. https://doi.org/10.18782/2582-2845.8946
9. Akopyan, M., Kotov, S. V., &Ogannisyan, L. (2019). Role of information and communication technologies in modern rehabilitation process of inclusive education. https://doi.org/10.2991/TPHD-18.2019.3
10. Aksal, F. A., & Gazi, Z. A. (2015). Examination on ict integration into special education schools for developing countries.. *Turkish Online Journal of Educational Technology, 14* (3), 70-72.
11. Al-Ammary, J., Al-Haiki, F., & Al-Muqahwi, K. (2017). The impact of assistive technology on down syndrome students in kingdom of bahrain.. *Turkish Online Journal of Educational Technology, 16* (4), 103-119.

12. Al-Gawhary, W., &Kambouri, M. (2012). The impact of ict as another route to overcome learning barriers for students with sen: A case study in an egyptian context.
13. Alexopoulou, A., Batsou, A., &Drigas, A. (2021). The contribution of information and communication technologies to the improvement of the adaptive skills and the social inclusion of students with intellectual disability. *Research, Society and Development, 10*(4), . https://doi.org/10.33448/RSD-V10I4.13046
14. Ali, H. H., Aftab, M. J., & Chaudhry, H. (n.d.). Using assistive technology to differentiate and accommodate students with special needs facing learning difficulties in mathematics. https://doi.org/10.62345/jads.2024.13.3.106
15. Anagnostopoulou, P., Lorentzou, G., &Drigas, A. (2021). Icts in inclusive education for learning disabilities. *Research, Society and Development, 10*(9), . https://doi.org/10.33448/RSD-V10I9.18230
16. Bagon, S., Gačnik, M., &Starčič, A. I. (2018). Information communication technology use among students in inclusive classrooms. *International Journal of Emerging Technologies in Learning (ijet), 13*(06), 56-72. https://doi.org/10.3991/IJET.V13I06.8051
17. Baig, I. F. (2013). Examining the impact information communication technology (ict) has on adolescents with disabilities. *International Journal of Information and Education Technology*null, 597-601. https://doi.org/10.7763/IJIET.2013.V3.343
18. Bailey, J., & Weippert, H. (1992). Using computers to improve the language competence and attending behaviour of deaf aboriginal children. *Journal of Computer Assisted Learning, 8*(2), 118-127. https://doi.org/10.1111/J.1365-2729.1992.TB00395.X
19. Bain, A., & Parkes, R. J. (2006). Curriculum authoring tools and inclusive classroom teaching practice: A longitudinal study. *British Journal of Educational Technology, 37*(2), 177-189. https://doi.org/10.1111/J.1467-8535.2005.00527.X
20. Batanero, J. M. F., Montenegro-Rueda, M., Fernández-Cerero, J., & García-Martínez, I. (2022). Assistive technology for the inclusion of students with disabilities: A systematic review. *Educational Technology Research and Development, 70*(5), 1911-1930. https://doi.org/10.1007/s11423-022-10127-7
21. Batanero, J. M. F., Rueda, M. M., Cerero, J. F., & Martínez, I. G. (2019). Impact of the information and communication technologies on the education of students with down syndrome: A bibliometric study (2008-2018). *European journal of educational research, 9*(1), 79-89. https://doi.org/10.12973/EU-JER.9.1.79
22. Benigno, V. (2011). Percorsi di didatticainclusiva con l'usodelle tic: Il progettoaessedi inclusive learning plans using ict: The aessedi project.
23. Bondarenko, T. V. (2018). Using information and communication technologies for providing accessibility and development of inclusive education. https://doi.org/10.33407/itlt.v67i5.2241
24. Bondarenko, T. V. (2018). Using information and communication technologies for providing accessibility and development of inclusive education. *Information Technologies and Learning Tools, 67*(5), 31-43. https://doi.org/10.33407/ITLT.V67I5.2241
25. Brodin, J., & Lindstrand, P. (2008). Ict and inclusive education in primary schools - pupils with motor disabilities. *Journal of Assistive Technologies, 2*(3), 16-23. https://doi.org/10.1108/17549450200800022
26. Brown, D., McHugh, D., Standen, P., Evett, L. J., Shopland, N., & Battersby, S. (2011). Designing location-based learning experiences for people with intellectual disabilities and additional sensory impairments. *Computer Education, 56*(1), 11-20. https://doi.org/10.1016/J.COMPEDU.2010.04.014
27. Budnyk, O., & Kotyk, M. (2020). Use of information and communication technologies in the inclusive process of educational institutions. *Journal of Vasyl Stefanyk Precarpathian National University, 7*(1), 15-23. https://doi.org/10.15330/JPNU.7.1.15-23
28. Campado, R. J., Toquero, C. M. D., & Ulanday, D. M. P. (2023). Integration of assistive technology in teaching learners with special educational needs and disabilities in the philippines. *International journal of professional development, learners and learning, 5*(1), ep2308-ep2308. https://doi.org/10.30935/ijpdll/13062
29. Cano, M., & Sanchez-Iborra, R. (2015). On the use of a multimedia platform for music education with handicapped children. *Computer Education, 87*null, 254-276. https://doi.org/10.1016/J.COMPEDU.2015.07.010
30. Cao, C. T. M. (2019). Information and communication technologies in inclusive education: Selected practices in asia. *Journal of Education and Learning, 8*(6), 159-168. https://doi.org/10.5539/JEL.V8N6P159
31. Carvalho, A. L. B. D., Moura, L. D., Marcucci, L., Knak, L. D., Claro, S. V., Reis, M., Gonçalves, A. C. D. S., Lavander, T. L., & Gonçalves, A. (2024). Educaçãoinclusiva e o uso de tecnologiasassistivas para alunosautistas. *Lumen et Virtus, 15*(43), 8205-8213. https://doi.org/10.56238/levv15n43-043
32. Chalkiadakis, A., Seremetaki, A., Kanellou, A., Kallishi, M., Morfopoulou, A., Moraitaki, M., &Mastrokoukou, S. (2024). Impact of artificial intelligence and virtual reality on educational inclusion: A systematic review of technologies supporting students with disabilities. *Neveléstudomány*null, . https://doi.org/10.3390/educsci14111223
33. Chen, M. C., Wu, T., Lin, Y. L., Tasi, Y. H., & Chen, H. C. (2009). The effect of different representations on reading digital text for students with cognitive disabilities. *British Journal of Educational Technology, 40*(4), 764-770. https://doi.org/10.1111/J.1467-8535.2008.00869.X
34. Cheng, Y., Chiang, H., Ye, J., & Cheng, L. (2010). Enhancing empathy instruction using a collaborative virtual learning environment for children with autistic spectrum conditions. *Computer Education, 55*(4), 1449-1458. https://doi.org/10.1016/J.COMPEDU.2010.06.008

35. ÇİFTÇİ, A. (2024). Ict's role in supporting students with send: Insights from primary mainstream classrooms in england. *European Journal of Special Needs Education*null, 1-16. https://doi.org/10.1080/08856257.2024.2437903
36. Cranmer, S. (2020). Disabled children's evolving digital use practices to support formal learning. A missed opportunity for inclusion. *British Journal of Educational Technology, 51* (2), 315-330. https://doi.org/10.1111/BJET.12827
37. Daware, S. V., & Vaidya, R. (2024). A tech-enabled approach to teaching students with learning disabilities: A data analysis-based study. *ShodhKosh Journal of Visual and Performing Arts, 5* (6), . https://doi.org/10.29121/shodhkosh.v5.i6.2024.2246
38. Demianyuk, V. V., &Mikhasyuk, K. V. (2022). Peculiarities of informatization of inclusive education. *ВісникЗапорізькогонаціональногоуніверситету*(2), 176-180. https://doi.org/10.26661/2786-5622-2022-2-26
39. Diakite, Y. (2023). Les ntic au service de l'éducation inclusive: Favoriserl'accès à l'éducation pour toustous. https://doi.org/10.55595/ydia2023
40. Electronic technologies to ensure individual learning of education seekers with special needs. https://doi.org/10.57125/fs.2023.03.20.01
41. Encarnação, P., Leite, T., Nunes, C. D. M., Ponte, M. N. D., Adams, K., Cook, A. M., Caiado, A., Pereira, J. L., Piedade, G., & Ribeiro, M. D. A. (2017). Using assistive robots to promote inclusive education.. *Disability and Rehabilitation: Assistive Technology, 12* (4), 352-372. https://doi.org/10.3109/17483107.2016.1167970
42. Encarnação, P., Leite, T., Nunes, C., Ponte, M. N. D., Adams, K., Cook, A. M., Caiado, A., Pereira, J. S., Piedade, G., & Ribeiro, M. A. (2016). Using assistive robots to promote inclusive education. https://doi.org/10.6084/m9.figshare.3201406
43. Fawcett, A. J., Nicolson, R. I., & Morris, S. (1993). Computer-based spelling remediation for dyslexic children. *Journal of Computer Assisted Learning, 9* (3), 171-183. https://doi.org/10.1111/J.1365-2729.1993.TB00103.X
44. Fernández-Cerero, J., Montenegro-Rueda, M., &Batanero, J. M. F. (2023). Impact of university teachers' technological training on educational inclusion and quality of life of students with disabilities: A systematic review. *International Journal of Environmental Research and Public Health, 20* (3), 2576-2576. https://doi.org/10.3390/ijerph20032576
45. Freire, A. P., Linhalis, F., Bianchini, S. L., Fortes, R. P. D. M., & Pimentel, M. D. G. C. (2010). Revealing the whiteboard to blind students: An inclusive approach to provide mediation in synchronous e-learning activities. *Computer Education, 54* (4), 866-876. https://doi.org/10.1016/J.COMPEDU.2009.09.016

प्रो. अमर्त्य सेन एवं गाँधी जी के आर्थिक विचारों का मूल्यांकन एवं समीक्षा

मोहम्मद इरफान*

शोध सारांष :

विश्व इतिहास में किसी समाज में राष्ट्रीय आग्रहों को दीर्घ कालीन प्रतिबद्धता तथा अनवरत लोक सौजन्य यदि प्राप्त हुआ तो भारत इस दृष्टांत का एकमात्र परिचायक है। जब किसी समाज को परतंत्रता एवं स्वाभिमानी अस्तित्व के मध्य निर्णायक दिशा की ओर अग्रसर होना अनिवार्य दायित्व बन जाये तो राष्ट्रवादी आग्रह ही दर्शन, चिन्तन तथा कर्मण्यता के प्रतिष्ठित प्रतिमानों का सृजन स्तोत होता है। प्रो0 अमर्त्य सेन एवं गाँधी दोनों के दायित्वों, विकल्प प्रस्तुति एवं संघर्ष निर्वचन में इस संवेदना के प्रमाण हैं। प्रो0 अमर्त्य सेन को नई शताब्दी का दास कैपीटल कहा जा रहा है। और गांधी जी आज के भारत के कर्णधार हैं। अमर्त्य सेन और गांधी जी दोनों ही आर्थिक राष्ट्रीयवाद के विचारक हैं। वे भारत को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ और आत्म निर्भर बनाना चाहते हैं। अतः दोनों का ही उद्देश्य आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना है, आर्थिक दृष्टि से देश को विकसित करना और आत्म निर्भर बनाना है। गांधी जी अपने समय में अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ और विकसित करने का प्रयास किया। वर्तमान युग प्रो0 अमर्त्य सेन के कार्यो और विचारों से अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ रूप प्रदान की ओर अग्रसर है। और इसे आत्मनिर्भर बनाकर विकासशील देशों की श्रेणी में खड़ा करने का पूरा–पूरा प्रयास कर रहे हैं आज जब हमारे सामने इतनी समस्याएं हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि हम देखें कि वर्तमान में गांधी जी और अमर्त्य सेन जी के विचारों और लेखों में विश्व शान्ति को भी स्थान दिया। प्रो0 सेन ने भी अपने विचारों में पाश्चात्य सभ्यता को स्थान दिया है तथा उसके पक्षधर भी हैं। अतः इनके विचारों में भारत के विकास का सार छुपा हुआ है।

महत्वपूर्ण शब्द : प्रो0 अमर्त्य सेन, गांधी जी, आर्थिक विचार, शिक्षा

प्रस्तावना :–

राष्ट्रीय आन्दोलन की चुनौतियाँ एकाकी रूप से राजनैतिक नहीं थे। व्यापक स्तर पर लोकजीवन के प्रत्येक आयाम से इन चुनौतियों की संलग्नता, सामयिक यथार्थ एवं व्यवस्थात्मक दायित्वों के प्रति सजगता से समीकृत थी। विश्व इतिहास में किसी समाज में राष्ट्रीय आग्रहों को दीर्घ कालीन प्रतिबद्धता तथा अनवरत लोक सौजन्य यदि प्राप्त हुआ तो भारत इस दृष्टांत का एकमात्र परिचायक है। विचार इंगितीकरण, दर्शन गम्भीर्य एवं कर्त्तव्यता का समवेत स्वर, आधुनिक भारतीय चिन्तन की अस्मिता का मानक है। वैसे भी जब किसी समाज को परतंत्रता एवं स्वाभिमानी अस्तित्व के मध्य निर्णायक दिशा की ओर अग्रसर होना अनिवार्य दायित्व बन जाये तो राष्ट्रवादी आग्रह ही दर्शन, चिन्तन तथा कर्मण्यता के प्रतिष्ठित प्रतिमानों का सृजन स्तोत होता है। प्रो0 अमर्त्य सेन एवं गाँधी दोनों के दायित्वों, विकल्प प्रस्तुति एवं संघर्ष निर्वचन में इस संवेदना के प्रमाण हैं।

गाँधी के चिन्तन एवं कर्मण्यता को मूलभूत आध्यात्मीकरण से विलग्न नहीं माना जा सकता। किसी पंथ, विश्वास एवं परिपाटी से मुक्त, आध्यात्मिक मूल्यों की शाश्वत निर्णायकता का परिचायक हैं साधनों की शुचिता, प्राथमिकता एवं व्यक्ति की गुणवत्ता ही आध्यात्किता की परिचायक मानी गयी।

प्रो0 अमर्त्य सेन को नई शताब्दी का दास कैपीटल कहा जा रहा है। और गांधी जी आज के भारत के कर्णधार हैं। दोनों ने ही भारत के आर्थिक विकास पर ध्यान केन्द्रित किया है। अमर्त्य सेन किस हद तक गाँधी जी के समर्थक थे और किस हद तक विरोधी–इस बात का निर्णय आन्तरिक तथ्यों के आधार पर किया जा सकता है। इन दोनों के पारस्परिक विरोध को जब हम मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से देखते हैं, तो उनके बीच की असमानताएं कम जान पड़ती है। लेकिन इन दो व्यक्तियों में एक गहन अंतर्विरोध का आभास भी होता है, लेकिन ऐसा नहीं है, फिर यहां पर हमारा दृष्टिकोण मनोवैज्ञानिक नहीं है, हमें इनके आर्थिक विचारों में समानता को देखना है। वैसे मनोवैज्ञानिक आधार पर इतना अन्तर तो स्पष्ट है कि अमर्त्य सेन दार्शनिक है और गांधी जी धार्मिक सन्त थे। अमर्त्य सेन यर्थाथवादी चिन्तक है। गाँधी जी की नैतिक दृष्टि धर्म के आधार

* शोध छात्र (शिक्षा शास्त्र), डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ0प्र0)

पर करते थे और प्रो0 सेन का यथार्थ चिन्तन वस्तुवादी है। कदाचित् एक बिन्दु ऐसा अवश्य है जहाँ दोनों एक तथ्य पर पूर्णतया सहमत है–दोनों निःस्वार्थ भावना से देश तथा मानवता के हित चिन्तक है, यहाँ दोनों की आस्थाएं और चिन्ताएं एक हैं।

गाँधी जी की दृष्टि यथार्थ को स्वीकारती अवश्य थी किंतु उसका समाधान भौतिकता के आधार पर नहीं, आध्यात्मिकता के आधार पर चाहती थी। गांधी जी भारत के वेदान्त दर्शन को मानव संस्कृति का सत्य मानते थे और अमर्त्य सेन जी पश्चिमी सभ्यता के आदर्शो से प्रभावित हुये हैं। गांधी जी का राष्ट्रवाद भारतीय मूल्यों पर आधारित था। गांधी जी की मूल चिन्ता भारत को भारतीयता के आदर्शो के अनुरूप ढालने की थी और प्रो0 सेन की चिन्ता है भारत को विश्व के उन्नतिशील राष्ट्रों के समकक्ष बनाना। दोनों के रास्ते कुछ अलग–अलग अवश्य हैं लेकिन मंजिल एक है और यह है भारत का विकास, हर दृष्टि और हर क्षेत्र से। मनोवैज्ञानिक आधार पर उनमें कुछ अन्तर अवश्य है, लेकिन इन तमाम अन्तरों के बावजूद अमर्त्य सेन और गांधी जी के कार्यो तथा उनके महत्व को भुलाया नहीं जा सकता। दोनों में असमानताओं के बावजूद भी दोनों एक ही लक्ष्य की ओर अग्रसर हुये हैं।

गांधी जी और अमर्त्य सेन जी के विचारों में ही सहमतियाँ हैं और कही असहमतियाँ और असहमति का कारण केवल वातावरण व समय का प्रभाव ही है। गांधी जी भारत को भारत की परिस्थितियों के अनुरूप ही विकास की ओर अग्रसर करना चाहते हैं। दोनों ही विचारकों ने अर्थव्यवस्था में जागरूकता लाने के लिए अपने–अपने विचार दिये।

अमर्त्य सेन और गांधी जी दोनों ही आर्थिक राष्ट्रीयवाद के विचारक हैं। वे भारत को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ और आत्म निर्भर बनाना चाहते हैं। जिससे कि राजनैतिक स्वतन्त्रता का वास्तविक स्वरूप प्राप्त किया जा सके। प्रो0 सेन का आग्रह है कि स्वातंत्र्य की विकास के सर्वोपरि ध्येय के रूप में अन्तर्निहित महत्ता को मानवीय स्वातंत्र्य में अन्याय स्वातंत्र्यों की सहायक प्रभावोत्पादकता से पृथक् रूप में समझ लेना बहुत ही आवश्यक है। प्रो0 सेन ने व्यक्ति की स्वतंत्रता को विकास का एक प्राथमिक ध्येय माना है तथा इस को विकास का प्रमुख साधन भी। इन्हीं दो पक्षों को सारभूत अथवा रचनाकारी तथा साधनस्वरूप अथवा सहायक स्वरूप भी कहा जा सकता है। रचनाकारी स्वरूप में जनजीवन को समृद्धिशील बनाने में योगदान के रूप में स्वातंत्र्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इन सारभूत स्वातंत्र्यों में भूख, कुपोषण परिहार्य रूग्णता, अकाल मृत्यु आदि से बच पाने की बुनियादी क्षमताओं के साथ–साथ अक्षर एवं संख्या ज्ञान सम्पन्न होने, राजनीतिक भागीदारी तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आदि को भी सम्मिलित माना गया है। इस प्रकार स्वातंत्र्य के इस रचनाकारी स्वरूप में विकास उपर्युक्त एवं अन्य स्वातंत्र्यों के संवर्धन और सम्पोषण की प्रक्रिया का ही नाम है। अतः दोनों का ही उद्देश्य आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना है, आर्थिक दृष्टि से देश को विकसित करना और आत्म निर्भर बनाना है। गांधी के अनुसार भविष्य आसान, आरामदायक नहीं था वरन् अनेक कठिनाईयों से पूर्ण था। उनके लिए भारत की सेवा करने का अर्थ था सैकड़ों शोषित लोगों के लिए सेवा करना, अमर्त्य सेन और गांधी जी दोनों ने ही निःस्वार्थ भाव से भारत की सेवा की है।

प्रो0 अमर्त्य सेन जी भारत के ग्रामीण क्षेत्रों से बहुत प्रभावित हुये हैं इन्होंने कहा कि भारत के राज्यों में अधिकतर जनसंख्या कृषि पर आधारित है प्रो0 सेन ने केरल की जन सक्रियता के अनुभवों से नीतिगत सबक सीखते हुये दो विशेष रूप से उपयोगी विशिष्टताओं पर ध्यान देना आवश्यक बताया है। एक तो निम्न जातियों एवं वर्गो के लिये शिक्षा के प्रसार में राजनीति सक्रियता का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारत में राजनीतिक नेतृत्व ने सामान्यतः प्राथमिक शिक्षा के प्रति उपेक्षा भाव ही प्रदर्शित किया हैं किंतु केरल इस दृष्टि से बहुत बड़ा अपवाद रहा है। वहां के सुखद् परिणामों ने इस अपवादी स्वरूप को और महिमामंडित किया है। अतः हम यह कह सकते हैं कि जन–जन की मौलिक क्षमताओं के संवर्धन के लक्ष्य की सिद्धि में राजनीतिक नेतृत्व, पहलकदमी और जन सामान्य की भागीदारी के बहुत प्रभावी होने का महत्व प्रमाणित होने के अनेक साक्ष्य हमें केरल प्रान्त के अनुभवों से मिल सकते हैं। ये सबक केवल राजकर्ताओं एवं नीति निर्धारकों के लिए ही उपयोगी नहीं हैं, विपक्षी दल एवं राजनीतिक दृष्टि से सचेत जन–सामान्य भी इनसे लाभान्वित हो सकते हैं।

गांधी जी गांव को ही भारत का स्वर्ग मानते थे उन्होंने कहा कि यह समाज गांव में बसे हुए समुदायों का होगा जिसमें ऐच्छिक सहयोग के आधार पर लोग प्रतिष्ठित ओर शांतिमय् जीवन बितायेंगे, प्रत्येक गांव एक गणतन्त्र होगा, जिसमें पंचायतों को पूर्ण शक्तियाँ प्रदान प्राप्त होगी और जो अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा करेंगी, अपना शासन स्वयं करेंगी, यहां तक कि अपनी सुरक्षा करना भी इनका ही कार्य होगा,

जिसका आधार बहुत बड़ा हो और ऊपरी छोर बहुत छोटा, यह एक सागरीय चक्र की भांति होगा, जिसका केन्द्र व्यक्ति होगा, जो ग्राम के लिए बलिदान होने को तत्पर होगा इस प्रकार कुल संगठन की इकाई का जीवन होगा जिसकी इकाई व्यक्ति होगा, बाहरी सर्किल आतंरिक सर्किलों को दबाएंगे नहीं बल्कि उनको शक्ति प्रदान करेंगे और उनसे स्वयं भी शक्ति प्राप्त करेंगे इस सामाजिक संगठन का सबसे बड़ा गुण व्यक्ति की स्वतंत्रता होगा, इस विचार से तो प्रो0 सेन भी सहमत थे परंतु यहां गांधी जी का विचार था कि राज्य की समाज में कोई आवश्यकता नहीं होगी। इससे प्रो0 अमर्त्य सेन पूर्णतः अहसमत हैं।

प्रो0 अमर्त्य सेन जी ने भारत के आर्थिक तथा सामाजिक विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है प्रो0 सेन जी ने अर्थशास्त्र को जन–कल्याण की दिशा में मोड़कर नये बदलते युग को एक मौलिक महत्व का योगदान दिया है। भारत में आर्थिक विकास के कार्यो को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित करने का प्रयास किया है इस परिप्रेक्ष्य में सामाजिक एवं आर्थिक सुयोग एवं अवसरों की महती भूमिका रहती है जो भली प्रकार कार्य कर रही बाजार व्यवस्था एवं लाभप्रद विनिमय द्वारा सुलभ हो जाती है। प्रो0 सेन ने मानवीय योग्यताओं – क्षमताओं की मूलभूत भूमिका और उनकी प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं, स्वामित्व अधिकारों, सामाजिक क्रमानुसार वर्गीकरण, स्त्री–पुरूष, सम्बन्धों और सामाजिक – राजनीतिक सहयोग, स्पर्धा एवं विरोध के अवसरों पर निर्भरता की बात भी उठाई है।

गांधी जी ने अपनी सत्य– साधन के साथ–साथ एक और बड़ा काम किया समाज का सुधार, गरीबी का उन्मूलन और देश को विदेशी परतंत्रता से मुक्त कराने का संघर्ष किया। गांधी जी का अर्थशास्त्र एक नया कार्यक्रम रखता है, यही से मानवीय अर्थशास्त्र का उदय हुआ। अर्थशास्त्र का विज्ञान तथा दर्शक बनकर कोई विज्ञान की भांति प्रयोगशाला का विषय ही नहीं रह जाता और न तो कोई दर्शन की तरह व्यवहार विमुख ही हो जाता है अपितु एक व्यवहार शास्त्र बनकर आता है। गांधी जी गांव की अर्थव्यवस्था को पुष्ञ तथा प्रबल बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया। गांधी जी की विचारधारा भारत के गांवों और निचले वर्ग की विचारधारा को लेकर चली थी। उन्होंने गांवों के विकास को देश के विकास का आधार बनाया।

निष्कर्ष :–

आज हमारे देश की समक्ष अनेक समस्याऐं हैं, कठिनाईयां और विषमताएं हैं, जिनको कई नवीन योजनाओं द्वारा हल करने का प्रयास किया जा रहा है फिर भी हम उनका पूर्णतः समाधान करने में असमर्थ रहे हैं। गांधी जी अपने समय में अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ और विकसित करने का प्रयास किया। वर्तमान युग प्रो0 अमर्त्य सेन के कार्यो और विचारों से अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ रूप प्रदान की ओर अग्रसर है। और इसे आत्मनिर्भर बनाकर विकासशील देशों की श्रेणी में खड़ा करने का पूरा–पूरा प्रयास कर रहे हैं आज जब हमारे सामने इतनी समस्याएं हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि हम देखें कि वर्तमान में गांधी जी और अमर्त्य सेन जी के विचारों और लेखों में विश्व शान्ति को भी स्थान दिया। प्रो0 सेन ने भी अपने विचारों में पाश्चात्य सभ्यता को स्थान दिया है तथा उसके पक्षधर भी हैं। अतः इनके विचारों में भारत के विकास का सार छुपा हुआ है।

संदर्भ सूची :–

1. भारतीय राज्यों का विकास (एक प्रादेशिक अध्ययन) – भवानी शंकर बागला.
2. यंग इण्डिया 1930, जनवरी, 23 –(अंग्रेजी साप्ताहिक) पृ0 26.
3. भारत विकास की दिशाएं – भवानी शंकर बागला.
4. आर्थिक विकास की दिशाएं – भवानी शंकर बागला.
5. भारत विकास की दिशाएं – भवानी शंकर बागला.
6. आर्थिक विकास और स्वातन्त्र्य – भवानी शंकर बागला.
7. गाँधी जी आर्थिक विचारधारा हरिजन सेवक.
8. गाँधी अर्थनीति लेखक प्रो0 डा0 डी0डी0एन0 चतुर्वेदी.

स्वयं पोर्टल पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षकों के व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता व पूर्णता का अध्ययन

रेणू शर्मा*
प्रो. डॉ. अंशु भाटिया**

सारांश

शिक्षकों कीव्यवसायिक दक्षताओं को बेहतर बनाना किसी भी प्रभावी शिक्षा प्रणाली की आधारशिला है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार द्वारा शुरू किया गया स्वयं पोर्टल एक ऐसा डिजिटल मंच है जो शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों को निःशुल्क एवं गुणवत्तापूर्ण ऑनलाइन पाठ्यक्रम प्रदान करता है।इस शोध का मूल उद्देश्य यह समझना है कि प्रशिक्षक इस मंच पर उपलब्ध व्यावसायिक विकास पाठ्यक्रमों में किस स्तर तक भाग ले रहे हैं और कितने लोग उन्हें सफलतापूर्वक पूरा कर पा रहे हैं। इसके लिए 350 प्रशिक्षकों का चयन कर, उनके अनुभवों, सहभागिता स्तर, पाठ्यक्रम पूर्णता दर और उससे प्राप्त लाभों का विश्लेषण किया गया।

निष्कर्षों से यह सामने आया कि अधिकांश प्रशिक्षक इन पाठ्यक्रमों से लाभान्वित हुए हैं–खासकर डिजिटल शिक्षण विधियों और आकलन तकनीकों के संदर्भ में। फिर भी, समय की कमी, तकनीकी समस्याएँ और संस्थागत सहयोग की अनुपस्थिति जैसी चुनौतियाँ कई प्रशिक्षकों के लिए बाधक बनीं।इस अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि यदि प्रशिक्षकों को उचित तकनीकी सहायता, लचीलापन और प्रेरणा मिल सके तो न केवल उनकी सहभागिता बढ़ सकती है, बल्कि पाठ्यक्रमों की पूर्णता दर में भी सुधार हो सकता है। यह शोध नीति निर्धारकों को इस दिशा में आवश्यक सुधारों की ओर संकेत करता है ताकि डिजिटल प्लेटफॉर्म आधारित शिक्षक प्रशिक्षण और अधिक प्रभावशाली बन सके।

मुख्य शब्दावली –स्वयं पोर्टल, सलंग्नता, पूर्णता।

प्रस्तावना

भारत सरकार ने 21वीं सदी की ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में शिक्षा के सार्वभौमिकरण और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से SWAYAM (Study Webs of Active&Learning for Young Aspiring Minds) पोर्टल की स्थापना की। SWAYAM पोर्टल का उद्घाटन 9 जुलाई 2017 को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति द्वारा किया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने SWAYAM पाठ्यक्रमों को क्रेडिट ट्रांसफर के लिए मान्यता दी है। SWAYAM के 9 राष्ट्रीय समन्वयक है जिनका उद्देश्य ई–विषयवस्तु विकसित करना,ऑनलाइन पाठ्यक्रम प्रदान करना,और स्वयं पर पाठ्यक्रम मूल्यांकन प्रक्रियाओं का प्रबंध करना शामिल है। स्वयं पोर्टल पर उपलब्ध पाठ्यक्रम के चार भाग है। (1) वीडियो व्याख्यान (2) ई–पाठ्य सामग्री जिसे डाउनलोड/प्रिंटकिया जा सकता है।(3)आत्म–मूल्यांकन के लिए प्रश्नोत्तरी और कार्यभार। (4) ऑनलाइन चर्चा मंच।यह पोर्टल डिजिटल शिक्षा के माध्यम से किसी भी स्थान और समय पर सीखने की सुविधा प्रदान करता है, जिससे शिक्षा में समानता, समावेशिता और गुणवत्ता को बढ़ावा मिलता है।

भारत सरकार द्वारा विकसितस्वयं (SWAYAM) पोर्टल का उद्देश्य देश के विद्यार्थियों को गुणवत्तापूर्ण ऑनलाइन शिक्षण सामग्री निःशुल्क उपलब्ध कराना है। इस पोर्टल की पहुँच और सहभागिता से सम्बन्धित हाल के आँकड़े निम्न प्रकार हैं।जनवरी 2024 तक SWAYAM पोर्टल पर लगभग 3.9 करोड़ (39 मिलियन) पंजीकरण दर्ज किए गए हैं।यह संख्या भारत में डिजिटल शिक्षण संसाधनों की लोकप्रियता और पहुँच को दर्शाती है।1185 से अधिक पाठ्यक्रम संचालित है,203 से अधिक मान्यता प्राप्त संस्थानों द्वारा योगदान दिया

* शोधार्थिनी, स्कूल ऑफ एजुकेशन, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर
** शोध निर्देशिका, स्कूल ऑफ एजुकेशन, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर

जा रहा है।इनमें स्नातक, स्नातकोत्तर, और व्यावसायिक विकास से सम्बन्धित पाठ्यक्रम सम्मिलित किए गए हैं ।अब तक लगभग 39.9 लाख (3.99 मिलियन) छात्रों ने SWAYAM परीक्षाओं के लिए पंजीकरण किया है। लगभग 25.2 लाख (2.52 मिलियन) छात्रों को परीक्षाओं में सफलता के उपरांत प्रमाणपत्र जारी किए गए हैं। यह कुल पंजीकरण के सापेक्ष लगभग 6.5 प्रतिशत प्रमाणन दर को प्रदर्शित करता है।

यह प्लेटफॉर्म न केवल विद्यार्थियों को लाभान्वित करता है, बल्कि शिक्षकों एवं प्रशिक्षकों को भी उनके व्यावसायिक कौशल में सुधार लाने का अवसर प्रदान करता है। स्वयं पोर्टल पर उपलब्ध व्यावसायिक विकास पाठ्यक्रमों के माध्यम से शिक्षक नई शिक्षण रणनीतियाँ, तकनीकी उपकरण तथा अद्यतन शैक्षणिक सामग्री को आत्मसात कर सकते हैं। आज के प्रतिस्पर्धी व तकनीक–आधारित शैक्षणिक परिवेश में यह आवश्यक हो गया है कि शिक्षक केवल पारंपरिक शिक्षण विधियों तक सीमित न रहें, बल्कि ई–अधिगम एवं डिजिटल संसाधनों का उपयोग करके अपने शिक्षण को अधिक प्रभावी एवं आकर्षक बनाएं। हालाँकि स्वयं पोर्टल प्रशिक्षकों के लिए एक सशक्त माध्यम है, फिर भी यह देखा गया है कि कई प्रशिक्षक इन पाठ्यक्रमों को पूर्ण नहीं कर पाते। इसका कारण समय की कमी, इंटरनेट जैसी तकनीकी बाधाएँ, और संस्थागत समर्थन की कमी हो सकती है। यह शोध इसी सन्दर्भ में प्रशिक्षकों की सक्रिय भागीदारी, पाठ्यक्रमों की पूर्णता दर, और उनके अनुभवों एवं चुनौतियों का मूल्यांकन करता है, जिससे यह समझा जा सके कि डिजिटल माध्यमों से व्यावसायिक विकास की दिशा में क्या प्रगति हुई है और किन पहलुओं में अभी सुधार की आवश्यकता है।

समस्या का औचित्य

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल प्रौद्योगिकी का एकीकरण अपरिहार्य आवश्यकता बन चुका है। भारत सरकार द्वारा आरंभ किया गया स्वयं पोर्टल इस दिशा में एक महत्वपूर्ण नवाचार है, जिसका उद्देश्य शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों को उच्च गुणवत्ता युक्त, निशुल्क तथा सुलभ ऑनलाइन पाठ्यक्रम प्रदान करना है। यह मंच शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को सुदृढ़ करने, शिक्षण–पद्धतियों में नवाचार को प्रोत्साहित करने तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के सार्वभौमिककरण को सुनिश्चित करने के लिए एक प्रभावी साधन के रूप में स्थापित किया गया है।यद्यपि स्वयं पोर्टल के माध्यम से शिक्षकों द्वारा पाठ्यक्रमों में पंजीकरण की संख्या उत्साहवर्धक है, तथापि पाठ्यक्रमों की पूर्णता दर अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाई है। प्रशिक्षकों को समय प्रबंधन में कठिनाइयाँ, तकनीकी अवसंरचना की कमी, इंटरनेट जोड़ने की समस्याएँ, व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक दायित्वों के मध्य संतुलन की चुनौती तथा संस्थागत सहयोग के अभाव जैसी बहुआयामी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यह समस्याएँ शिक्षकों की सीखने की प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करती हैं और पाठ्यक्रमों की समयबद्ध एवं सफल पूर्णता को प्रभावित करती हैं।यह स्थिति न केवल शिक्षकों के व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक विकास को सीमित करती है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता, नवाचार की गति और व्यापक शैक्षिक सुधारों को भी बाधित करती है। यदि प्रशिक्षक डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से उपलब्ध प्रशिक्षण कार्यक्रमों का पूर्ण लाभ नहीं उठा पाएंगे तो उनकी शैक्षणिक दक्षताओं का अपेक्षित उन्नयन नहीं हो सकेगा। इससे कक्षा शिक्षण की गुणवत्ता प्रभावित होगी और समग्र शिक्षा व्यवस्था में असमानताएँ तथा गुणवत्ता सम्बन्धी चुनौतियाँ बनी रहेंगी।

इस शोध की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि स्वयं पोर्टल जैसे डिजिटल संसाधनों का उपयोग यदि प्रभावी ढंग से किया जाए तो यह शिक्षकों के व्यवसायिक विकास और शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।हालांकि पाठ्यक्रमों की सलंग्नता एवं पूर्णता में कई चुनौतियां सामने आती है जिनका विश्लेषण कर सही समाधान निकालना आवश्यक है। यह अध्ययन केवल शिक्षक प्रशिक्षकों के ऑनलाइन व्यवसायिक विकास कार्यक्रम में भाग लेने की प्रवृत्ति को समझने में मदद करेगा, बल्कि यह भी बताया कि इन कार्यक्रमों को कैसे अधिक सुलभ,प्रभावी और शिक्षकों की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सकता है।

अक्टूबर 2024 तक स्वयं पोर्टल सहभागिता के प्रमुख आंकड़े निम्नलिखित है–

क्रम संख्या	मापदंड	आंकड़े	विवरण / टिप्पणी
1	कुल पंजीकृत उपयोगकर्ता	3.9 करोड़	जनवरी 2024 तक का कुल पंजीकरण
2	उपलब्ध पाठ्यक्रमों की संख्या	1185 पाठ्यक्रम	203 से अधिक मान्यता प्राप्त संस्थानों द्वारा प्रदत्त
3	परीक्षा के लिए पंजीकरण	39.9 लाख	कुल पंजीकृत उपयोगकर्ताओं का लगभग 10 प्रतिशत
4	प्रमाणपत्र प्राप्त करने वाले छात्र	25.2 लाख	पंजीकरण का लगभग 6.5 प्रतिशत
5	क्रेडिट कोर्स नामांकन (फरवरी 2024)	2.44 करोड़	औपचारिक क्रेडिट–योग्य नामांकन
6	क्रेडिट कोर्स परीक्षा पंजीकरण	2.63 लाख	नामांकन का लगभग 10.7 प्रतिशत
7	औसत पूर्णता दर (2017–2025)	4 प्रतिषत से अधिक	संसद समिति के अनुसार, बहुत कम पूर्णता दर
8	प्रमुख चुनौतियाँ	निम्न पूर्णता दर ,अद्यतन सामग्री की कमी, तकनीकी असमानता, अपर्याप्त परीक्षा सहभागित	संसदीय समीक्षाओं और विश्लेषण में चिन्हित समस्याएँ
9	2025 अनुमान (स्रोत आधारित वृद्धि अनुमान)	4 करोड़ से अधिक संभावित कुल पंजीकरण	वार्षिक औसत वृद्धि दर के अनुसार अनुमानित वृद्धि

यह आंकड़े यह भी दर्शाते हैं कि भले ही swayam शिक्षार्थियों को आकर्षित करने में प्रभावी है लेकिन पाठ्यक्रम पूर्णता दर बढ़ाने और यह सुनिश्चित करने के लिए बेहतर सहायता और पाठ्यक्रम संरचना की आवश्यकता है कि शिक्षार्थी केवल नामांकन ही ना करें बल्कि पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूर्ण करें और प्रमाण पत्र प्राप्त करें। यह आंकड़े शिक्षा को आसानी से सुलभ बनाने में स्वयं के महत्व को रेखांकित करते है और उच्च प्रमाणन दर को प्राप्त करने में आने वाली कठिनाइयों को भी उजागर करते है जो ऑनलाइन अधिगम प्लेटफॉर्म की गुणवत्ता और प्रभावशीलता में सुधार के लिए निरंतर प्रयासरत है।

यह शोध इसी सन्दर्भ में प्रशिक्षकों की सक्रिय भागीदारी, पाठ्यक्रमों की पूर्णता दर, और उनके अनुभवों एवं चुनौतियों का मूल्यांकन करता है, जिससे यह समझा जा सके कि डिजिटल माध्यमों से व्यावसायिक विकास की दिशा में क्या प्रगति हुई है और किन पहलुओं में अभी सुधार की आवश्यकता है?

समस्या कथन

स्वयं पोर्टल पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षकों के व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता व पूर्णता का अध्ययन

उद्देश्य

1. शिक्षक प्रशिक्षकों की स्वयं पोर्टल से संबंधित व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता एवं पूर्णता का अध्ययन करना।

शोध विधि

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श

जयपुर जिले में स्थित शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को अध्ययन की जनसंख्या माना है।वर्तमान में जयपुर जिले में कुल 214 शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय है, जिनमें से शोधार्थी ने 30 महाविद्यालयों का चयन अपने शोध कार्य हेतु किया है। इन महाविद्यालयों में से न्यादर्श हेतु 350 शिक्षकों का चयन सरल यादृच्छिक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया है।

उपकरण एवं सांख्यिकी

प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय के शिक्षकों की सलंग्नता एवं पूर्णता को जानने के लिए शिक्षकों के लिए स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत के माध्यम से किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण

उद्देश्य शिक्षक प्रशिक्षकों की स्वयं पोर्टल से संबंधित व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता एवं पूर्णता का अध्ययन करना ।

तालिका– शिक्षक प्रशिक्षकों की स्वयं पोर्टल से संबंधित व्यवसायिक विकास कार्यक्रमों में सलंग्नता एवं पूर्णता के अभिमत का स्तर

क्रम संख्या	संलग्नता	आवृति (350)	प्रतिशत (%)
1	स्वयं पोर्टल पर नामांकित प्रशिक्षक	164	47%
2	पाठ्यक्रम में नियमित सहभागिता दिखाने वाले प्रशिक्षक	125	76.21%
3	जिन्होंने पाठ्यक्रम पूर्णतया संपन्न किया	114	69.51%
4	जिनका पाठ्यक्रम अधूरा रह गया	50	31%
5	जिन्होंने समय की अनुपलब्धता को प्रमुख अड़चन माना	85	52%
6	जिन्होंने तकनीकी समस्याओं का सामना किया	44	27%
7	जिन्होंने पाठ्यक्रम की सामग्री को उपयोगी बताया	120	73%

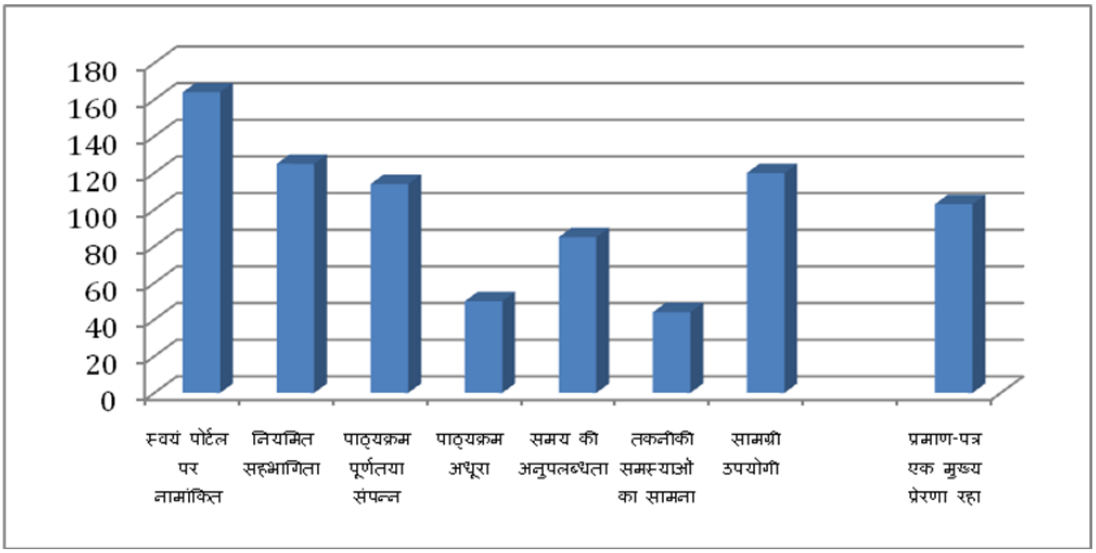

व्याख्या एवं विश्लेषण

सभी 350 प्रशिक्षकों में से47 प्रतिशत (164) प्रशिक्षकों ने स्वयं पोर्टल पर किसी न किसी पाठ्यक्रम में पंजीकरण किया,जो यह संकेत देता है कि डिजिटल शिक्षा को लेकर प्रशिक्षकों में उत्सुकता और जागरूकता पर्याप्त नहीं हैं। 76.21 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने (125 में से) पाठ्यक्रमों में सक्रिय रूप से श् भाग लिया। यह दर्शाता है कि अधिकांश प्रशिक्षक अपनी व्यस्तताओं के बावजूद ऑनलाइन शिक्षण में संलग्न रहे।केवल 69.51 प्रतिशत (114) प्रशिक्षकों ने पाठ्यक्रम को पूरी तरह संपन्न किया। यह इस बात की ओर संकेत करता है कि एक बड़ा वर्ग किसी न किसी कारणवश पाठ्यक्रम को अधूरा छोड़ने पर मजबूर हुआ। जिसमें से 31 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने पाठ्यक्रम अधूरा छोड़ा, जिसमें प्रमुख कारण 52 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने समय की अनुपलब्धता को एक प्रमुख बाधा बताया, जबकि 27 प्रतिशत को तकनीकी समस्याओं का सामना करना पड़ा। इससे स्पष्ट होता है कि प्रशिक्षकों के पास पर्याप्त समय और संसाधन नहीं हैं, जिससे उनकी पूर्णता दर प्रभावित होती है।

73 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने पाठ्यक्रम की सामग्री को उपयोगी और व्यावहारिक बताया, जिससे यह सिद्ध होता है कि विषयवस्तु की गुणवत्ता अच्छी है और यह प्रशिक्षकों की जरूरतों के अनुकूल है। 63 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने माना कि प्रमाण–पत्र प्राप्ति एक सकारात्मक प्रेरणा का स्रोत था, जिससे उनकी सीखने की रुचि और भी बढ़ी।

निष्कर्ष

यह अध्ययन इस ओर संकेत करता है कि प्रशिक्षकों द्वारा डिजिटल माध्यम से शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त करने की प्रवृत्ति अभी भी सीमित है। कुल 350 प्रशिक्षकों में से केवल 47 प्रतिशत (164 प्रशिक्षक) ही स्वयं पोर्टल से जुड़े, जो यह दर्शाता है कि अभी भी डिजिटल शिक्षा के प्रति पूर्ण जागरूकता और स्वीकार्यता में कमी है।हालांकि, नामांकित प्रशिक्षकों में से लगभग 76.21 प्रतिशत ने पाठ्यक्रमों में सक्रिय भागीदारी दिखाई, जो यह दर्शाता है कि एक बार जुड़ने के बाद, प्रशिक्षक ऑनलाइन शिक्षण में संलग्न रहने का प्रयास करते हैं। इसके बावजूद, केवल 69.51 प्रतिशत प्रशिक्षकों ने पाठ्यक्रम को पूरा किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि अनेक प्रशिक्षक किसी न किसी कारण से कोर्स को बीच में छोड़ने के लिए विवश हुए।पाठ्यक्रम अधूरा छोड़ने वालों में से अधिकांश ने समय की कमी (52 प्रतिशत) और तकनीकी परेशानियों (27 प्रतिशत) को प्रमुख बाधा बताया। यह दर्शाता है कि प्रशिक्षकों के पास आवश्यक संसाधन और सहयोग की कमी है, जो उनकी सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है।सकारात्मक पक्ष यह रहा कि जिन प्रशिक्षकों ने पाठ्यक्रम पूर्ण किए, उनमें से 73 प्रतिशत ने सामग्री की गुणवत्ता की प्रशंसा की और 63 प्रतिशत ने प्रमाण–पत्र को अपनी प्रेरणा का एक मुख्य स्रोत माना। इससे यह स्पष्ट है कि यदि उपयुक्त परिस्थितियाँ और सुविधाएँ प्रदान की जाएँ, तो प्रशिक्षक न केवल जुड़ते हैं, बल्कि पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा भी करते हैं।

संदर्भ सूची

1. Government of India. (2023). Introduction to SWAYAM Portal. Ministry of Education. Retrieved from https://swayam.gov.in
2. National Council for Teacher Education (NCTE). (2020). Guidelines for Professional Development of Teachers. New Delhi.
3. UNESCO. (2017). Digital learning for teachers. Paris: UNESCO Publishing.
4. Mishra, S., & Panda, S. (2021). Online education and the status of MOOCs in India. Innovations in Indian Higher Education, 12(3), 45–56.
5. Kumar, P. (2019). Importance of e-learning in teacher training. Indian Journal of Educational Research, 8(2), 67–74.
6. Ministry of Education, Government of India. (2020). National Education Policy 2020. New Delhi.
7. Aggarwal, J. C. (2016). Education and Development. New Delhi: Vikas Publishing.
8. Indira Gandhi National Open University (IGNOU). (2018). ICT in Education. New Delhi.
9. Singh, R. (2022). Challenges and opportunities of digital training for Indian teachers. Indian Journal of Teacher Development, 15(1), 23–39.

अटल बिहारी वाजपेयीः संगठनकर्त्ता तथा दलीय नेतृत्व

महेंद्र कुमार शुक्ल*

भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 15 अगस्त, 1998 को ऐतिहासिक लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए कहा था– 'एक गरीब स्कूल मास्टर के बेटे का भारत के प्रधानमंत्री पद तक पहुँचना भारतीय लोकतंत्र की मजबूती का प्रतीक है। पिछली अर्द्ध सदी से भी अधिक समय से स्वयं श्री वाजपेयी जी भारतीय लोकतंत्रा को मजबूत करने में अपना रचनात्मक योगदान दे रहे थे।

श्री वाजपेयी जी संसद में रहे हो या संसद के बाहर, भारतीय राजनीति को प्रभावित करते रहे थे। श्री वाजपेयी जी का बोला हुआ हर शब्द खबर माना जाता रहा था। उनके भाषण मित्रों द्वारा ही नहीं, राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों द्वारा भी गंभीरता से सुने जाते थें। भारतीय जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलू पर पूरे अधिकार के साथ बोलना वाजपेयी जी के लिए सहज–संभव–साध्य रहा था। उनकी उदारदृष्टि और तथ्यपरक आंकड़े लोगों को मानसिक स्तर पर सन्तुष्टि देते रहे थे। उनकी सोच हरदम रचनात्मक और देश हित में सबसे बेहतर विकल्प तलाशने व उद्घाटित करनेवाली रहती थी। उनका सबसे बड़ा योगदान 'संसद में संवाद' की स्थिति बनाए रखना, उसे स्तर को ऊँचा उठाना माना जाता रहा है। संसदीय नेता के रूप में वाजपेयीजी 1957 से ही संसद में पहुँच चुके थे और युवा अवस्था में जब संसद में नेहरू, पटेल जैसे दिग्गज मौजूद रहते थे। वहाँ ये अपने पैर जमाने की कोशिश कर रहे थे और 1962–63 तक वाजपेयी जी एक कुशल नेता के रूप में अवतार ले चुके थे। नेहरू, इन्दिरा गांधी एवं शास्त्री जैसे गणमान्य लोगों ने वाजपेयी जी को अपनी पार्टी में शामिल करने के लिए पुरजोर कोशिश की। परन्तु वे अपने आदर्शों के साथ समझौता करने वाले नहीं थे। शुरूआत के दिनों में संसद में उन्होंने अपनी मजबूत पकड़ बना ली और 2 सितम्बर, 1963 को जब गुटनिरपेक्षता की राजनीति चरम पर थी। उस समय वे मानते थे कि जब हम अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर एक स्वतंत्रा राष्ट्र के रूप में आये तो संसार दो विपरीत गुटों में बंटा हुआ था। उनके बीच शीतयुद्व और शस्त्रों को होड़ चल रही थी और हमारे देश के लिए स्वाभाविक ही नहीं आवश्यक भी था कि इन दोनों शक्ति समूहों से दूर हटकर अपनी विदेश नीति बनाये। हमारे देश के समक्ष सर्वप्रथम एवं अहम प्रश्न था कि देश का सामाजिक पुर्ननिर्माण किया जाय। हमें हमारे देश को शांति की जरूरत थी और हमें लड़ाई–झगड़ों से बचकर रहना था।

पाकिस्तान के संदर्भ जगदीश विद्रोही उल्लेख करते है,'' अटल जी ने याद दिलाया कि 25 अगस्त 1948 को भारत और पाकिस्तान संबंधी संयुक्त राष्ट्र आयोग ने एक पत्र तब के भारतीय प्रधानमंत्री को लिखा था कि जम्मू और काश्मीर के राज्य के पूरे क्षेत्र पर संप्रभुता निर्विवाद है और राज्य के पुरे क्षेत्र पर संप्रभुता निर्विवाद है और राज्य की सुरक्षा की पूरी जिम्मेदारी भारत सरकार पर है। कश्मीर पर जनमत संग्रह से पाकिस्तान को किसी भी भूमिका से वंचित किया जा रहा है।''[1]

संयुक्त राष्ट्र संघ के संगठन के समक्ष प्रस्तुत विचारों की ओर वाजपेयी जी ने ध्यान आकर्षित करते हुए गुट निरपेक्षता और तुष्टीकरण पर अपने विचार प्रस्तुत किये थे। वाजपेयी जी सोचते थे यदि इस नीति को अपनाने का यही कारण है तो एक अति गंभीर मामला है। हमारा देश अनेक बोली बोलने वाला देश है, जहाँ अनेक तरह के विश्वास रखने वाले लोग रहते हैं। और उन्हें हमने सामान अधिकार दिए है। लेकिन यदि किसी समुदाय वि"ष का विश्वास हमारी विदेश नीति के निर्माण में रूकावट बनता है, तो यह न तो हमारी नीति के धर्मनिरपेक्ष स्वभाव के अनुरूप था और न ही हमारी विदेशनीति के विकास में स्वस्थ सहमति दे सकता था। मार्शल टीटो ने इजराइल के साथ राजनयिक संबंध बनाए। घाना एवं नाइजीरिया ने इजराइल के साथ राजनयिक संबंध स्थापित किए। इससे संयुक्त अरब गणराज्य के साथ उनकी मित्राता पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा। वर्मा और नेपाल इजराइल के साथ राजनायिक सम्बन्ध स्थापित कर चुके थे। यह किस तरह का डर था जो इजराइल के साथ राजनायिक संबंध स्थापित करने में रूकावट डालता था। यदि हम डरे हुए है ं, हम ठीक नीति का अनुकरण नहीं कर सकते। अभी तक इस मामले में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। वजपेयी जी का मानना था कि अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति बदल चुकी है और सतत् बदल रही है। क्या हमें

* CO, मुशहरी, मोबाईल नं0 :–9910982486, मेल आई॰डी॰ :–kunwar.shukla345@gmail.com

अपनी स्वतंत्रा विदेश नीति की बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप समीक्षा करनी चाहिए? अभी तक इसके मूल आधर को छोड़ देने की आवश्यकता खड़ी नहीं हुई है और वे आशा करते थे कि ऐसी आवश्यकता पड़ेगी भी नहीं, लेकिन यदि कभी ऐसी जरूरत पड़ी, तो मै यह सुनने के लिए कभी भी तैयार नहीं होऊँगा कि केवल नीति की रक्षा करने के लिए देश के हितों की बलि नहीं दी जायेगी। कोई भी नीति देश के लिए होती है देश नीति के लिए नहीं होता है, उनका कहना था कि ये जरूरी नहीं है कि अमरीका के गुट में शामिल हुआ जाये कोई इसकी मांग नहीं कर रहा है। उस समय केवल चीन से ही खतरा नहीं बल्कि पाकिस्तान से अच्छा खासा खतरा था अतः हमें मजबूती बनाना जरूरी हो गया था। किसी भी स्रोत से हमें हथियार प्राप्त करना जरूरी है। हथियार न तो साम्यवादी होते हैं न पूँजीवादी। वे न पूरब से सम्बन्धित होते हैं न पश्चिम से। वे उन्हीं से सम्बन्धित होते हैं जो काम में लाते है। अगर वे हथियार हमारे सीमाओं की रक्षा करते हैं हमारे आजादी को सुरक्षित रखते हैं वे हमारे लिए पवित्रा है। ऐसी बदलती हुई परिस्थितियों में हम गुटनिरपेक्षता को केवल मंत्र के रूप में नहीं दोहराना चाहते थे। गुटनिरपेक्षता को अपनाने का मतलब हमारी नीति होनी चाहिए कि सबके साथ दोस्ती की जाए और कहीं से आने वाली मदद को स्वीकार किया जाए। वे इस नीति के बहुत बड़े समर्थक थे लेकिन उनका मानना था कि यदि गुटनिरपेक्षता हमारी सैनिक शक्ति बनाने के रास्ते में आती है। या चीनी खतरे को कम करके बताती थी या हमारे साम्यवादी मित्रों के हाथों में भारत को कमजोर करने का हथियार बनती थी। तो उनका मानना था कि यह नीति गुटनिरपेक्षता के विरूद्व हो सकती है।

आपातकाल के संदर्भ में अटल जी का विचाार था–'' कोई भी क्रांति न तो शून्य अथवा हवा में पैदा होती है और न ही सुविचारित पद्वति से। बड़े से बड़ा क्रांतिकारी विचारक कुछ आधारभूत शर्तों के पूरा हुए बिना अपने इंची–टेप से नाप–नापकर क्रांति नही कर सकता। छोटी या बड़ी, हिंसक या अहिंसक, राजनैतिक या सामाजिक किसी भी तरह के क्रांतिकारी परिवर्त्तन के लिए दो तरह के तत्व आवश्यक होते है। एक तो प्राप्त स्थिति के अन्तर्विरोध, जो क्रान्ति की जन्मभूमि तैयार करते है और दूसरे, तात्कालिक तत्व, जिनका उपयोग करके क्रान्तिकारी नेता अन्तविरोधों में विस्फोट कर देता है।''[2]

कैदी कविराय में अटल जी उल्लेख करते है–''आपातकाल के दौरान अनेक भारतीय राजदुतों ने तानाशाही के वास्तविक स्वरूप को छिपाया और उसे लोकतंत्रों आवरण में पेश किया। पश्चिमी देशों के कई महत्वपूर्ण राजदूतों ने गिरफ्तारियों की संख्या और भारतीय प्रेस पर लगाए गए सेसरशिप को छिपाये और मामूली बताने की जी तोड़ कोशिश की। इतना ही नहीं उन देशों मे रहने वाले भारतीयों को तानाशाही के खिलाफ विश्व जनमत जाग्तत करने के प्रयास को जायज नाजायज हर तरीके से रोकने की भरसक कोशिश की।''[3]

चीन के संदर्भ में हमारी नीति क्या थी। वाजपेयी जी उम्मीद कर रहे थे कि प्रधानमंत्री जी कोलम्बो प्रस्ताव स्वीकार नहीं किये है और वे अवैध नहीं है। वे समझ रहे थे कि चीन को दी हुई सुविधएँ उपलब्ध नहीं रहेगी और चीन के साथ लद्दाख में समझौता वार्ता जारी रखने की अनुमति नहीं दी जायेगी। क्योंकि कोलम्बो देशों के मनाने पर हमारे देश में कोलम्बो प्रस्ताव को समर्थन दिया है लेकिन, अगर चीन अपनी जिद्व पर अटल रहना चाहता है तो हम अपना समर्थन वापस ले लगें। देश के एक बड़े भूखण्ड मांग के विषय में कोई मध्यस्थता समझौता या पंच फैसला नहीं हो सकता। पिछली शताब्दी के आधर पर जो कुछ भी हुआ था उसकी मांग करना एकदम से काल्पनिक और अनुचित है। उन्होंने प्रधानमंत्री को आड़े हाथ लेते हुए कहा था कि वे अचानक से मध्यस्थता का प्रस्ताव पास कर देते है । चीन इसे स्वीकार नहीं करता। अब हमें सही प्रस्ताव से खुद को अलग कर लेना चाहिए तथा कोलम्बो देशों से कहना चाहिए कि हम प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब तक आपके प्रयास फलीभूत नहीं होते हम कोलम्बो प्रस्ताव में और बंधे नहीं रहना चाहते।

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, चुने हुए भाषण से अटल जी का व्यक्तित्व उनके भाषण में झलकता है। उन्होनें कहा '' मेरे देशवासियों, आपने पांच वर्ष के लिए अपने प्रतिनिधियों को लोकसभा में भेजा था। वे केवल 14 महीनें में फिर से आपके पास आ रहे हैं। इसका कारण आपको भी मालूम है और मुझे भी, क्योकि यह पूरा नाटक खुले मंच पर खेला गया है। सरकार को गिराने का कोई मुद्दा ही नही था। लोकसभा में बहस में और बाहर भी मेरे साथियों और मैनें बार–बार पुछा कि आखिर क्या मुद्दा है, जिस पर गलत आचरण के लिए सरकार इतनी अधिक दोषी है कि उसे गिरा दिया जाए और देश को अंधे कुंए में ढकेल दिया जाए मैंने घंटों बड़े धैर्यपूर्वक बहस सुनी, आपने भी सुनी होगी, एक भी नई बात नहीं कही गई, ऐसा एक भी गंभीर मुद्दा नही उठाया गया, जिससे पता चलता कि क्या किया जाना चाहिए। जो काम कर रहे थे,

उन्हे उखाड़ फेकने के लिए कोई मुद्दा नही था। यह जो एक सोची–समझी चाल थी, जो उल्टी पड़ गई थी।''[4]

इस प्रकार अटल बिहारी वाजपेयी संगठनकर्त्ता के रूप में भारतीय राजनीति एवं दलीय व्यवस्था को प्रभावित करते रहें। उनका दलीय नेतृव न केवल भारतीय जनता पार्टी अपितु अन्य दलों के लिए आदर्श रहा।

संदर्भः–

1. जगदीश विद्रोही बलवीर सक्सेना, प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, सहित्य प्रचारक दिल्ली, 1998, पृष्ठ–46
2. आपातकाल में गुप्त क्रांति :सिद्वांतः रणनीति एवं संगठन पृष्ठ–9
3. अटल बिहारी वाजपेयी, कैदी कविराय की कुण्डलियां, सरस्वती बिहार, दरियागंज नई दिल्ली 110002, पृष्ठ–145
4. प्रधानमंत्री अंटल बिहारी वाजपेयी चुने हुए भाषण, प्रकाशन में भाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ–3
5. अटल बिहारी वाजपेयी मेरी संसदीय यात्रा संपादकः डॉ॰ ना॰मा॰ घटाटे, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली संस्करण–2004
6. अटल बिहारी वाजपेयी मेरी संसदीय यात्रा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2004

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में एकीकृत (इंटीग्रेटेड) शिक्षा मॉडल का समग्र मूल्यांकनः कला, वाणिज्य और विज्ञान के दृष्टिकोण से

डॉ. रोबिना*

सारांश

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में व्यापक सुधार और समग्र विकास की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों को बहुआयामी कौशल, समग्र ज्ञान और व्यवहारिक अनुभव प्रदान करना है। नीति में कला, वाणिज्य और विज्ञान के क्षेत्र में इंटीग्रेटेड या एकीकृत शिक्षा मॉडल को लागू करने पर विशेष जोर दिया गया है। यह मॉडल छात्रों को केवल विषयगत ज्ञान तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उन्हें समस्या समाधान, नवाचार, आलोचनात्मक सोच और व्यावहारिक कौशल के क्षेत्र में भी सशक्त बनाता है। इस शोध-पत्र में NEP 2020 के अंतर्गत इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल की अवधारणा, इसके महत्व, और कला, वाणिज्य व विज्ञान की धाराओं में इसके क्रियान्वयन का मूल्यांकन किया गया है। साथ ही इसमें नीति के लागू होने में आने वाली चुनौतियों और संभावित सुधारों पर भी चर्चा की गई है।

कुंजी शब्द:राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, इंटीग्रेटेड एजुकेशन, समग्र शिक्षा, कला, वाणिज्य, विज्ञान, बहुआयामी कौशल

प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी समाज के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास का मूलाधार होती है। भारत में शिक्षा का इतिहास प्राचीन विश्वविद्यालयों, गुरुकुलों और शिक्षा परंपराओं से जुड़ा हुआ है, जहाँ विद्यार्थी केवल विषयगत ज्ञान ही नहीं, बल्कि जीवन कौशल और नैतिक मूल्यों से भी सुसंपन्न होते थे। आधुनिक युग में शिक्षा प्रणाली में तेजी से बदलाव आया है, जिसमें केवल अकादमिक ज्ञान पर ध्यान केंद्रित किया जाता रहा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इस दृष्टिकोण को व्यापक रूप से बदलने का प्रयास किया है। इस नीति का उद्देश्य छात्रों को केवल विषयों तक सीमित न रखना, बल्कि उन्हें बहुआयामी दृष्टिकोण, समस्या समाधान, नवाचार और व्यावहारिक कौशल में दक्ष बनाना है। NEP 2020 के अनुसार, कला, वाणिज्य और विज्ञान के क्षेत्रों में इंटीग्रेटेड शिक्षा मॉडल अपनाने से विद्यार्थियों में विश्लेषणात्मक सोच, क्रिएटिविटी और निर्णय क्षमता का विकास होता है।

यह शोध-पत्र इसी परिप्रेक्ष्य में तैयार किया गया है। इसमें NEP 2020 के इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल की संरचना, इसके महत्व और कार्यान्वयन की प्रक्रिया पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही, यह अध्ययन कला, वाणिज्य और विज्ञान की शिक्षा में समग्र दृष्टिकोण अपनाने के लाभ और चुनौतियों का मूल्यांकन करता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का अवलोकन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा प्रणाली में एक ऐतिहासिक सुधार का प्रतीक है। यह नीति 34 वर्षों बाद 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उन्नत संस्करण है, जिसका लक्ष्य शिक्षा को अधिक समावेशी, लचीला और गुणवत्ता-प्रधान बनाना है। NEP 2020 का मूल उद्देश्य छात्रों में समग्र विकास, नवाचार, तर्कशक्ति और व्यावहारिक कौशल का विकास करना है।

इस नीति के अंतर्गत प्रारंभिक शिक्षा से उच्च शिक्षा तक सभी स्तरों पर समग्र दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया गया है। नीति में शिक्षा के चार प्रमुख स्तंभ बताए गए हैं: ज्ञान, कौशल, मूल्य और अनुभव। इसके अलावा NEP 2020 में बहुविषयक (Multidisciplinary) और इंटीग्रेटेड शिक्षा मॉडल को लागू करने की सिफारिश

* असिस्टेंट प्रोफेसर, बी.एड. विभाग, वीएनएस महाविद्यालय, परशुरामपुर, चंदौली (उ०प्र०)

की गई है। इसका उद्देश्य छात्रों को केवल विषयगत ज्ञान तक सीमित न रखना, बल्कि उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में समझ और अनुभव प्रदान करना है।

कला, वाणिज्य और विज्ञान के क्षेत्र में यह नीति छात्रों को अलग-अलग दृष्टिकोणों, प्रयोगात्मक गतिविधियों और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों से जोड़ने पर जोर देती है। उदाहरण के लिए, विज्ञान के छात्रों को व्यावहारिक परियोजनाओं और उद्योग से जुड़े अनुभव देने के साथ-साथ कला और वाणिज्य की समझ भी विकसित करने के अवसर मिलते हैं। इसी प्रकार वाणिज्य और कला के छात्रों को भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण, विश्लेषणात्मक क्षमता और डिजिटल कौशल सीखने का अवसर प्रदान किया जाता है।

संक्षेप में, NEP 2020 का अवलोकन यह दर्शाता है कि शिक्षा केवल पाठ्यपुस्तक आधारित नहीं रहेगी, बल्कि यह एकीकृत, समग्र और बहुआयामी विकास की दिशा में अग्रसर होगी, जिससे छात्रों में ज्ञान, कौशल और नैतिक मूल्य समान रूप से विकसित होंगे।

इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल का अर्थ और महत्व

इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल का तात्पर्य एक ऐसी शिक्षा प्रणाली से है जिसमें विभिन्न विषयों, कौशल और अनुभवों को जोड़कर छात्रों का समग्र विकास किया जाता है। यह मॉडल पारंपरिक शिक्षा के सीमित दृष्टिकोण से अलग है, जहाँ केवल किसी विशेष विषय का ज्ञान ही छात्रों को प्रदान किया जाता था। NEP 2020 में यह मॉडल छात्रों को बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने और जीवन में विभिन्न परिस्थितियों का सामना करने के लिए तैयार करने की दिशा में कार्य करता है।

इस मॉडल का मुख्य उद्देश्य छात्रों में सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, सामाजिक और आर्थिक समझ का विकास करना है। कला, वाणिज्य और विज्ञान के अध्ययन को एकीकृत करके छात्र न केवल विषयगत ज्ञान प्राप्त करते हैं, बल्कि समस्या समाधान, रचनात्मकता, निर्णय क्षमता और आलोचनात्मक सोच में भी दक्ष बनते हैं। उदाहरण के लिए, विज्ञान के छात्र कला और डिज़ाइन के सिद्धांतों को समझकर उत्पाद नवाचार में सक्षम हो सकते हैं। वाणिज्य के छात्र विज्ञान के तर्क और गणितीय विश्लेषण के साथ बेहतर व्यावसायिक निर्णय लेने में सक्षम बनते हैं।

इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल के महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं में स्पष्ट किया जा सकता है:

1. समग्र विकास: यह मॉडल छात्रों को केवल अकादमिक ज्ञान तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उनके सामाजिक, भावनात्मक और नैतिक विकास को भी सुनिश्चित करता है।
2. बहुविषयक दक्षता: विभिन्न क्षेत्रों का एकीकरण छात्रों में व्यापक दृष्टिकोण और बहुविषयक कौशल का विकास करता है।
3. रचनात्मक और आलोचनात्मक सोच: छात्र विविध दृष्टिकोणों से समस्याओं का विश्लेषण करना और नवाचार करना सीखते हैं।
4. व्यावहारिक अनुभव: परियोजनाओं, इंटर्नशिप और कार्यशालाओं के माध्यम से छात्रों को वास्तविक जीवन की चुनौतियों का सामना करने की क्षमता मिलती है।
5. भविष्य की तैयारियाँ: यह मॉडल छात्रों को डिजिटल युग और वैश्विक परिप्रेक्ष्य में प्रतिस्पर्धी बनाने में सहायक होता है।

इस प्रकार, NEP 2020 का इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल केवल शिक्षा की संरचना बदलने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह छात्रों के जीवन और करियर की व्यापक तैयारी में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कला, वाणिज्य और विज्ञान में समग्र शिक्षा का मूल्यांकन

NEP 2020 के इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल का मुख्य उद्देश्य छात्रों को केवल विषयगत ज्ञान तक सीमित न रखना है, बल्कि उन्हें बहुआयामी कौशल, व्यावहारिक अनुभव और सामाजिक-सांस्कृतिक समझ प्रदान

करना है। इस सेक्शन में हम कला, वाणिज्य और विज्ञान की शिक्षा में समग्र दृष्टिकोण को लागू करने के महत्व और परिणामों का मूल्यांकन करेंगे।

1. कला : कला शिक्षा में इंटीग्रेटेड मॉडल छात्रों की रचनात्मकता, सांस्कृतिक समझ और भावनात्मक बुद्धिमत्ता को विकसित करता है। NEP 2020 के अनुसार, कला के विद्यार्थियों को केवल साहित्य, संगीत या चित्रकला तक सीमित नहीं रखा जाएगा, बल्कि उन्हें सामाजिक विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र और डिजिटल मीडिया के माध्यम से बहुआयामी दृष्टिकोण प्राप्त होगा। उदाहरण के लिए, एक साहित्य छात्र न केवल कविता और कहानी लिखना सीखता है, बल्कि समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के अध्ययन से पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई को भी समझ सकता है। इस प्रकार, कला शिक्षा में इंटीग्रेटेड दृष्टिकोण छात्रों की विश्लेषणात्मक और आलोचनात्मक क्षमता को भी बढ़ाता है।

2. वाणिज्य : वाणिज्य शिक्षा में समग्र शिक्षा का अर्थ केवल लेखांकन या व्यापारिक सिद्धांतों तक सीमित नहीं है। इंटीग्रेटेड मॉडल के तहत वाणिज्य के छात्र आर्थिक, सांख्यिकीय, तकनीकी और प्रबंधन कौशल को भी सीखते हैं। NEP 2020 के अनुसार, वाणिज्य छात्रों को डिजिटल वित्त, डेटा विश्लेषण और उद्यमिता जैसे क्षेत्रों में अनुभव प्रदान किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, कला और सामाजिक विज्ञान का अध्ययन उन्हें व्यापारिक निर्णयों में नैतिकता, सांस्कृतिक समझ और सामाजिक जिम्मेदारी विकसित करने में मदद करता है। उदाहरण के लिए, एक वाणिज्य छात्र अपने व्यापारिक निर्णयों में समाजशास्त्र और पर्यावरणीय पहलुओं को शामिल कर सकता है।

3. विज्ञान : विज्ञान की शिक्षा में इंटीग्रेटेड दृष्टिकोण छात्रों को अनुसंधान, नवाचार और समस्या समाधान में सक्षम बनाता है। NEP 2020 के अनुसार, विज्ञान के छात्र प्रयोगशाला कार्य, परियोजनाओं और उद्योग आधारित इंटर्नशिप के माध्यम से तकनीकी कौशल विकसित करते हैं। इसके साथ ही, कला और वाणिज्य से जुड़ी शिक्षा उन्हें रचनात्मक सोच, आर्थिक दृष्टिकोण और सामाजिक प्रभाव समझने में मदद करती है। उदाहरण के लिए, एक बायोटेक्नोलॉजी छात्र न केवल वैज्ञानिक अनुसंधान करता है, बल्कि व्यावसायिक पहलुओं और नैतिक मुद्दों को भी समझता है।

लाभों का समग्र मूल्यांकन:

1. बहुआयामी दक्षता: छात्र विभिन्न विषयों के ज्ञान और कौशल से सुसज्जित होते हैं।
2. समस्याओं का व्यापक दृष्टिकोण: छात्र केवल तकनीकी समाधान नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक प्रभावों को भी समझते हैं।
3. रचनात्मकता और नवाचार: विभिन्न क्षेत्रों के सम्मिलन से छात्रों की क्रिएटिविटी बढ़ती है।
4. व्यवहारिक अनुभव: परियोजनाएं, इंटर्नशिप और केस स्टडी छात्रों को वास्तविक दुनिया की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बनाते हैं।
5. भविष्य की तैयारी: डिजिटल और वैश्विक युग में छात्रों को प्रतिस्पर्धी बनाने में मदद मिलती है।

इस प्रकार, कला, वाणिज्य और विज्ञान में इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल NEP 2020 का एक महत्वपूर्ण पहलू है। यह केवल छात्रों को ज्ञान देने तक सीमित नहीं है, बल्कि उन्हें समग्र व्यक्तित्व, बहुआयामी कौशल और व्यावहारिक दक्षता से लैस करता है।

चुनौतियाँ और सुझाव : NEP 2020 के अंतर्गत इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल को लागू करना अत्यंत लाभकारी है, लेकिन इसके सामने कई चुनौतियाँ भी हैं। इन चुनौतियों को समझना और समाधान सुझाना आवश्यक है ताकि नीति का प्रभावी क्रियान्वयन संभव हो।

1. चुनौतियाँ

1. अभ्यस्त शिक्षा प्रणाली: भारतीय शिक्षा प्रणाली लंबे समय से विषय-आधारित रही है। अचानक बहुविषयक और समग्र दृष्टिकोण अपनाना शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

2. शिक्षक प्रशिक्षण की कमी: इंटीग्रेटेड मॉडल को लागू करने के लिए शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण और नई शिक्षण विधियों में दक्षता की आवश्यकता होती है।
3. संसाधनों की कमी: परियोजनाओं, प्रयोगशालाओं और इंटर्नशिप के लिए पर्याप्त संसाधन और तकनीकी सुविधाएँ हर संस्थान में उपलब्ध नहीं हैं।
4. पाठ्यक्रम और समय प्रबंधन: कला, वाणिज्य और विज्ञान को एकीकृत करना पाठ्यक्रम डिजाइन और समय प्रबंधन के लिए जटिल हो सकता है।
5. मूल्यांकन प्रणाली: समग्र शिक्षा में छात्रों के बहुआयामी कौशल और रचनात्मकता का मूल्यांकन पारंपरिक परीक्षा प्रणाली से कठिन होता है।

2. सुझाव

1. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम: शिक्षकों को बहुविषयक शिक्षा, डिजिटल उपकरण और इंटीग्रेटेड पाठ्यक्रम योजना में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
2. संसाधनों का सुदृढ़ीकरण: प्रयोगशालाएं, डिजिटल लाइब्रेरी और इंटर्नशिप के अवसर बढ़ाने चाहिए।
3. पाठ्यक्रम का लचीला डिज़ाइन: समय और विषयों के समन्वय के लिए लचीले पाठ्यक्रम और मॉड्यूल विकसित किए जाएं।
4. मूल्यांकन में नवाचार: बहुआयामी मूल्यांकन के लिए प्रोजेक्ट वर्क, प्रस्तुति, केस स्टडी और ऑनलाइन मूल्यांकन को शामिल किया जाए।
5. छात्र-केंद्रित दृष्टिकोण: शिक्षा का केंद्र छात्र होना चाहिए, जिससे उनका व्यक्तिगत, सामाजिक और व्यावहारिक विकास सुनिश्चित हो।

इन सुझावों को अपनाने से NEP 2020 का इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल प्रभावी रूप से लागू हो सकता है और छात्रों को समग्र विकास की दिशा में प्रेरित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का इंटीग्रेटेड एजुकेशन मॉडल भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक महत्वपूर्ण क्रांति प्रस्तुत करता है। कला, वाणिज्य और विज्ञान की धाराओं को एकीकृत करके यह मॉडल छात्रों में बहुआयामी कौशल, रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच और व्यावहारिक दक्षता का विकास करता है। इसके माध्यम से छात्र न केवल विषयगत ज्ञान प्राप्त करते हैं,बल्कि सामाजिक,आर्थिक और नैतिक दृष्टिकोण से भी सुसज्जित होते हैं।

हालांकि, इस मॉडल को लागू करने में शिक्षकों के प्रशिक्षण, संसाधनों की उपलब्धता, पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रणाली जैसी चुनौतियाँ सामने आती हैं। इन चुनौतियों का समाधान करके और सुझावों को अपनाकर NEP 2020 के उद्देश्य को पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है। अंततः, यह नीति छात्रों को ज्ञान, कौशल और मूल्य के समन्वित विकास की दिशा में प्रेरित करती है और भारतीय शिक्षा को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाने में सहायक साबित होगी।

संदर्भ

1. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय। (2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020। नई दिल्ली: भारत सरकार।
2. शर्मा, आर। (2021)। भारत में समग्र शिक्षा: चुनौतियाँ और संभावनाएँ। दिल्ली: अकादमिक प्रेस।
3. वर्मा, एस। (2022)। "NEP 2020 में बहुविषयक दृष्टिकोण", शिक्षा और विकास पत्रिका, 15(2), 45-60।
4. अग्रवाल, पी। (2021)। उच्च शिक्षा में कला, वाणिज्य और विज्ञान का एकीकरण. जयपुर: शिक्षा प्रकाशन।

चुनावी राजनीति में पत्रकारिता की भूमिका

डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव*

सारांश –

पत्रकारिता आधुनिक युग का एक प्रमुख व्यवसाय है जिसमें समाचारों का एकत्रीकरण लिखना जानकारी एकत्रित करके पहुॅचाना सम्पादित करना और सम्यक प्रस्तुतीकरण आदि सम्मिलित है। आज के युग में पत्रकारिता के भी अनेक माध्यम हो गये है। जैसे अखबार, पत्रिकायें, रेडियों, सोशल मीडिया, दूरदर्शन वेब–पत्रकारिता आदि। बदलते वक्त के साथ बाजारबाद और पत्रिकारिता के अन्तर्सम्बन्धों ने पत्रकारिता की विषय–वस्तु तथा प्रस्तुति शैली में व्यापक परिवर्तन किए। राजनीतिक संचार मानव–समाज का सुनियोजित तंत्र है। राजनीतिक संचार प्रणाली का ढांचा अपने सुपरिभाषित माध्यम के साथ मानव समाज के आवरण की तरह है। राजनीतिक संचार का प्रवाह गतिशील सामाजिक तथा विकास की दिशा एवं गति को निर्धारित करता है।

मुख्य शब्दः– पत्रकारिता, स्थानीय जनजीवन, राजनीतिक ,आतंरिक संबंध, मीडिया, सम्पादकीय, समाज

प्रस्तावना –

पत्रकार की गुणवत्ता तभी निखर सकती हैं, जब पूरी विवेक क्षमता के साथ वह एक बेहतर प्रस्तुति के लिय श्रम करें और उसके उद्देश्यों में अनुशासन एवं एकरूपता हो। इस हेतु श्रेष्ठ सामग्री का पूरी निष्ठा, निष्पक्षता तथा सकारात्मक चिंतन से चयन जितना जरूरी हो, उतनी ही जरूरी कुछ बातें हैं, जिनमें सर्व प्रमुख है तथ्य का विश्वसनीय होना। इसके साथ ही भाषा, शीर्षक समाचार से अत्याधुनिक एवं नवीनतम् जानकारी से पूर्णता महत्वपूर्ण तथ्य है। पत्रकारिता में उभरा संवाद तात्कालिक एवं कम आयु का रहता है जो हर दूसरे दिन किसी नये रूप में जन्म लेता है। पत्रकारिता की पहली शर्त है कि पाठकों के बीच जो कुछ लिखकर या दृश्यमान जाये वह सरल भाषा में हो। मीडिया या पत्रकारिता चूॅकि संपूर्ण जन–जीवन के हालातों को जोड़ता है, अतः वह किसी एक वर्ग की आशा–आकांक्षाओं का पूरक नहीं रहता भले मीडिया संस्थान का संचालनकमंडल, उस क्षेत्र में पूॅजी निवेश कर मीडिया तंत्र को स्थापित करे किन्तु उसके सद्भावी उद्देश्यों की पूर्ति करेन हुए मीडियाकर्मी को लोकधर्म को यानी खबरों की निष्पक्षता से जन–जुड़ाव की सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए। यदि ऐसा करने में वह विफल होता है तथा परिणाम स्वरूप मीडिया में अविश्वास हुआ या उसकी गरिमा आहत हुई तो यह जन आक्रोश या जन–उपेक्षा का शिकार होकर क्षतिग्रस्त हो जाता है। उसे जनता के हर वर्ग से न्याय करना ही होगा और ऐसा न होने पर मीडिया या पत्रकारिता ही दोषी मानी जाती है। जैसा कि इन दिनांक इलेक्ट्रानिक मीडिया एवं प्रिंट मीडिया में कभी –कभी सुना जाता है।

उद्देश्य–

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य वर्तमान समय में प्रत्रकारिता एवं राजनैतिक अतः संबंध एवं उपयोगिता को ज्ञात करना है। इसमें यह भी लक्षित रहा है कि राजनैतिक गतिविधियों में मीडिया की क्या भूमिका रही है।

परिकल्पना –

वर्तमान समय में राजनैतिक गतिविधियों को जनता तक पहुचाने नई विकास योजनाओं एवं राजनैतिक बदलाव की जानकारी का एक मात्र माध्यम मीडिया ही है।

शोध प्रविधि –

प्रस्तुत शोध प्रबंध में मुख्य रूप से द्वितीयक एवं तथ्यात्मक आकड़ों का उपयोग किया गया है। आवश्यकतानुसार प्राथमिक समकों का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण –

मानवीय व्यवहार, खान–पान, व्यवसाय कारोबार, शिक्षा जातीय व्यवस्था समाजिक जीवन की चहलपहल जिनमें क्रीड़ा और कला के अतिरिक्त राजनैतिक, आर्थिक गतिविधियों है।, मीडिया के माध्यम से

* गेस्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म0प्र0)
मोः–8808694208, मेल आई डी :–ysurendra53@gmail.com

जनता के बीच जाये तो वे विश्वनीय हों एवं मानव जाति के अहितकर न हों। मीडिया यानी पत्रकारिता को मानवता के संदर्भ में स्वेच्छाचारी या अत्याचारी नहीं कहलाना चाहिये। वह वर्ग समानता असमानता के बीच कोई अवांछित हथियार न बनें। यह समय खबरों के भीतर की खबरों की तथा नई तकनीकों के दौर का है। इसे ठीक से समझकर अधुनिक व्यवस्थाओं से टी.बी. एवं लेखन की पत्रकारिता को नित्य परिमार्जित करना होगा, तब ही वह व्यवस्था बाजार या समाज में स्वीकार्य होगी। मैंने एक संदर्भ हम और हमारी की पुस्तक में यह निवेदन नई पीढ़ी के पत्रकार साथियों से किया है कि समाचार पत्र जगत के अधिकारों की शक्ति के साथ–साथ अब समाचार पत्रों में कार्यरत् पर कर्तव्य का भी बड़ा बोझ है। उन्हें सत्य को हर कीमत पर ठीक से एवं गंभीरता के साथ प्रस्तुत करना हैं तथ्यों को संतुलित रूप से प्रस्तुत करना है तथा उसे मानवता के लिए प्रमाणिकता के साथ और पूर्णता के साथ प्रस्तुत करना है। व्यावसायिक पत्राकारिता में यह बहुत ही कठिन कार्य है। प्रेस कौंसिल या अम्बरडरमैन जैसी व्यवस्थाओं से जुड़कर प्रेस यदि अपनी स्वतंत्रता को खोता है तो यह समाचार पत्र जगत की अपनी गलतियों को खामियाजा होगा। अब यह पत्रकार पर निर्भर करेगा कि वह जिस व्यवसाय की पवित्रता से जुड़ा है उसकी स्वतंत्रता और शक्ति को वह किस तरह उतनी उचाई और पवित्रता से जोड़कर रखें, क्योंकि इस हेतु उसे प्रतिदिन किसी न किसी समाचार को बनाना है और उसमें शब्दों या मुहावरों का प्रयोग करना है।

आज बदलते आयाम में प्रिन्ट मीडिया एवं इलेक्ट्रनिका का समाज के उत्थान में महत्वपूर्ण योजना है। पुस्तक में यह निवेदन नई पीढ़ी के पत्रकार साथियों से किया है कि समाचार पत्र जगत के अधिकारों की शक्ति के साथ–साथ अब समाचार पत्रों में कार्यरत् पत्रकारों पर कर्तव्य का भी बड़ा बोझ है। उन्हें सत्य को हर कीमत पर ठीक से एवं गंभीरता के साथ प्रस्तुत करना हैं तथ्यों को संतुलित रूप से प्रस्तुत करना है तथा उसे मानवता के लिए प्रमाणिकता के साथ और पूर्णता के साथ प्रस्तुत करना है। व्यावसायिक पत्रकारिता में यह बहुत ही कठिन कार्य हैं प्रेस कौंसिल या अम्बरडमैन जैसी व्यवस्थाओं से जुड़कर प्रेस यदि अपनी स्वतंत्रता को खोता है तो यह समाचार पत्र जगत की अपनी गलतियों का खामियाजा होगा । अब यह पत्रकार पर निर्भर करेगा कि वह जिस व्यवसाय की पवित्रता से जुड़ा है उसकी स्वतंत्रता और शक्ति को वह किसी तरह इतनी उॅचाई और पवित्रता से जोड़कर रखें, क्योंकि इस हेतु उसे प्रतिदिन किसी न किसी समाचार को बनाना है और उसमें शब्दों या मुहावरों का प्रयोग करना है। ऐसा ही नहीं है कि इस बड़ी जिम्मेदारी या शब्दों के द्वंद में अपनी भीतर के पत्रकार को ही नष्ट कर ले। यदि उसे विजेता बनना है तो उसे पत्रकारिता के शब्द –संसार में जीना सीखना होगा, उसके शब्दों में सुधार की क्षमता पैदा करनी होगी, उसे स्वयं के पत्रकार से साक्षात्कार करने के लिए पत्रकारिता और उसकी परम्परा की हर शिक्षा लेनी होगी, इसकी परवाह किये बिना ही वह किसी डेस्कका इंचार्ज है। या उसकी प्रसिद्धि पर उसे कौन सराहेगा । उसे प्रजातंत्र के सार्वभौमिक स्वीकार्य सिद्धांतों और स्वयं पत्रकारिता के प्रति स्वयं को प्रतिबद्ध रखना होगा। यह एक आदर्श चुनौती हर पत्रकार के लिए वर्तमान समय के साथ आज खड़ी है। यदि आज का पत्रकार जापान के सूमो पहलवान की तरह भारी भरकम माहौल लेकर कलम को तलवार बनाकर हवा में तलवार लहराए या हवा में मुक्केबाजी करे तो शायद वह समाज का हितचिंतक बनने की बजाए समाज में कुप्रतिष्ठा अर्जित करेगा। अपने अतीत के प्रति गौरवान्वित भारतीय पत्रकारिता का मिशन राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दिनों में स्वतंत्रता आकाक्षी राष्ट्र का निर्माण था। वह राष्ट्र के उत्थान के लिए शक्तिशालियों की दासी बन उनकी चाटुकारिता में ही अपना हित देखती है। निश्चित ही इन भाव–विचारों के बीच आज के दौर में इस बात को भी नहीं नकारा जा सकता है कि युग के अनुकूल परिस्थितियाँ बनती और बिगड़ती हैं। पहले धर्मदण्ड राज्य व्यवस्था से ऊपर माना जाता था तथा वह राजा के कर्तव्यों के निर्धारण के साथ आवश्यता पड़ने पर उसके अनैतिक आचरण के विरुद्ध दण्ड भी देने की शक्ति रखता था, जबकि वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था के अन्तर्गत सेक्युलर राज्य की अवधारणा ने धर्मदण्ड की शक्ति का ह्रास किया है, अब राज्य की लोकतांत्रिक व्यवथा में जनता का चुना हुआ प्रतिनिधि (नेता) ही सर्वशक्तिमान है और राजनीतिक सत्ता सर्वोपरि है। भारतीय संविधान के तीन प्रमुख स्तम्भ हैं सत्ता चलाने वाले (एक्जिक्युटिव्ह), कानून बनाने वाले (लेजिस्लेटिव्ह) तथा न्याय देने वाले (ज्यूडिशिअरी)। इन तीन स्तम्भों के सहारे ही भारतीय राज्य व्यवस्था का सम्पूर्ण तानाबाना बुना हुआ है। मंत्री परिषद् कोई योजना या नियम बनाती है, उसकी अच्छाई–बुराई को जनता के सामने रखना मीडिया की जिम्मेदारी है। जिसे वह अपने जन्मकाल से स्वतंत्र रूप से करती आ रही है। इसके बारे में भारतीय संविधान की 19वीं धारा में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में अधिकार के अंतर्गत विस्तार से दिया गया है। इस अनुच्छेद ने मीडिया को सार्वभौमिक शक्ति प्रदान की है जिससे वह प्रत्येक स्थान पर अपनी

पैनी नजर रखते हुए स्व विवेक के आधर पर घटना से सम्बन्धित सही–गलत का निर्णय कर सके। यह ओर बात है कि जाने–अनजाने मीडिया की इस नजर से अनेक भ्रष्ट लोग हर रोज आहत होते हैं। ऐसे लोग आए दिन माँग भी करते हैं कि मीडिया पर ऍकुश लगना चाहिए। उनका तर्क है कि जब कानून का शिकंजा सभी पर कसा हुआ है फिर मीडिया क्यों उससे अछूती रहे? खासकर मीडिया और राजनीति के अंतर्सम्बन्धों को लेकर यह बात बार–बार उछाली जाती है।

15 अगस्त 1947 से आजाद गणतंत्र के रूप में भारत ने जिस शासन प्रणाली को स्वीकारा है वह जनता का जनता द्वारा जनता के लिए संचालित लोकतंत्रात्मक शासन है, जिसमें प्रगति के पथ पर पीछे छूट चुके वयक्ति की चिंता रखना और उसके हित में कार्य करने को सबसे अधिक वरीयता दी गई है। इस व्यवस्था में जनता से चुने गए प्रतिनिधि शासन का संचालन करते हैं, यह प्रणाली जन प्रतिनिधियों को अपार अधिकार प्रदत्त करती है। चूँकि मीडिया जनता के प्रति जबावदेह है इसलिए वह भारतीय समाज के लक्ष्य के प्रति समर्पित थी। तब की पत्रकारिता और आज की पत्रकारिता में तात्विक परिर्वन यही है कि आज वह खबरों के कारोबार का स्वरूप ले रही है। उसकी खबरों में देश की राजनीति कारोबार नई–पुरानी पीढ़ी अथवा समाज के हर घटक की गतिविधि का बिम्ब है। पत्रकारिता की इस स्थिति में यह बदलाव केवल भारत में नहीं है। जैसे–जैसे विश्व की सूना प्रौद्योगिकी विकसित हुई उसका ब्राड स्वरूप सम्पूर्ण विश्व में बनता गया है। भारतीय समाचार पत्र जगत में पाश्चात्य समाचार पत्र की तकनीकी अनुगमन ही नहीं हुआ अपितु वैचारिक घरातल पर भी बहुत कुछ स्वरूप स्वीकारने की स्थितियाँ बनीं धन और संचार की पाश्चात्य जीवन शैली से जुड़ी पत्रकारिता ने भारत की आजादी के पश्चात् तेजी से अपने पैर भारत में पसारे तथा धीरे–धीरे भारत को अपने उत्पादन ही नहीं विचारों तक का धरातल दे दिया। आज विश्व की बहुराष्ट्रीय कंपनियों का बाजार यदि भारत बन चुका है तो यह स्थिति भी बन रही है कि भारतीय पत्रकारिता में विदेशी पूँजी का विनिमय हो। इस नये दौर से भारतीय समाज की आत्मा चिंतित जरूर हो रही है किन्तु कथित विदेशी मीडिया जिस दिन भारत के लोकतंत्र को अपनी लाठी से हाकेगा तब की स्थिति और क्या होगी? इसे सोचना आवश्यक है। 1975 का भारत का आपातकाल यदि राष्ट्रीय शोक था तो देश की स चौथी सत्ता के लिए वर्तमान के दौर से निर्मित हो रही नई चुनौतियाँ भी कम गंभीर नहीं है। हमारे स्वाधीन भारत के समाज और उसके संवैधानिक सिद्धांत जो पत्रकारिता की सफलता और व्यक्ति के स्वत्व–रक्षण की गारन्टी अथवा हित रक्षा का सबाल है उसे अक्षुण्ण रखना तथा कैसे रखा जाए? इस पर पुनर्विचार की अब महती आवश्यकता है।

मीडिया में प्रिंट हो या इलेक्ट्रानिक दोनों के विषय में जनमानस के बीच अनेक प्रकार के विचार सुनने को मिलते हैं, कोई इसे वर्तमान और भविष्य की दिशा तय करने वाला सशक्त माध्यम मानता है तो कुछ इसके बारे में ऐसी भी धारणा रखते हैं कि आजादी के बाद इसने अपना नैतिक स्तर खो दिया है। यह सिद्धांतों के लिए समर्पित नहीं, व्यक्ति सापेक्ष हो गई है। पत्रकारिता समाज व राष्ट्र की प्रबोधिनी न होकर बाहुबलियों और इलेक्टॅनिक मीडिया द्वारा जो बड़े–बड़े खुलासे किये गये, वह समय–समय पर पत्रकार को मिली राजनेताओं की मदद–सूचना एवं सहयोग का परिणाम है। वस्तुतः पत्रकार को राजनेता से बने आपसी सम्बन्धों का लाभ जीवन भर मिलता है। एक पत्रकार उस नेता को जिसका उससे मित्रवत् व्यवहार है आवश्यकतानुसार उसे प्रोत्साहित करता है, उसके हित में समाचार लिखता है। जब पत्रकार कोई नकारात्म समाचार लिखता है तब भी वह अप्रत्यक्ष जनता का हित ही साध रहा होता है। आप राजनीति और मीडिया के इन अतर्सम्बन्धों को चाहें तो स्वाथ के सम्बन्ध ही कह सकते हैं बावजूद इसके यह नकारा नहीं जा सकता कि पत्रकार द्वारा धन–यश प्राप्ति के लिए किया गया प्रयास सदैव आमजन के हित में रहा है। जब एक नेता, दूसरे नेता की तथा प्रशासक–कर्मचारी दूसरे अधिकारी–कर्मचारी की खामियों, नीतियों, उनके काले कारनामों को उजागर करते हैं तब प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष वह जनहित से जुड़े विषयों को मीडिया में रखने का कार्य करते हैं।

स्वाधीनता आंदोलन के समय और उसके बाद भारत में मूल्यों के संरक्षण संवर्धन तथा उनकी स्थापना का कार्य मीडिया निरंतर कर रही है। यही उसे लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का संरक्षक बनाता है। जब तक भारत में लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था रहेगी तब तक मीडिया और राजनीति में अन्तर्सम्बन्ध बने रहेंगे। इस पर कोई भी बहस की जाए वह अधूरी रहेगी।

पत्रकारिता और विचार के मध्य अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। पत्रकारिता विचारों के संवहन का सबसे सशक्त माध्यम है। परन्तु पत्रकारिता की वैचारिकी की सबसे महत्वपूर्ण विशिष्टता है उसका समष्टिवादी स्वरूप। समष्टिवादी स्वभाव और संस्कार निरन्तरता में पत्रकारिता के साथ सदैव जीवन्त रहा है।

सन् 1977 में कोलकाता में जब जेम्स आगस्टस हिकी ने भारत में सबसे पहले प्रेस की स्थापना की और 1980 से बंगाल गजट एण्ड कैलकटा जनरल एडवरटाइजर नामक दो पन्नों का अखबार शुरू किया था तब और उसके बाद प्रकाशित समाचार पत्र–पत्रिकाएँ उदन्त मार्तण्ड हरिश्चन्द्र मैगजीन, सर्वहित कारक, प्रजाहित, बनारस अखबार, प्रजाहितेषी, सरस्वती, बाल बोधनी, भारत जीवन, हिन्दी प्रदीप, ब्राम्हण, हिन्दुस्तान, अभ्युदय, प्रताप, कैसरी, कलकत्ता समाचार, स्वतंत्र, विश्वमित्र, विजय, आज, विशाल भारत, त्याग भूमि, हिंदू पंच, जागरण, स्वराज, नसयुग, हरिजन सेवक, विश्वबन्धु, हिन्दू,राष्ट्रीयता, चिंगारी, जनयुग, सनमार्ग आदि ही क्यों न हों, प्रायः आजादी के पूर्व निकले इन सभी समाचार पत्र–पत्रिकाओं पर अपनी नजर गड़ाए रखते हैं तथा व्यवस्था परिवर्तन के बारे में लिखते हैं।

निष्कर्ष –

आज मीडिया के उद्देश्यों को लेकर दो तरह की विचारधाराएँ प्रचलित हैं। एक मीडिया को शुद्ध व्यवसाय मानते हैं तो दूसरा वर्ग इसे जनसंचार का शक्तिशाली माध्यम होने के कारण जनकल्याण कारक, नैतिक मूल्यों में अभिवर्ध्दाक, विश्व बन्धुत्व और विश्व शांति के लिये महत्वपूर्ण मानता है। दोनों के ही अपने–अपने तकै हैं। वस्तुतः इन तर्कों के आधार पर कहा जा सकता है कि वर्तमान पत्रकारिता जहाँ व्यवसाय है वहीं परस्पर प्रेम, जानकारी और शक्ति बढ़ाने का माध्यम भी है। बोफोर्स, तेलगी, नोट कांड, भ्रष्टाचार से जुड़ी तमाम धांधलियाँ, भारत की सीमाओं में अवैध घुसपैठ, नकली करेन्सी, हवाला के जरिए धन का आवागमन, आतंवादी गतिविधियाँ और कुछ माह पूर्व आई लिबहान रपट ही क्यों न हो। समाचार पत्र–पत्रिकाओं से वर्तमान का अपने अंग में समाहित किये हुए था। सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक रूप से पत्रकारिता ने अपनी रचना धर्मिता को एकरूपता में निरन्तरता प्रदान की है। इसी तथ्य को दृष्टिपथ में रखकर पत्रकारिता को संघर्ष की निरन्तरता का प्रतीक माना जाता है। अतीत के तथ्यों की व्याख्या वर्तमन की दृष्टि से करना समीचीन होता है। वर्तमान दृष्टि से अतीत की व्याख्या में सदैव नवीन तथ्यों के प्रकाश में आने की सम्भावना विद्यमान रहती है। नवीनता वर्तमान की जड़ता को तोड़ता है तथा ऐसे गद्यात्मक विचारों का सृजन करता है जिससे वर्तमान लाभान्वित होता है और इसी से अतीत की वर्तमान में उपादेयता निर्धारित होती है। अतीत से वर्तमान को जोड़ने की आवश्यकता इसीलिए अनिवार्य होती है। कोई भी नागरिक समाज अपने अतीत को विस्मित कर विकास के महत्तम शिखर को स्पर्श नहीं कर पाता है।

पत्रकारिता और पत्रकारिता और राजनीति के संबंध रीवा संभाग में भी पारंभ से ही पाये गये है।। यहां पत्रकारिता से राजनीति की ओर जाने वाले बहुत से शिखर पुरुष हुए हैं, जिन्होंने न केवल पत्रकारिता में अपनी पहचान बनाई वरन् राजनीति में भी वे शिखर तक पहुँचे। रीवा संभाग में पत्रकारिता और राजनीति के संबंधों ने संभाग में विकास के लिए बड़ी भूमिका अदा की है यही नहीं रीवा संभाग में पत्रकारिता ने राजनीति के नये सिद्धांतों का भी प्रतिपादित किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

- डॉ. उपाध्याय, अनिल कुमार – पत्रकारिता और जनसंचार, सिद्धांत एवं विकास, भारती प्रकाशन, 2008
- डॉ. पाण्डेय, रवि प्रकाश, वैश्वीकरण एवं समाज, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005
- शर्मा, कुमद, भूमण्डलीयकरण और मीडिया, ग्रन्थ अकादमी, नई दिल्ली, 2003
- डॉ. तिवारी, अर्जुन – आधुनिक पत्रकारिता, विश्वविद्यालय प्रकाशन वारायणसी, 2004
- प्रो. हरिमोहन – सूचना प्रौद्योगिकी और जन माध्यम, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
- डॉ. एस. अखिलेश, रीवा दर्शन, गायत्री पब्लिकेशन रीवा 2004
- राजकिशोर – पत्रकारिता के नये परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2007
- सिंह निशांत – पत्रकारिता लेखन कला, ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2008
- गप्ता डॉ. यू.सी. – इलेक्ट्रानिक्स मीडिया एवं सूचना प्रोद्योगिकी अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 2004
- वधवा, डॉ.एसः भारतीय राजनीति और प्रशासन, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली 1989।
- मिश्र, डॉ.जे.एस.ः राजनीति विज्ञान के सिद्धांत, रवि प्रकाशन वाराणसी 2001।
- त्रिवेदी डॉ.आर.एस.एवं राम डॉ.एम.पी. भारतीय सरकार एवं राजनीति कालेज बुक डिपो जयुपर 1997।

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन

मीनाक्षी शर्मा*
प्रो. रीना जैन**

सारांश

यह अध्ययन उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किया गया हैं। प्रयोग के लिए न्यादर्श के रूप में जयपुर जिले के दो सरकारी व दो निजी विद्यालयों के उच्च प्राथमिक स्तर के कुल 128 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि के माध्यम से किया गया। अध्ययन में अर्द्ध–प्रयोगात्मक शोध विधि का प्रयोग किया गया, जिसके अंतर्गत कुल 128 विद्यार्थियों को दो समूह–एक नियंत्रित समूह (60 विद्यार्थी) व एक प्रायोगिक समूह (68 विद्यार्थी) में विभाजित किया गया। विद्यार्थियों के चिंतन कौशल के मापन के लिए शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित चिंतन कौशल परीक्षण का उपयोग किया गया। अध्ययन के निष्कर्ष से स्पष्ट होता है कि पारंपरिक अधिगम विधि की तुलना में अनुभवात्मक अधिगम विधि से अधिगम कार्य करने वाले विद्यार्थियों के चिंतन कौशल में अधिक वृद्धि होती हैं।

मुख्य शब्दावली : अनुभवात्मक अधिगम, चिंतन कौशल, उच्च प्राथमिक स्तर

परिचय

अनुभवात्मक अधिगम (Experiential Learning- EL)

परंपरागत शिक्षण प्रणाली में विद्यार्थी मुख्यतः शिक्षक पर निर्भर होते हैं और ज्ञान को निश्चित रूप से ग्रहण करते हैं। इसके विपरीत अनुभवात्मक अधिगम (Experiential Learning- EL) विद्यार्थियों को स्वयं करके सीखने के लिये प्रेरित करता है। जॉन डीवी और डेविड कोल्ब जैसे शिक्षाविदों ने इस अधिगम को 'करते हुए सीखना' की संज्ञा दी है। इस विधि से विद्यार्थी न केवल विषयों की गहराई से समझ प्राप्त करके शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि करते हैं बल्कि आत्मविश्वास, समस्या समाधान और तार्किक चिंतन जैसे कौशल भी विकसित करते हैं। अनुभवात्मक अधिगम एक ऐसी शिक्षण प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थी प्रत्यक्ष अनुभवों, गतिविधियों और व्यावहारिक कार्यों के माध्यम से ज्ञान अर्जित करते हैं। यह पारंपरिक रटने या केवल सुनने–पढ़ने पर आधारित अधिगम से अलग होता है क्योंकि इससे विद्यार्थी स्वयं करके सीखते हैं। यह केवल विषयवस्तु को याद रखने का माध्यम नहीं है बल्कि यह विद्यार्थियों के उच्चस्तरीय चिंतन कौशल जैसे विश्लेषण, रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच और निर्णय लेने की क्षमता को सक्रिय रूप से विकसित करता है। अतः शिक्षकों को चाहिए कि वे ऐसे शिक्षण वातावरण का निर्माण करें जिससे विद्यार्थी अनुभवों के माध्यम से सोचें, समझें और सीखें।

अनुभवात्मक अधिगम की विशेषताएं

1. सीखने का सक्रिय रूप
2. प्रत्यक्ष अनुभव पर आधारित
3. संदर्भ आधारित और व्यावहारिक
4. स्व–निर्देशित और आत्म मूल्यांकन केंद्रित
5. सहयोगात्मक और संवादात्मक

अतः अनुभवात्मक अधिगम एक प्रभावशाली शैक्षिक पद्धति है जो विद्यार्थियों के भीतर ज्ञान का विकास कर उन्हें एक सक्षम, रचनात्मक और विचारशील व्यक्ति बनाती हैं।

* शोधार्थिनी, स्कूल ऑफ एजुकेशन, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर (राज.)
** शोध निर्देशिका, स्कूल ऑफ एजुकेशन, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर (राज.)

चिंतन कौशल *(Thinking Skill)*

चिंतन कौशल वे मानसिक क्षमताएं हैं, जो किसी व्यक्ति को समस्याओं को समझने, उनका विश्लेषण करने, समाधान खोजने, निर्णय लेने और रचनात्मक रूप से सोचने में मदद करती हैं। चिंतन कौशल विद्यार्थियों को संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं का रणनीतिक रूप से उपयोग करने में सक्षम बनाते हैं ताकि वे जानकारी को–

- एकत्र कर सकें (Gather)
- विश्लेषण कर सकें (Analyse)
- मूल्यांकन कर सकें (Evaluate)
- सृजन कर सकें (Create)
- प्रयोग कर सकें (Use)

इस कौशल की सहायता से वे तर्कसंगत निर्णय ले सकते हैं, नए विचार उत्पन्न कर सकते हैं और समस्याओं का समाधान खोज सकते हैं।

चिंतन कौशल का शैक्षिक महत्वः

- ज्ञान को केवल याद रखने के बजाय उसे समझना और विभिन्न संदर्भों में लागू करना संभव बनाता है।
- यह छात्रों को आत्मनिर्भर, नवाचारी और जिज्ञासु बनाता है।
- प्रभावी अधिगम के लिए यह अत्यंत आवश्यक है।

इस प्रकार चिंतन कौशल न केवल बेहतर शिक्षा और अधिगम के लिए आवश्यक हैं, बल्कि ये जीवन के हर क्षेत्र में सफल होने के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। शिक्षकों और शिक्षार्थियों दोनों को चाहिए कि वे इन कौशलों को पहचानें, विकसित करें और अभ्यास करें।

समस्या का औचित्य

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में विषय के ज्ञान के लिए स्मरण या रटने की क्रिया पर बल दिया जाता है, जिसमें विद्यार्थी बिना चिंतन, मनन, बिना अनुभव, बिना प्रयोग किए तथ्यों, नियमों व सिद्धांतों को रट लेते है, जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षण अधिगम प्रक्रिया अरुचिकर तथा प्रभावहीन हो जाती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अधिक सरल, सुगम व प्रभावी बनाने के लिए अनुभवात्मक अधिगम जैसी शिक्षण विधियों का उपयोग करना आवश्यक है। विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने के साथ साथ विद्यार्थियों द्वारा स्वयं करके सीखना चिंतन–मनन करना, विचार–विमर्श करना, नियम प्रतिपादित करना, प्रायोगिक कार्यों द्वारा सीखना आदि के लिए अनुभवात्मक अधिकरण विधियों का प्रयोग करना शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों ने लिये आवश्यक है।

नई शिक्षा नीति (2020) भविष्य में अनुभवात्मक अधिगम की प्रक्रिया पर ज़ोर दे रही है। इसके अनुसार विद्यालय अपनी कक्षाओं के भीतर और बाहर व्यवहारिक सीखने के दृष्टिकोण को बढ़ावा देने के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं, जिसमें व्यावहारिक शिक्षा, कला एकीकृत शिक्षा, खेल एकीकृत शिक्षा, कहानी आधारित शिक्षा, विभिन्न विषयों के बीच संबंध आदि को शामिल किया गया है। विभिन्न शोध कार्यों का अध्ययन करने के पश्चात शोधार्थी के मन में यह प्रश्न आया कि क्या विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के साथ उनके चिंतन कौशल में भी अनुभवात्मक अधिगम द्वारा सुधार किया जा सकता हैं? उपरोक्त प्रश्न का उत्तर जानने के लिए शोधार्थी ने निम्न समस्या पर शोधकार्य करने का निर्णय किया–

समस्या कथन

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन।

शोध के उद्देश्य

1. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियोंके चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

1. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित व प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

2. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित व प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।
3. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित व प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।
4. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित व प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।
5. उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशलके प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

जनसंख्या

प्रस्तुत अध्ययन के लिए शोधार्थी द्वारा जयपुर जिले के झोटवाडा और सांगानेर खण्ड के सोडाला और नाईवाला क्षेत्र के 14 निजी और 7 सरकारी विद्यालयों में कक्षा 7 में अध्ययनरत विद्यार्थियों को लिया गया है, जिनकी कुल संख्या 542 हैं।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा यादृच्छिक न्यादर्श विधि की लॉटरी विधि का उपयोग करते हुए, चार उच्च प्राथमिक विद्यालयों (2 सरकारी विद्यालय +2 निजी विद्यालय) में से 7वीं कक्षा में अध्ययनरत 128 विद्यार्थियों का चयन किया गया। अध्ययन के लिए उन्हें समान विशेषताओं वाले समूहों में विभाजित किया गया। समूह बनाने से पहले, समानता बनाए रखने के लिए सेक''ान ए और सेक''ान बी में विभाजित किया गया।

विद्यालय का नाम	समूह		कुल विद्यार्थी
	नियंत्रित	प्रायोगिक	
रा.उ. माध्यमिक विद्यालय सोडाला जयपुर	13	13	26
रा.उ. प्राथमिक विद्यालय नाईवाला जयपुर	12	10	22
श्रीराम पब्लिक स्कूल सोडाला जयपुर	17	18	35
अनुराधा कॉन्वेंट स्कूल नाईवाला जयपुर	18	27	45
कुल विद्यार्थी	**60**	**68**	**128**

शोध विधि

प्रस्तुत शोधकार्य में अर्द्धप्रयोगात्मक शोध विधि का प्रयोग किया गया हैं।

शोध उपकरण व सांख्यिकी

प्रस्तुत अध्ययन में उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभाव का अध्ययन करने के लिये स्वनिर्मित चिंतन कौशल परीक्षण का प्रयोग किया गया हैं। प्रदत्तो का विश्लेषण t.परीक्षण के माध्यम से किया गया हैं।

प्रदत्तो का विश्लेषण

परिकल्पना 1. – उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व परीक्षण प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 1

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पूर्व परीक्षण तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	स्वीकृत/अस्वीकृत
नियंत्रित	25	14.16	3.17	0.00	स्वीकृत
प्रायोगिक	23	14.17	4.19		

उपरोक्त सारणी 1 में सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पूर्व परीक्षण सार्थक अंतर का विष्लेषण किया गया है। नियंत्रित समूह और प्रायोगिक समूह

के सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल का मध्यमान क्रमशः 14.16 और 14.17 तथा मानक विचलन का मान क्रमशः 3.17 और 4.19 प्राप्त हुआ है। दोनों समूह के टी का मान 0.00 प्राप्त हुआ है। यह मान डीएफ 46 पर विश्वसनीयता स्तर .05 के तालिका मान से कम पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि परीक्षण पूर्व सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के मध्य सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना 'उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है' स्वीकृत होती है। उपचारात्मक परीक्षण से पूर्व सरकारी विद्यालय के दोनों समूहों के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल में कोई अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना 2. – उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 2

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पश्च परीक्षण तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	स्वीकृत/अस्वीकृत
नियंत्रित	25	18.12	2.99	4.14	अस्वीकृत
प्रायोगिक	23	21.30	2.24		

उपरोक्त सारणी 2 में सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च परीक्षण सार्थक अंतर का विष्लेषण किया गया है। नियंत्रित समूह और प्रायोगिक समूह के सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल का मध्यमान क्रमशः 18.12 और 21.30 तथा मानक विचलन का मान क्रमशः 2.99 और 2.24 प्राप्त हुआ है। दोनों समूह के टी का मान 4.14 प्राप्त हुआ है। यह मान डीएफ 46 पर विश्वसनीयता स्तर .05 के तालिका मान से अधिक पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि परीक्षण पश्चात सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के मध्य सार्थक अंतर है। अतः परिकल्पना 'उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है' अस्वीकृत होती है। अतः अनुभवात्मक अधिगम द्वारा शिक्षण के उपरांत प्रायोगिक समूह के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल में वृद्धि देखी गई। इस आधार पर यह कह सकते हैं कि अनुभवात्मक अधिगम द्वारा विद्यार्थियों की सकारात्मक सोच में वृद्धि होती है एवं उन्हें स्वयं करके सीखने की प्रेरणा मिलती हैं।

परिकल्पना 3. – उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 3

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पूर्व परीक्षण तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	स्वीकृत/अस्वीकृत
नियंत्रित	35	14.14	3.77	0.17	स्वीकृत
प्रायोगिक	45	14.28	3.53		

उपरोक्त सारणी 3 में निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के पूर्व परीक्षण सार्थक अंतर का विष्लेषण किया गया है। नियंत्रित समूह और प्रायोगिक समूह के निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल का मध्यमान क्रमशः 14.14 और 14.28 तथा मानक विचलन का मान क्रमशः 3.77 और 3.53 प्राप्त हुआ है। दोनों समूह के टी का मान 0.17 प्राप्त हुआ है। यह मान डीएफ 78 पर विश्वसनीयता स्तर .05 के तालिका मान से कम पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि परीक्षण पूर्व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के मध्य सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना 'उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पूर्व प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है' स्वीकृत

होती है।निजी विद्यालय के नियंत्रित व प्रायोगिक दोनों समूह के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल मे अनुभवात्मक अधिगम से पूर्व परीक्षण में कोई अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना 4. – उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 4

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौषलकी पश्च परीक्षण तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	स्वीकृत/अस्वीकृत
नियंत्रित	35	17.71	2.76	5.10	अस्वीकृत
प्रायोगिक	45	20.88	2.75		

उपरोक्त सारणी 4 में निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पश्च परीक्षण सार्थक अंतर का विष्लेषण किया गया है। नियंत्रित समूह और प्रायोगिक समूह के निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल का मध्यमान क्रमशः 17.71 और 20.88 तथा मानक विचलन का मान क्रमशः 2.76 और 2.75 प्राप्त हुआ है। दोनों समूह के टी का मान 5.10 प्राप्त हुआ है। यह मान डीएफ 78 पर विश्वसनीयता स्तर .05 के तालिका मान से अधिक पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि पश्च परीक्षण निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित समूह एवं प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के मध्य सार्थक अंतर है। अतः परिकल्पना 'उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के नियंत्रित और प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है' अस्वीकृत होती है। अतः अनुभवात्मक अधिगम के द्वारा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्राइवेट समूह के चिंतन कौशल में वृद्धि देखी गई। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि अनुभवात्मक अधिगम द्वारा विद्यार्थियों में निर्णय करने, संकलन करने, नए विचार उत्पन्न करने, आलोचनात्मक विश्लेषण करने जैसी क्षमताओं का विकास किया जा सकता है।

परिकल्पना 5. – उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

सारणी 5

उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	'टी' मान	स्वीकृत/अस्वीकृत
सरकारी प्रयोगिक समूह	23	17.30	2.24	5.30	अस्वीकृत
निजी प्रायोगिक समूह	45	20.88	2.75		

उपरोक्त सारणी 5 में सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल की पश्च परीक्षण सार्थक अंतर का विष्लेषण किया गया है। प्रायोगिक समूह के सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल का मध्यमान क्रमशः 17.30 और 20.88 तथा मानक विचलन का मान क्रमशः 2.24 और 2.75 प्राप्त हुआ है। दोनों समूह के टी का मान 5.3 प्राप्त हुआ है। यह मान डीएफ 66 पर विश्वसनीयता स्तर .05 के तालिका मान से अधिक पाया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि पश्च परीक्षण सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के मध्य सार्थक अंतर है। अतः परिकल्पना 'उच्च प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के प्रायोगिक समूह के चिंतन कौशल के पश्च प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है' अस्वीकृत होती है। इसका संभावित कारण यह हो सकता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों का प्रेरणा स्तर, अभिभावकों का सहयोग, पारिवारिक परिवेश, विषय के अध्ययन हेतु समय एवं सकारात्मक सोच का स्तर निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा कम है। इस कारण निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल का स्तर सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक पाया गया।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध कार्य सरकारी व निजी विद्यालयों के उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल पर अनुभवात्मक अधिगम के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए किया गया। इस शोध कार्य हेतु विद्यार्थियों को नियंत्रित और प्रायोगिक दो समूहों में विभाजित करके क्रमशः पारंपरिक विधि व अनुभवात्मक अधिगम विधि का प्रयोग करके अधिगम करवाया गया। उपरोक्त शोध कार्य के निष्कर्ष से पता चलता हैं कि उपचारात्मक परीक्षण से पूर्व सरकारी व निजी दोनों विद्यालयों के नियंत्रित व प्रायोगिक समूह के विद्यार्थियों की चिंतन कौशल के स्तर में कोई अंतर नहीं पाया गया जबकि उपचारात्मक परीक्षण पश्चात अर्थात अनुभवात्मक अधिगम द्वारा सरकारी व निजी विद्यालय के प्रायोगिक समूह के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल के स्तर में वृद्धि देखी गई। इस आधार पर यह कह सकते हैं कि अनुभवात्मक अधिगम विद्यार्थियों के आलोचनात्मक चिंतन और समस्या समाधान कौशल को प्रभावी ढंग से विकसित करता है। यह उन्हें सक्रिय, चिंतनशील और सहयोगात्मक अधिगम प्रक्रियाओं में संलग्न करता है। परिणामस्वरूप विद्यार्थी परिस्थितियों का गहन विश्लेषण करने, उचित निर्णय लेने और नवोन्मेषी समाधान तैयार करने में अधिक सक्षम बन जाते हैं।

अध्ययन के निष्कर्ष से यह भी पता चलता है कि अनुभवात्मक अधिगम द्वारा पश्च–परीक्षण से सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल का स्तर निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के चिंतन कौशल के स्तर की तुलना में अपेक्षाकृत कम पाया गया। इसका कारण यह हो सकता है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों का पारिवारिक परिवेश, अभिभावकों का सहयोग, प्रेरणा स्तर एवं सकारात्मक सोच का स्तर निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षाकृत कम है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि अनुभवात्मक अधिगम द्वारा विद्यार्थियों के चिंतन कौशल का विकास होता है और उन्हें ज्ञान के वास्तविक जीवन में प्रेरणा हेतु प्रोत्साहन मिलता है। पारंपरिक पद्धति केवल तथ्यात्मक ज्ञान तक सीमित रहती है जबकि अनुभवात्मक पद्धति रचनात्मकता, आलोचनात्मक सोच व स्वयं करके सीखने को प्रोत्साहित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Chukwuere, J. E. (2024). Critical research thinking: A recipe for academic writing success and publications. Qeios. https://doi.org/10.32388/KNWPUJ
2. NSW Department of Education. (2024). Thinking skills. Education for a changing world. https://education.nsw.gov.au/teaching-and-learning/education-for-a-changing-world/thinking-skills
3. Somasundaram, S. (2023). The art and science of critical thinking in research: A guide to academic excellence. Researcher.Life. https://researcher.life/blog/article/the-art-and-science-of-critical-thinking-in-research/
4. Miami University Center for Teaching Excellence. (2023). Experiential Learning Strategies for Student Engagement. https://miamioh.edu/cte
5. Central Board of Secondary Education, Kumar, P., & Kumari, K. (2021). Experiential Learning. Central Board of Secondary Education.
6. Kong, Y. (2021). The role of experiential learning on students' motivation and classroom engagement. Frontiers in Psychology, 12, 771272. https://doi.org/10.3389/fpsyg.2021.771272
7. Kolb, D. A. (2015). Experiential learning: experience as the source of learning and development (2nd Ed). New Jersey: Pearson Education
8. Northern Illinois University Center for Innovative Teaching and Learning. (2012). Experiential Learning. https://www.niu.edu/citl/resources/guides/instructional-guide/experiential-learning.shtml

निराला के कथा – साहित्य में नारी

सुशीला गुप्ता*
डॉ. माधवम् सिंह**

मुख्य शब्द : ज्योतिर्मयी, शास्त्रिणी, प्रगतिशील, प्रेरणा–शक्ति, चाहरदीवारी, चरमोत्कर्ष, जीवन यथार्थ, सार्थकता संदिग्ध, छायावादी रूमानी, धार्मिक अन्धविश्वास, अन्तर्जातीय, आशंका, समस्या, भावुकतापरक, अनुमूल्यात्मक, विस्तृत, परिकल्पना, परिचालित, सुप्रसिद्ध, मनोनयन, अनिवार्यताओं, तरुणावस्था, मलयस्पवर्श, उल्लंघन, आलोक, समस्या के साथ–साथ, वैधव्य को धारण, वैधव्य शतगुण, प्रतिशोध, गांधीवादी भावना, प्रतिपाद्य, अपरा, संयोगवश, परित्यक्त, असंकुति, मुस्कुराती।

निराला ने अपने–साहित्य में स्त्रियों को उच्च स्थान दिया है। स्त्री– समस्याओं को उजागर किया है। उनके उपन्यास और कहानियों के शीर्षक नायिकाओं के नाम पर हैं। यथा–अलका, निरुपमा, प्रभावती, पद्मा और लिली, ज्योतिर्मयी, कमला, श्यामा, सुकुल की बीवी, श्रीमती गजानन शास्त्रिणी, देवी आदि। निराला की स्त्रियाँ प्रबुद्ध और प्रगतिशील भी हैं, सर्वत्र वे अपने अधिकार की माँग करती दिखाई देती हैं। वह अबला नहीं है, अपितु पुरुष की प्रेरणा–शक्ति हैं। उन्होंने स्त्रियों को विद्रोह का स्वर दिया। उनका विचार था कि देश, समाज और प्रत्येक उन्नति के लिए स्त्रियों को घर के चाहरदीवारी से मुक्त किया जाए, जिससे वे भी बाह्य कार्य में पुरुषों का हाथ बँटा सकें।

निराला ने जब कहानियाँ लिखना आरम्भ किया, तब छायावादी प्रवृत्ति अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गयी थी और नये संदर्भो में उभरते हुए नये जीवन यथार्थ के मूलभूत प्रश्नों को हल करने में उसकी सार्थकता संदिग्ध हो चली थी। अतः निराला की कहानियों में छायावादी रूमानी आदर्श और प्रगतिशील यथार्थ दोनों के तत्त्व मिलते हैं।

निराला की कहानियाँ मानसिक संघर्ष से परिपूर्ण होने के कारण सूक्ष्म हैं। निराला की कुछ कहानियों में स्त्री प्रमुख भूमिका अदा करती है। जैसे–'दो दानें' और 'क्या देखा'। इन कहानियों में प्रेम तथा विवाह, जाति व्यवस्था, प्राचीन संस्कारों के बंधन से लेकर आर्थिक ओर सामाजिक उत्पीड़न तक की समस्याओं को लिया गया है।

निराला स्वतन्त्र चेता और जागरूक साहित्यकार थे। उन्होंने हर उस विचार को प्रधानता दी, जो सर्वश्रेष्ठ है और उसी प्रकार हर उस रूढ़ि की विगर्हणा की, जो स्त्री की विकास यात्रा में अवरोध उत्पन्न करती है। किसी भी प्रकार का धार्मिक अन्धविश्वास उन्हें पसन्द नहीं था। उनका स्वभाव शुरू से ही विद्रोही रहा, इसलिए कभी भी उन्होंने रूढ़ियों पर चलना पसन्द नहीं किया, परम्परा से चले आते नियमों को ठोकर मार कर बिना किसी की परवाह किये वे सदैव अपने ही नियमों एवं सिद्धांतों को अपनाये रहे। समाज कितनी भी आलोचना क्यों न करे, उसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। उन्होंने अपने गद्य–साहित्य में स्त्री के प्रति स्वतन्त्र–दृष्टि परिलक्षित की है। 'सुकुल की बीवी' तथा 'अर्थ' नामक कहानियों में सामाजिक तथा आर्थिक विषमताओं पर छींटे मारे गये।

निराला आरम्भ से ही अस्वस्थ सामाजिक रूढ़ियों के विरोधी रहे हैं। वे स्वस्थ परम्परा के विरोधी नहीं रहे हैं, अपितु वे उसके पोषक थे, किन्तु अनुचित एवं व्यवहारिक रूढ़ियाँ उन्हें अरुचिकर थी। इसीलिए 'सुकुल की बीवी' के रूप में एक मुसलमान युवती को उन्होंने कन्नौतिया बना डाला और स्वयं फतवा दिया, क्योंकि वह युवती किसी प्रताड़ित माता की कन्या थी। 'लिली' नामक कहानी संग्रह में अनेक स्थानों पर व्यंग्य किया गया है। धर्म के नाम पर आडम्बर उन्हें कतई पसन्द नहीं था। 'लिली' की लगभग सारी कहानियों का वर्ण्य विषय जाति प्रथा, ऊँच–नीच का भेदभाव, विधवाओं के प्रति कटु व्यवहार, पुरुष का अहंकार, भारतीय परिवार में घुटती हुई स्त्री है। 'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी', 'कमला', 'श्यामा', 'अर्थ', 'प्रेमिका – परिचय', 'परिवर्तन और हिरनी' कहानियाँ इस संग्रह में संकलित हैं। संग्रह की पहली कहानी 'पद्मा और लिली' है जो

* शोध–छात्रा, हिन्दी विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
** शोध–निर्देशक, हिन्दी विभाग, शहीद स्मारक राजकीय महाविद्यालय, यूसुफपुर, मुहम्मदाबाद, गाजीपुर

'सुधा' मासिक पत्रिका, लखनऊ से फरवरी 1930 ई0 में प्रकाशित हुई थी। पद्मा और लिली की समस्या प्रेम–विवाह से सम्बन्ध रखती है, जिसमें जाति व्यवस्था और आर्थिक वैषम्य दोनों ही एक सीमा तक बाधक होते हैं। ब्राह्मण की लड़की से क्षत्रिय के लड़के का रोमांस हो जाता है। इसमें निराला ने अन्तर्जातीय विवाह की समस्या को उठाया है। "नियका पद्मा ब्राह्मण कुल की कन्या होने पर भी क्षत्रिय कुल के राजेन बाबू से विवाह करने की इच्छा रखती है, किन्तु उसके कट्टरपंथी पिता मरते–मरते भी वसीयत में अन्तर्जातीय विवाह न करने की शर्त रखकर उसकी समस्त आशाओं पर तुषारापात कर देते हैं।"[1]

पद्मा राजेन से प्रेम करती है। पिता नहीं चाहते कि भिन्न जाति वाले राजेन से उनकी पुत्री पद्मा का विवाह हो, इसलिए मरते समय पद्मा से आग्रह कर गये कि अन्तर्जातीय विवाह न करे। पिता का मरते समय का यह आग्रह स्पष्ट करता है कि विवाह सम्बन्धों में लड़के–लड़की के परस्पर प्रेम की महत्ता तथा जाति–प्रथा के टूटने के भावी आशंका को उनकी अनुभवी आँखें देख रही हैं, जिसे उनके पुराने संस्कार स्वीकार नहीं कर सकते थे। पद्मा के पिता की इस आशंका में नये युग का यथार्थ झलक रहा है। यह समस्या एक व्यक्ति की नहीं, बल्कि पूरे समाज की थी। दोनों प्रेम का निर्वाह और आग्रह का पालन करते हुए देश सेवा का व्रत ले लेते हैं। यह तत्कालीन नई पीढ़ी के संघर्ष तथा संस्कार की यथार्थ स्थिति थी। पद्मा प्रेम और पिता के आग्रह का सम्मान करने के संस्कार के द्वन्द्व से ग्रस्त हैं। यह रूमानी भावुकतापरक शुद्ध अनुमूल्यात्मक प्रेम सम्बन्ध है जो व्यक्तिगत से सर्वगत हो जाता है। देश–प्रेम के रूप में विस्तृत होकर मानव मात्र के प्रति हो जाता है।

यह आदर्श परम्परागत आदर्श से भिन्न है। निराला की कहानियों से पूर्व की कहानियों में अधिकांशतः परम्परागत संस्कारों की सीमा में ही आदर्श की स्थापना की गई है। परम्परा से हटकर व्यक्ति के चरित्र की किसी नयी आदर्श स्थिति की परिकल्पना का उनमें अभाव है और न समाज को किसी नयी लीक पर परिचालित करने वाले चरित्र ही उनमें मिलते हैं। सम्भवतः इसी स्थिति से असंतुष्ट होकर 'लिली' कहानी संग्रह की भूमिका में निराला ने लिखा है कि "मुझसे पहले वाले हिन्दी के सुप्रसिद्ध कहानी लेखक इस कला को किसी दूर उत्कर्ष तक पहुँचा चुके हैं, मैं पूरे मनोयोग से समझने का प्रयत्न करके भी नहीं समझा सका। समझता, तो शायद उनसे पर्याप्त शक्ति प्राप्त कर लेता और पतन के भय से इतना न घबड़ता।"[2] नये यथार्थ की अनिवार्यताओं को वाणी देने में पिछली कहानियों के पात्रों तथा कथ्य की अपर्याप्तता को निराला जी ने अनुभव किया था।

निराला की नायिका पद्मा सौन्दर्य से ओत–प्रोत, योग्य तथा शिक्षित है। निरला ने उसके तरुणावस्था के वर्णन में छायावादी दृष्टिकोण का सहारा लिया है–"पद्मा के चन्द्रमुख पर षोडश कला की शुभ्र चन्द्रिका अम्लान खिल रही है। एकान्त कुन्ज की कली सी प्रणय से बासंती मलयस्पर्श से हिल उठती, विकास के लिए व्याकुल हो रही है।"[3] पद्मा काशी विश्वविद्यालय में कला संकाय के द्वितीय वर्ष में अध्ययनरत है। शिक्षा के संसर्ग से उसके हृदय में आधुनिक विचारों के रंग भर गये। वह राजेन को प्रेम करती है और उसका प्रेम अटूट है। पद्मा के विवाह की खबर सुनकर राजेन के उदास होने पर वह उसका हाथ पकड़कर उससे कहती है–"राजेन, तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं ? जो प्रतिज्ञा मैंने की है, हिमालय की तरह उस पर अटल रहूँगी।"[4] निराला के स्त्री चित्रण की ये सबसे बड़ी विशेषता है कि उसकी नायिकाओं में प्रेम के प्रति अनन्यता दिखती है, जिससे उनका प्रेम वैयक्तिक से सात्त्विक प्रेम में परिणत हो जाता है।

पद्मा शिक्षित है इसीलिए उसमें अपने भविष्य के प्रति जागरूकता है। वह दृढ़ प्रतिज्ञ है। विवाह को लेकर वह अपने पिता के निर्णय को मोन सहमति न देकर अपना निश्चय सुनाती हुई कहती है–"लेकिन मैंने भी निश्चय कर लिया है, डिग्री प्राप्त करने से पहले विवाह न करूँगी।"[5] पद्मा की दृष्टि में वह विवाह और प्रेम का अर्थ एक नहीं है। वह अपनी माँ से कहती है–"विवाह और प्यार एक बात है? विवाह करने से होता है, प्यार आप होता है। कोई किसी को प्यार करता है, तो वह उससे विवाह भी करता है।"[6]

पद्मा ने अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया और न ही अपने प्रेम को दुर्बल होने दिया। उसने अपनी शिक्षा पूरी की। तीन साल बीत गए। पद्मा के जीवन मे वैसा ही प्रभात, वैसा ही आलोक भरा हुआ है। वह रूप, गुण, विद्या और ऐश्वर्य की भरी नदी, वैसी ही अपनी पूर्णता से अदृश्य की ओर, वेग से बहती जा रही है। सौन्दर्य की वह ज्योति–राशि स्नेह–शिखाओं से वैसी ही अम्लान स्थिर है।"[7] उसने अपने पिता की इच्छा पूरी की। उसने अन्तर्जातीय विवाह नहीं किया। उसका जीवन परिवर्तित हो गया। जिस जाति के विचार ने उसके पिता को इतना दुर्बल कर दिया था, उसी जाति की बालिकाओं को अपने ढंग पर शिक्षित कर, अपने आदर्श पर लाकर पिता की दुर्बलता से प्रतिशोध लेने का उसने निश्चय कर लिया।

'ज्योतिर्मयी' कहानी में विधवा विवाह की समस्या को उठाया गया है। विधवा की समस्या उस युग की कहानियों का बड़ा ही आम और प्रचलित विषय हो गया था। उस कथा की नायिका भी पद्मा और लिली की तरह ही षोडशी, रूपवती कन्या है। उसका परिचय निराला कुछ इस प्रकार देते हैं– "कमल की पंखुड़ियों सी उज्ज्वल बड़ी–बड़ी आँखों से देखती हुई, एक सत्रह साल की रूप की चंद्रिका, भरी हुई युवती ने कहा।"[8]

ज्योतिर्मयी आज विधवा होकर विजय से प्रेम करने के उपरान्त विवाह करना चाहती है, पर संस्कारों को तोड़ने में साहस का अभाव बाधक है। वह समाज के नियमों से खिन्न हो चुकी है। अपने वैधव्य की अनभिज्ञता बताती हुई कहती है–"मैं बारह साल की थी, ससुराल नहीं गयी, जानती भी नहीं, पति कैसे थे और विधवा हो गयी।"[9]

विजय इलाहाबाद विश्वविद्यालय में शोध–छात्र है। वीरेन्द्र बी०ए० पास कर लेने के पश्चात् वहीं अपना कारोबार देखने में रहता है। विजय का मित्र वीरेन्द्र ज्योतिर्मयी को पावन मूर्ति मानता है। वीरेन्द्र अपने मैनेजर को ज्योतिर्मयी का पिता बनाकर उससे कन्यादान कराकर दोनों का विवाह करा देता है। वीरेन्द्र का अपने मित्र के लिए किया गया त्याग अद्भुत है। उसने अपने मित्र और ज्योतिर्मयी खुशी के लिए तमाम दुःख और कष्ट सहे और अट्ठारह हजार रूपये भी खर्च हुए। कहानीकार ने वीरेन्द्र नायक व्यक्ति के उत्साह और त्याग का भी अंकन किया है, जिसने अपने मित्र विजय से ज्योतिर्मयी के विवाह का समस्त व्यय–भार उठाकर उन्हें सुखी करने का भरसक प्रयत्न किया।[10]

'कमला' कहानी में निराला के छायावादी व्यक्तित्व से प्रगतिवादी व्यक्तित्व के संक्रमण की परिचायक है। इस कहानी में छायावादी रूमानीयत से अपने को अलग करने का प्रयास साफ पता चलता है, किन्तु नई दिशा के स्पष्ट बोध के अभाव में पात्र प्रतिशोध के मार्ग पर ढलता है। 'कमला' कहानी की प्रतिशोध भावना बुराई करने वाले प्रति भलाई करो की गांधीवादी भावना से प्रेरित है। "कमला, शीर्षक कहानी में निराला का प्रतिपाद्य यह रहा है कि समाज में लोग दूसरों को सुखी देखकर प्रसन्न नहीं होते और अवसर मिलने पर जातिगत बड़प्पन की आड़ में दूसरे का घर उजाड़ने में भी संकोच नहीं करते।"[11]

कमला का परिचय देते हुए निराला लिखते हैं–"कमला सोलहवें साल की अधखुली धुली कलिका है। हृदय का रस अमृत–स्नेह से भरा हुआ, खुली नावों–सी आँखें चपल लहरों पर अदृश्य प्रिय की ओर परा और अपरा की तरह बही जा रही है।"[12] कमला को हिन्दी की शिक्षा मिली थी, परन्तु उसे मराठी और गुजराती भाषा का भी कुछ ज्ञान था। कमला को उसका पति झूठे लांछन के कारण त्याग देता है, किन्तु निराला की अन्य नायिकाओं की तरह कमला भी पतिव्रता की तरह सच्चे प्रेम को अपनाते हुए अपने प्रेम स्थूल से सूक्ष्म और परिवर्तित कर देती है। "रमाशंकर अब उसके लिए कोई बाहर का मनुष्य नहीं, वह अब उसकी आत्मा में अर्थमय बनकर है। इसलिए अब कामना–जन्य प्रेम का खिंचाव उसके चित्त को हिला नहीं सकता। वह अब सब समय अकाम तपस्या–सी जीवन के कूल पर खड़ी अपने ही रमा–रूप के शंकर–शुभंकर निस्समी सुन्दर को तन्मय देख रही है।"[13]

संयोगवश हिन्दू–मुस्लिम दंगों में कमला के पति रमाशंकर की बहन मुसलमानों के जाल में पड़कर भ्रष्ट हो जाती है और जाति बहिष्कृत कर दी जाती है। कमला उसे अपने भाई के साथ स्वीकार कर अपने परित्यक्त किये जाने का बदला लेती है, किन्तु पति के लाख कहने पर भी उसके साथ नहीं जाती है। इस प्रकार पति के साथ भलाई कर उसे नीचा दिखा कर प्रतिशोध लेती है। कमला के द्वारा निरला ने एक नया स्त्री–चरित्र उभारा है, जिसका अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व है, जो पति द्वारा परित्यक्त होकर भी स्वयं अडिग बनी रह सकती है। उसका पति के साथ लौट जाना, उसके व्यक्तित्व का पतन होना और दूसरा विवाह कर लेना युग की चेतना से आगे की बात होगी। अन्ततः कहानी का अंत युग यथार्थ की सीमाओं में ही हुआ है। कमला एक हिन्दू पत्नी का धर्म बताती हुई कहती है–"आपकी इच्छा होगी, तो ऐसी स्थिति में मैं विवाह करने को तैयार हूँ, क्यों उठा लेना मेरा धर्म है।"[14]

'श्यामा' कहानी के माध्यम से निराला ने वर्ग–भेद की समस्या को उठाया है। डॉ0 निर्मल जिंदल लिखते हैं–"श्यामा का कथानक वर्ग–भेद से सम्बद्ध है, इसमें उच्च वर्गीय जमींदार द्वारा लोध वंश की श्यामा और उसके पिता पर किये गये अत्याचारों की कथा वर्णित है।"[15]

श्यामा एक ग्रामीण बाला है। निरला उसका वर्ण करते हुए लिखते हैं–"आकाश और पृथ्वी की सजल श्यामलाभा को भीतर, वर्षा की ही नवयौवना स्वस्थ श्याम प्रतिमा–सी, एक युवती–बालिका धीरे–धीरे असंकुति, मुस्कुराती हुई, उसकी तरफ आ रही है।"[16]

निराला की अधिकांश कहानियाँ स्त्री की तत्कालीन सामाजिक अवस्था के चित्रण से ही सम्बन्धित है। 'श्यामा' भी इन्हीं कहानियों की श्रेणी में है। इसलिए इस कहानी नाम भी नायिका के नाम पर ही रखा गया है। श्यामा इतनी आकर्षक है कि वैसा आकर्षण बंकिम को शहरी की पढ़ी–लिखी लड़कियों से भी न दिखा। श्यामा के पिता जमींदार के अत्याचार से त्रस्त थे। उसके मेहनत के साथ–साथ श्यामा को भी दूसरे की पिसौनी करनी पड़ती है, तब किसी तरह उन्हें रोटी मिलती है। श्यामा के ह्रदय में पिता के प्रति प्रेम सर्वत्र दिखता है, जब उसके पिता सुधुआ को सिपाही पकड़कर ले जा रहे थे तो श्यामा स्तब्ध होकर सजल नेत्रों से अपने पिता की ओर देख रही थी और बंकिम से अपने पिता को बचाने के लिए कहती है।

श्यामा बाल्यकाल में ही विधवा हो चुकी थी। सुधुआ की मृत्यु हो जाने पर भी जब किसी लोध ने उसका साथ न दिया, तो वह स्वयं ही फावड़ा हाथ में लेकर लाश के लिए मिट्टी खोने लगी और अपने पिता का अंतिम संस्कार भी बंकिम के साथ किया। इससे अधिक मार्मिक अभिव्यंजना और क्या हो सकती है कि एक पुत्री को अपने पिता का अंतिम संस्कार अकेले ही करना पड़ा। अन्ततः वह भी बंकिम के साथ कानपुर चली जाती है और आर्य–समाज में दोनों का विवाह हो जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि निराला ने स्त्री को सूक्ष्मता और गहराई से अपनी कहानियों मे व्यक्त किया है। उन्होंने समाज में उपेक्षित समझी जाने वाली वेश्या के सच्चे और उदार प्रेम का चित्रण किया है। समाज–बहिष्कृता वेश्याओं के प्रति सहानुभूति का भाव जाग्रत किया है। समाज द्वारा तिरस्कृत अत्यन्त निर्धन, दीनहीन, प्रकृति की मारों से लड़ती हुई पगली, गूँगी स्त्री को देवी की उपमा दी है और उसे महाशक्ति का प्रत्यक्ष रूप माना है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ :

1. जिन्दल, डॉ० निर्मल, निराला का गद्य साहित्य, पृष्ठ : 146–147
2. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी, निराला रचनावली : लिली से, भूमिका, पृष्ठ–451
3. निराला, पद्मा और लिली, पृष्ठ–13
4. वही, पृष्ठ–15
5. वही, पृष्ठ–16
6. वही, पृष्ठ–18
7. वही, पृष्ठ–21
8. वही, पृष्ठ–22
9. वही, पृष्ठ–23
10. वही, पृष्ठ–24
11. वही, पृष्ठ–27
12. जिन्दल, डॉ० निर्मल, निराला का गद्य साहित्य, पृष्ठ–147
13. लिली, पृष्ठ–32
14. वही, पृष्ठ–43
15. जिन्दल, डॉ० निर्मल, निराला का गद्य साहित्य, पृष्ठ–147
16. लिली, पृष्ठ–50

प्रयोगवाद और अज्ञेय का चिंतन

मनीष कुमार सिंह*

सारांश :

आधुनिक हिंदी कविता में प्रयोगवाद एक ऐसी काव्य धारा के रूप में उभर कर सामने आती है जो चली आ रही प्रचलित काव्य धारा को बहुत बड़ी चुनौती तो देती ही है साथ में अपने मंडल के कवियों के लिए एक मार्ग भी प्रस्तुत करती है वह मार्ग था वर्तमान काव्य को एक नए खांचे की कविताई में ढालने की। और साहित्य भी खासकर कविता भी नए प्रतिमान कि खोज कर रही थी। ऐसे समय में अज्ञेय का तारसप्तक तत्कालीन साहित्यकारों और पाठकों को अपनी तरफ बहुत आकर्षित किया। इस आलेख में अज्ञेय का तारसप्तक में जो विशेष योगदान था जो कविता के शिल्प पक्ष से जुड़ा हुआ है इस पर ज्यादा ध्यानाकर्षण करने का प्रयास किया गया है। साथ में इसमें यह भी दिखाने का प्रयास किया गया है कि जब अज्ञेय तारसप्तक लाते हैं तो उन्हें किन–किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा और इन कवियों ने बखूबी सामना भी किया।

आधुनिक हिंदी कविता में छायावाद और प्रगतिवाद के प्रतिक्रिया स्वरूप पनपी प्रयोगवादी कविता के प्रवर्तक और आधुनिक हिंदी कविता को लीक से हटाकर एक नयी भाव भंगिमा प्रदान करने वाले अज्ञेय बहुआयामी व्यक्तित्व के प्रतिभा संपन्न कवि, कथाकार, आलोचक, निबंधकार और पत्रकार थे। यह स्थापित सत्य है कि कोई भी कालखंड, या वाद अचानक से साहित्य में अपनी पैठ नहीं बना पाता है बल्कि वह अपने पूर्ववर्ती कालखंड का ही प्रतिरूप होता है और हम उसे नया प्रारूप प्रदान करके एक नयी परम्परा के सूत्रपात के रूप में स्थापित कर देते हैं। यही नहीं वह कालखंड भी बहुत समय तक नहीं चल पाता है और जैसे–जैसे देश, काल और परिस्थितियां बदलती हैं वह कालखंड विशेष भी किसी दूसरे कालखंड में परिवर्तित हो जाता है। आधुनिक हिंदी कविता में प्रयोगवाद के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। 1918 से 1936 तक हिंदी में छायावाद अधिकतर अपनी काव्यगत उपलब्धियों के कारण जाना गया। लेकिन छायावाद ही हमेशा के लिए रहता यह भी संभव नहीं था। कहीं न कहीं छायावाद में अतिशय सौन्दर्यप्रियता, प्रकृति प्रेम, मानवतावाद, रहस्यानुभूति, कल्प्नानुभूती और स्वानुभूति पर थोड़ा ज्यादा बल दिया गया जिसके कारण कविता में यथार्थ का वह रूप लक्षित नहीं हो पा रहा था जो सीधे जनमानस से जुड़ पाए। छायावाद में स्वानुभूति की प्रबलता के कारण व्यक्तिवादिता अधिक थी जिसका समस्त काव्य के रूप में विरोध भी हुआ। परिणामस्वरूप प्रगतिवाद आया लेकिन यह बहुत कम समय तक ही चल पाया। इसने यथार्थ के अतिशय रूप और चली आ रही काव्य परिपाटी पर अधिक बल दिया। ऐसा प्रतीत होने लगा कि प्रगतिवाद में **"छायावाद ने जो कल्पना की रंगीनी एवं स्वानुभूति की सुकुमारता प्रदान की थी प्रगतिवाद ने उसके स्थान पर कठोर यथार्थवाद को लाकर काव्य के क्षेत्र को शुष्कता एवं रुक्षता से परिपूर्ण कर दिया। उस क्षण हिंदी के अधिकांश कवि यह अनुभव करने लगे कि प्रगतिवाद कोई नूतन काव्यधारा न होकर राजनीतिक धारा है जो साहित्य के माध्यम से प्रवाहित हो रही है और जिसका एकमात्र उद्धेश्य मार्क्सवादी विचारधारा को भारतीय जन–जीवन में व्याप्त कर देना है।"**[1]

ऐसे में अज्ञेय ने 1943 में तारसप्तक निकाला और प्रयोगवाद की घोषणा भी की। समय और साहित्य भी अब बदलाव की मांग कर रहा था। हम आजाद भी नहीं थे। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन जो 1930 तक आते–आते धीमी हो गयी थी अब 1941–1942 तक आते–आते फिर से जोर पकड़ा और जिस प्रकार पूरे भारतीय समाज में महंगाई, भ्रष्टाचार, चोरी–चपाटी, और अंग्रेजों की दमनकारी नीति सामने आ रही थी पूरा भारतवर्ष उससे जूझ रहा था और विशेषकर मध्यवर्ग इस व्यवस्था से विक्षुब्ध हो चुका था। इससे लोगों के मन में एक प्रकार का सामाजिक असंतोष पैदा हुआ और एक नयी क्रांति का भी उद्घोष हुआ। गांधीजी इसी समय 'भारत छोड़ो आन्दोलन' 1942 की भी घोषणा करते हैं और अंत में अहिंसा की जगह **'करो या मरो'** का नारा भी देते हैं। इस समय जब पूरा समाज और राष्ट्र बदलाव की मांग कर रहा था ठीक इसी समय हिंदी में

* शोधार्थी (हिन्दी विभाग), पं0दी0द0उ0राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलहीपट्टी, वाराणसी

भी एक ऐसी काव्यधारा की शुरुआत हुई जिसमें नयापन का समागम था। यह कविता प्रयोगशील कविता कहलाई।

इस काव्यधारा में कोई एक खास कवि नहीं था बल्कि यह काव्यधारा 7 कवियों का एक मंडल था। इसके अगुआ अज्ञेय हुए। अज्ञेय आरम्भ से ही साहित्यिक मिजाज के व्यक्ति रहे हैं और साहित्य में नवाचार के लिए जाने जाते हैं। अज्ञेय ने हिंदी कविता के कई कालखंडों को एक–साथ देखा था और हिंदी कविता के बदलते मूल्यों और सरोकारों को भी। अब अज्ञेय यह स्पष्ट महसूस करने लगे कि कविता में सिर्फ हू–ब–हू यथार्थ को प्रस्तुत करने भर से काम नहीं चलेगा बल्कि कविता के भीतर छिपे एहसास, सत्य, सामाजिक यथार्थ–बोध की तीव्रता को अब पुराने बिम्बों, प्रतीकों, उपमानो, मिथकों तथा शिल्प के माध्यम से प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। अब ये एक प्रकार से पुराने पड़ गए हैं। आधुनिक भावबोध को प्रस्तुत करने की क्षमता अब इनमे नहीं है। अब कविता में जरुरी है कि इन पुराने बिम्बों, प्रतीकों, उपमानों को पूरी तरह त्याग कर इनकी जगह नए बिम्ब, प्रतीक, उपमान नहीं लाएँगे बल्कि इनकी नए रूप में पुनः समाज सापेक्ष व्याख्या करनी पड़ेगी

''अगर मैं तुम को ललाती सांझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता, या शरद के भोर की नीहार–न्हायी कुंई,
टटकी कली चम्पे की, वगैरह,
तो नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यही : ये उपमान मैले हो गये हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच।''

अज्ञेय हिंदी के उन कवियों में गिने जाते हैं जिनका चिंतन जैसा था ठीक वैसा ही उनका सृजन सरोकार भी था। अज्ञेय सृजनशील व्यक्तित्व के थे। नया सोचते थे, मौलिक लिखते थे और समाज के हर पहलुओं को इन्होंने अपनी लेखनी में पिरोया है। इन्होंने कवियों की प्राचीन परिपाटी को बहुत करीब से देखा और उससे क्षुब्ध हुए और जब तारसप्तक का संपादन किए तो विचार बनाया की वे लीक पर नहीं चलेंगे बल्कि लीक से हटकर खुद भी काव्य सृजन करेंगे और अन्य तारसप्तक के कवियों को भी अभिप्रेरित करेंगे और इन्होंने सिर्फ ऐसी योजना महज नहीं बनाई बल्कि ऐसा किया भी। जब 1943 में तारसप्तक आया तो खुद वे इस मंडल के कवियों के पक्ष में आते हैं और उनके समक्ष उपस्थित चुनौतियों को भी खुद ही बताते हैं **"वे सब किसी एक स्कूल के नहीं हैं, किसी एक मंजिल पर पहुंचे नहीं हैं, अभी राही हैं–राही नहीं राहों के अन्वेषी। उनमें मतैक्य नहीं है, सभी महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी राय अलग–अलग है– जीवन के विषय में, समाज, धर्म औए राजनीति के विषय मेंय काव्य वस्तु और शैली के, छंद और तुक के, कवि के दायित्वों के प्रत्येक विषय में उनका आपस में मतभेद है। यहाँ तक कि हमारे जगत के ऐसे सर्वमान्य और स्वयं सिद्ध मौलिक सत्यों को भी वे समस्त रूप में स्वीकार नहीं करते, जैसे लोकतंत्र की आवश्यकता उद्योगों का समाजीकरण, यांत्रिक युद्ध की उपयोगिता, वनस्पति घी की बुराई अथवा काननबाला और सहगल के गानों की उत्कृष्टता इत्यादि।"**[2]

"तथापि इतनी विपरीतता के होते हुए भी काव्य के एक अन्वेषी दृष्टिकोण उन्हें समानता के सूत्र में बांधता है।"[3] और इस तरह अज्ञेय लगातार इन सभी कवियों की काव्य दृष्टि में परिष्कार और परिमार्जन करते गए और तारसप्तक की मुख्य चिंता को सामने रखा। अज्ञेय इन सबकी कविताई में एक प्रकार का नवीन दृष्टिकोण या नूतन प्रवृत्ति के दर्शन भी किए जो स्पष्ट है कि **''तारसप्तक के पूर्ववर्ती छायावादी और प्रगतिवादी कवियों और कविताओं में नहीं लक्षित होता है।"**[4] इससे पहले कविता ने सामाजिक स्वर को भले ही पहले की तुलना में ज्यादा बुलंद किया हो लेकिन उनकी काव्य शैली नहीं बदली थी, वह पुरानी ही रह गई थी। इस ओर पहला ध्यान अज्ञेय का ही गया। प्रयोगवादी कवियों ने हिंदी कविता में उन क्षेत्रों का अन्वेषण किया जहाँ तक अभी तक हिंदी के कवि और कविता नहीं पहुँच पाई थी

''वे रोगी होंगे प्रेम जिन्हें अनुभव–रस का कटु प्याला है–
वे मुर्दे होंगे प्रेम जिन्हें सम्मोहन कारी हाला है
मैंने विदग्ध हो जान लिया, अन्तिम रहस्य पहचान लिया–
मैंने आहुति बन कर देखा यह प्रेम यज्ञ की ज्वाला है !''

हिंदी में प्रायः ऐसे कवि कम देखने को मिलते हैं जिनका काव्य या साहित्य सम्बन्धी चिंतन खरे रूप से सृजन से जुड़ा होता है। सृजन को बहुतेरे रूप में निर्माण के रूप में देखा जाता है। सृजन का समय

पूर्णतः अन्वेषण का समय ही होता है। इसमें प्राचीनता का विरोध नहीं होता है बल्कि समय–समय पर प्राचीनता को मांज कर नए रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है। ध्यातव्य है कि सृजन में मांग हमेशा नए की ही रहती है और अज्ञेय जैसे कवि जो जितना भारतीय साहित्य परंपरा का अध्ययन किए थे उतना ही पाश्चात्य साहित्य चिंतन परंपरा का भी। अज्ञेय का सृजन सम्बन्धी साहित्य चिंतन हमें कहीदृकहीं पाश्चात्य परंपरा से जुड़ा भी दिखाई देता है। कभी–कभी तो विदेशी जमीन की किसी आख्यान को ही अज्ञेय अपनी कविताओं में पिरो देते हैं। और खास बात ये कि इनका सृजन सम्बन्धी मान्यता पाश्चात्य और अधुनातन को एक साथ लेकर चलने की भी क्षमता रखता है। दोनों का एक दूसरे से कहीं विरोध नहीं दिखता है। अज्ञेय अपने चिंतन में 'क्षण' को बहुत अधिक महत्व देते हुए पाए जाते हैं। उनका यही चिंतन एक प्रकार से उन्हें समकालीन भी बना देता है। क्षण की व्याख्या करते हुए वे कहते हैं की **"अनुभूति और परिस्थिति में जब विपर्यय, असंतुलन या विरोध होता है तब कलाकार अनुभूति पर आग्रह करता है .....क्षण का आग्रह क्षणिकता का आग्रह नहीं है, अनुभूति की प्राथमिकता का आग्रह है .....और कवि साधारणीकरण द्वारा जिस अनुभूति का प्रेषण करता है वह काव्यानुभूति जीवन की अनुभूति से अलग होती है।"[5]**

सृजन काव्य का बाह्य तत्व नहीं है इसके लिए कवि को अन्तः यात्रा करनी पड़ती है, एक बार नहीं दो बार नहीं, बार–बार। अज्ञेय बार–बार यह यह कहते हैं कि प्रयोग नया है और उन्हें यह भी पता था कि इसमें हर मोड़ और पद पर कवियों के भटक जाने का खतरा भी कम नहीं हैं। इसके कारण अज्ञेय को कहा गया कि आप सिर्फ इन्हीं कवियों के बारे में सोचते हैं आपकी काव्य दृष्टि सीमित है। लेकिन अज्ञेय ने जिस नएपन को हिंदी में लाने की प्रतिज्ञा की थी–इसके आगे यह आरोप कुछ भी नहीं था – में अंततः वे कहते हैं

"मैं मरूँगा सुखी, मैंने जीवन की धज्जियाँ उड़ाई हैं।"

अज्ञेय के लिए भी सृजन के कुछ चरण होते हैं। इनके अनुसार काव्य सृजन के 3 चरण होते हैं। इनमे से पहला चरण संवेदनशील सर्जक ह्रदय द्वारा भावानुभाव का संग्रह होता है। सृजन प्रक्रिया इसमें दूसरा चरण भोग है तो सर्जक में तनाव को जन्म देता है। यह तनाव धीरे–धीरे बढ़ता जाता है जो अंततः इस पूरी प्रक्रिया को यंत्रणा भरी प्रक्रिया बना देता है। यही भावानुभव जब रचना का रूप ले लेता है तो उस तनाव से सर्जक मुक्ति पा लेता है जिसे भावमुक्ति कहा जाता है। सृजन का यह क्षण आसान नहीं होता है इसके लिए सृजनकर्ता को हमेशा सतर्क रहना पड़ता है। सर्जना के क्षण कविता में यह दृष्टिगत होता है :

"एक क्षण भर और रहने दो मुझे अभिभूत
फिर जहाँ मैने संजो कर और भी सब रखी हैं
ज्योति शिखायें, वहीं तुम भी चली जाना, शांत तेजोरूप!"

सृजन के लिए अज्ञेय यह मानते हैं कि सृजन के लिए मानव को उसके विचार और अनुभूति पर मुख्यतः दो पक्ष प्रभावित करते हैं मानव का बाह्य जगत और उसका आन्तरिक जगत। वायवीय जगत में मुख्यतः उसका परिवेश और पास पड़ोस की चीजें आती हैं। तथा अंतर्जगत में उसके मस्तिष्क में चल रही वह सारी गुत्थियाँ आती हैं जिनसे मनुष्य लगातार संचालित होता रहता है। कोई भी कृति मानव विवेक से उत्पन्न विचारों और चिन्तनों का ही समग्र रूप है। वह अचानक से कुछ नया नहीं सोच लेता है बल्कि जो सोचता है उसे मूर्त रूप देने से पहले बार–बार उस पर चिंतन करता है उस दौरान उसके चिंतन क्षेत्र का लगातार विस्तार होता जाता है। अज्ञेय के विचारों को समझने पर ऐसा प्रतीत होता है कि उनके अनुसार नैतिक बोध और सौन्दर्यबोध की सत्ता अलग–अलग कार्य नहीं करती है बल्कि वे दोनों परस्पर एक साथ एक रूप में कार्य करते हैं। जब दोनों का कार्य संपन्न हो जाता है तो एक नए रूप का सृजन होता है जो उत्कृष्ट सौन्दर्यबोध होता है उसके बाद ही कोई भी भाव या विचार शब्दबद्ध होकर कृति में रूपांतरित हो पाती है। अज्ञेय मानते हैं कि यह सौन्दर्यबोध कृतिकार के अनुभवों के सहारे ही विकसित हो पाता है। और अन्तः सृजन के संदर्भ में अज्ञेय इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मानव मस्तिष्क ही मूल्यों या प्रतिमानों का केंद्र है। पहले मानव किसी विषय पर सोचता है अपनी चिंतन को समृद्ध करता है और उसके मस्तिष्क में जो विचार आते हैं अंततः उन विचारों को वह शब्दबद्ध कर कृति का रूप देकर नवीन सर्जन कर पाता है। इस मानव मस्तिष्क में एक के बाद एक नए अनुभव जुड़ते रहते हैं और धीरे–धीरे ये नए अनुभव नये मूल्यों का रूप ले लेते हैं। जब हम अज्ञेय के चिंतन और सृजन सरोकार के विषय में बात करते हैं तो यह ध्यान देना चाहिए कि प्रयोग करने की परंपरा अचानक से प्रयोगवाद में अज्ञेय के ही नेतृत्व में नहीं उठकर आई बल्कि प्रयोग की अपनी एक प्राचीन परंपरा रही है यहाँ तक कि छायावाद ने भी अपने प्रतिमान को तोड़ा और निराला के नेतृत्व में कविता पहली छंद मुक्त हुई :

''मैंने मैं शैली अपनाई, देखा एक दुःखी भाई
दुख की छाया पड़ी हृदय में, झट उमड़ वेदना आई।''

ध्यातव्य है कि यहीं पर प्रयोगवाद अपनी एक अलग श्रेणी में बंध जाता है। लेकिन 1943 का प्रयोगवाद शब्द उन कवियों के लिए मात्र रूढ़ हो गया जो सिर्फ तारसप्तक में कविता लिखे। चूँकि नाम ही प्रयोगवाद था इसलिए अज्ञेय ने प्रयोग की अनिवार्यता पर थोड़ा ज्यादा बल दिया। यहीं प्रयोगवादी कवियों की आलोचना भी होती है। लेकिन देखा जाए तो प्रयोगवादी कवियों के अनुभव का दृष्टिकोण और कृति एक प्रकार की नहीं है। वे सभी किसी एक फैसले पर नहीं ठहर पाते हैं। अज्ञेय का ज्यादातर जोर बिम्ब, भाषा, प्रतीक, उपमानों को नवीन रूप में प्रस्तुत करने पर रमा, यानि अज्ञेय ने ज्यादातर काव्यगत शिल्प पक्ष पर ज्यादा प्रयोग करने पर बल दिया लेकिन यह भी ध्यातव्य है कि प्रयोगवादी कवियों के यहाँ भाव पक्ष भी बहुत अधिक मात्र में उजागर हुआ है। प्रयोगवाद के अधिकांश कवि गहरी सामाजिक वेदना को बड़े ही निर्भीक भाव से प्रस्तुत करते हैं। इनके काव्य क्षेत्र में उच्च वर्ग नहीं था, निम्न वर्ग भी नहीं था बल्कि इन्होंने सोच समझकर समाज को नई दिशा की ओर ले जाने वाले मध्यवर्ग को अपनी कविता का केंद्र बनाया। इन्होंने उस वर्ग की तस्वीर को सामने लाया जो ह्रासोन्मुख थी।

"अज्ञेय अंतर्मुखी रचनाकार हैं, लेकिन यह अंतर्मुखता समाज विरोधी न होकर गहरे में समाज से शांत सामंजस्य बैठाने वाली है। यह शांत संत–स्वभाव अज्ञेय के रचनाकार का है और यह रचनाकार समाज को बदलना चाहता है क्योंकि आज ज्ञान–विज्ञान के प्रभाव से गति इतनी तेज हो गई है कि जो व्यक्ति समाज या देश नहीं बदलेगा वह पिछड़ जाएगा। किन्तु हमें यह बदलाव अपनी संस्कृति की मूल्य दृष्टि के हिसाब से करना होगा, दूसरों की नकल पर जीवित रहकर नहीं। प्रकृत बदलाव शांति एवं आत्म बल देता है। नकली बदलाव पागलपन लाता है।"[6] इस बात के लिए अज्ञेय के चिंतन में व्यष्टि की नहीं बल्कि समष्टि की बात है। यह दीप अकेला में वे बार–बार इस बात की ओर संकेत करते हैं :

''यह दीप अकेला स्नेह भरा, है गर्व भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।''

अज्ञेय का स्पष्ट विचार है कि काव्य का विषय और काव्य की वस्तु (कन्टेंट), दोनों पृथक–पृथक वस्तुएं हैं और आज इसी भूल को सभी कवि एवं आलोचक कर रहे हैं। इसी बात को स्पष्ट करते हुए अज्ञेय ने लिखा है **"प्रयोक्ता के सम्मुख दूसरी समस्या संप्रेष्य वस्तु की है। यह बात कहने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि काव्य का विषय और काव्य की वस्तु (कन्टेंट), अलग–अलग चीजें हैं, पर जान पड़ता है कि इस पर बल देने की आवश्यकता प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह बिल्कुल सम्भव है कि हम काव्य के लिए नये–नये विषय चुनें, पर वस्तु उसकी पुरानी ही रहे, जैसे यह भी सम्भव है कि विषय पुराना रहे पर वस्तु नयी हो। निस्संदेह देश–काल की संक्रमणशील परिस्थितियों में संवेदनशील व्यक्ति बहुत कुछ नया देख,सुन और अनुभव करेगाय और इसलिए विषय के नयेपन के विचार का भी अपना स्थान है हीय पर विषय केवल 'नये' हो सकते हैं 'मौलिक' नहीं–मौलिकता वस्तु से सम्बन्ध रखती है। विषय संप्रेष्य नहीं है, वस्तु संप्रेष्य है।"[7]**

"कवि अज्ञेय ने आज के सत्यान्वेषी कवि के बारे में यह तो स्पष्ट स्वीकार किया है कि वह समाज की विषमताओं से व्यथित है, अभावों से पीड़ित है, विभिन्न सामाजिक कुंठाओं से ग्रसित है और अन्य सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं से उलझा हुआ है। यह कवि अज्ञेय की अपनी भी स्थिति है और वे स्वयं सत्य के अन्वेषी होकर भी उक्त उलझनों एवं जटिलताओं से ग्रस्त हैं।"[8] अज्ञेय का मत है कि जीवन के लक्ष्य के सम्बन्ध में सत्यम,शिवम, और सुन्दरम की चर्चा सदियों से होती रही है। अज्ञेय ने इन शब्दों के क्रम को बदलकर रचना के उद्धेश्य को साधने की चेष्टा की है। उनके अनुसार सर्जक सत्य या यथार्थ से जूझता है,उसे तपाता, गलाता है। सर्जक की साधना से तप–गल कर सत्य, सुन्दर में बदल जाता है। जब सुन्दर से शिवत्व का मेल होता है तब रचना अपने उद्देश्य में सफल होती है। इस प्रकार कवि का लक्ष्य सत्य, यथार्थ, की भूमि में सुन्दर का बीज बोकर शिवत्व का फल पाना है। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अज्ञेय ने सृजन की प्रक्रिया को ही एक ऐसी प्रक्रिया माना है जो पौधे की तरह अपवित्र सड़े–गले, कचरे, राख आदि को सुन्दर फूल में बदल देता है :

''सड़ा दे दो, गला दे दो, पचा दे दो
कचरा दो, राख दो, अशुच दो, उच्छिष्ट दो–
वह तो है सृजन रतः उसे सब रस है, इन्द्रधनुष –[8]''

इस तरह अज्ञेय के चिंतन के मूल में नवीन वस्तु एवं विषय के प्रति आग्रह जरुर रहा है लेकिन कहीं भी अज्ञेय प्राचीन परिपाटी को बदलकर नवीनता नहीं लाना चाहते हैं बल्कि वे प्राचीन प्रतीकों, बिम्बों, प्रतिमानों की नवीन परिदृश्य में व्याख्या के आग्रही रहे हैं। भोगे हुए यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए अज्ञेय नवीनता पर बल देते हैं। अज्ञेय इस मायने में भी महत्वपूर्ण साबित होते हैं कि जब उन्होंने आरंभ में लिखना शुरू किया तो वह छायावादी दौर था लेकिन जब से वे प्रयोगवाद में जाते हैं अपनी रचनात्मकता के साथ कोई समझौता नहीं करते हैं। **"अज्ञेय व्यक्तित्व की अनन्यता, अद्वितीयता, मौलिकता को कितना भी महत्व क्यों न देते रहे हों उनका व्यक्तित्ववाद भी प्रबुद्ध बुर्जुवा व्यक्तिवाद था जिसमें लोकतंत्र, आधुनिकता, धर्मनिरपेक्षिता और मानवाधिकार के प्रति प्रतिबद्धता निहित थी।"[9]** अज्ञेय का विश्वास था कि हर साहित्य या साहित्य के विविध धाराओं का अपना एक ऐतिहासिक क्रम होता है जिससे वे धाराएं खाद पानी लेती रहती हैं। **"सामाजिक परिस्थितियां और साहित्यिक परम्पराएं अतीत के संबंधों और संघर्षों से विकसित होती हैं। उनमें नयापन भी होता है और विरासत का चिन्ह भी। इसीलिए हर परिस्थिति में भिन्न–भिन्न सामाजिक शक्तियां अपने लिए अतीत से कोई न कोई परंपरा चुनती हैं। प्रगतिशील लेखकों ने अपना सम्बन्ध भक्ति साहित्य और छायावाद से जोड़ा, प्रयोगवाद नई कविता ने केशव–मतिराम के रीति साहित्य से।"[10]** जिस समय अज्ञेय साहित्य में प्रयोगवाद ले आए उस समय उनकी बहुत सारी आलोचना हुई लेकिन यह अज्ञेय कि अपनी विशेषता रही कि वे काफी गंभीर व्यक्ति थे। उनकी नजर में साहित्य का बदलाव इसलिए भी जरुरी था कि साहित्य सिर्फ भारतीय ही न हो बल्कि पश्चात्य से भी उसकी कुछ चीजें हमारे साहित्य में आए। **"कविता के क्षेत्र में उनकी दो विशिष्ट उपलब्धियां उन्हें विशिष्ट और अपरिहार्य युगचेतना रचनाकार बनाती हैं। पहली तो यह कि उनहोंने छायावद और प्रगतिवाद के दबाव के दौर में, उत्तर छायावादी काल में कविता को एक ओर तो अतिरिक्त या अतिशय भावुकता से मुक्ति दिलाते हुए बौद्धिकता को उसके केंद्र में प्रतिष्ठित किया तो दूसरी और अभिद्याप्रधानता की ओर बढ़ रही काव्यधारा को शब्द और अर्थ के सही साहचर्य अर्थात व्यंजना और प्रतीयमानता की और अभिमुख करते हुए काव्यार्थ कि गरिमा को पुनः प्रतिष्ठित किया।"11** अज्ञेय यह मानते हैं कि कविता का फॉर्म महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी से कविता अपनी पूरी अर्थवत्ता दे पाती है। यथार्थ का अपना महत्व जरुर है बावजूद इसके इसमें अर्थवत्ता बहुत महत्वपूर्ण होती है। अज्ञेय का स्वकथन से इस बात की गहराई में उतरा जा सकता है। **"मैंने कहा है कि यथार्थ हमेशा अर्थहीन होता है। मैंने जो कुछ कहा उसमें यह भी निहित है कि इसके बावजूद कलाकार को अर्थ की खोज रहती है। इस निहितार्थ को आज के सब साहित्यकार स्वीकार नहीं करेंगे, ऐसा मैं जानता हूँ। लेकिन मेरे लिए रचनाकर्म हमेशा अर्थवत्ता की खोज से जुड़ा रहा है। साहित्यकार के नाते मुझे अर्थहीन यथार्थ की तलाश नहीं रहती और न है।"[12]**

संदर्भ–सूची

1. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, 'हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि', अग्रवाल पब्लिकेशंस, आगरा, 2009, पृष्ठ 24
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी, 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या', भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, 2011, पृष्ठ 51
3. कृष्णदत्त पालीवाल, 'अज्ञेय : कवि–कर्म का संकट', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 21
4. कृष्णदत्त पालीवाल, 'अज्ञेय : कवि–कर्म का संकट', किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृष्ठ 26
5. आत्मनेपद, पृष्ठ 168
6. राजेन्द्र प्रसाद, 'अज्ञेय कवि और काव्य', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2006, पृष्ठ 13
7. राजेन्द्र प्रसाद, 'तारसप्तक के कवियों की समाज चेतना', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2005, पृष्ठ 42
8. अज्ञेय, 'तारसप्तक की भूमिका'
9. प्रणय कृष्ण, हितेश कुमार सिंह, 'अज्ञेय होने का अर्थ', लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020
10. अजय तिवारी, 'उत्तर अआधुनिकता, कुलीनतावाद और समकालीन कविता', नयी किताब प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृष्ठ 7
11. ऋषभदेव शर्मा, पूर्णिमा शर्मा, 'कविता के पक्ष में', तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 275
12. परमानंद श्रीवास्तव, 'समकालीन हिंदी आलोचना', साहित्य अकादमी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ 39

नवजागरण और स्त्री पत्रकारिता

रेनू वर्मा*

भारत में उन्नीसवी सदी में जबरदस्त बौद्धिक एवं सांस्कृतिक उथल–पुथल था। आधुनिक पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव और विदेशी शक्ति द्वारा पराजित चेतना के फलस्वरूप लोगों में नई जागृति पैदा हुई जनता को इस बात का एहसास हो चुका था कि भारतीय सामाजिक ढांचे और सांस्कृतिक दुर्बलताओं की वजह से विदेशियों ने भारत को उपनिवेश में बदल दिया है। भारतीय लोगों ने अपने समाज की शक्ति और कमजोरी को जाना और इन कमजोरियों को दूर करने का उपाय भी खोजने लगे। भारतीय जनमानस ने परंपरागत विचारों और संस्थानों में अपनी आस्था व्यक्त की। लोगों में यह धारणा बनने लगी थी कि समाज में फिर से प्राण फूंकने के लिए आधुनिक पश्चिमी विचारों के कुछ तत्वों को आत्मसात करना पड़ेगा।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय समाज संक्रमण के जिस दौर से गुजरा उसे कुछ चिंतक पुनर्जागरण कहते हैं कुछ लोगों ने पुनरुत्थान, तो कुछ ने नवजागरण कहा है। नवजागरण का अर्थ है 'नए तरीके से जागना' नवजागरण काल में कोई एक संस्कृति किसी अन्य संस्कृति से टकरा कर नए दृष्टिकोण से जीने का प्रयास करता है।

भारतीय नवजागरण में दो जागरण महत्वपूर्ण हैं। पहला जागरण मध्यकाल में जब इस्लाम भारत में आये तब इस्लामी संस्कृति और भारतीय संस्कृति दोनों की टकराहट से भक्ति कालीन जागरण हुआ। दूसरा नव जागरण उन्नीसवीं शताब्दी से संबंधित है जहां पश्चिमी (यूरोपीय) संस्कृति की टकराहट भारतीय संस्कृति से हुई है।

रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दो में "नवजागरण दो संस्कृतियों की टकराहट से उत्पन्न रचनात्मक ऊर्जा है।"[1]

इस प्रकार दो संस्कृतियाँ एक दूसरे की अच्छाई ग्रहण कर अपनी बुराइयां छोड़ना चाहती है यही प्रक्रिया नवजागरण कहलाती हैं।

भारत में सबसे पहले नवजागरण बंगाल में शुरु हुआ। प्लासी के युद्ध के बाद 1757 में बंगाल अंग्रेजों के अधिन हो गया। बंगाल अंग्रेजों के शासन का केंद्र बना, पश्चिमी संस्कृति और शिक्षा के संपर्क में आने से बंगाल के लोगों का जीवन और विचारधारा धीरे–धीरे प्रभावित होने लगा, जिसके फलस्वरूप बंगाल में नवजागरण आया। इसका सीधा प्रभाव भारत पर पड़ा। भारत में नवजागरण का प्रभाव सामाजिक क्षेत्र में जाति प्रथा को खत्म करने, नारी उत्थान, बाल विवाह का विरोध और विधवा विवाह के समर्थन, सामाजिक और कानूनी असमानता का विरोध किया साथ ही भारतीय परंपराओं और रीति–रिवाजों, सामाजिक, धार्मिक, अंधविश्वास सुधार आंदोलन के रूप में हमारे सामने आता है।

उन्नीसवीं सदी का नवजागरण अपने अंतर्विरोधों के बावजूद एक आलोक स्तम्भ के रूप में हमारे सामने आता है। बंगाल में नवजागरण के अग्रदूत राजा राममोहन राय थे। वह उस समय एक नए सूर्योदय की तरह आए, वह भारतीय नवजागरण के अत्यंत महत्वपूर्ण कड़ी है उस समय भारतीय समाज में जो अनेक कुप्रथाओं फैली थी राजा राममोहन राय ने पहली बार इन को कुप्रथाओं के खिलाफ आंदोलन शुरू किया। उन्होंने 1815 में आत्मीय सभा का गठन किया। इस सभा के द्वारा दो महत्वपूर्ण कार्य किया एक तो स्त्रियों की शिक्षा के लिए सार्वजनिक बहस की शुरुआत की दूसरी पहली बार सती प्रथा के विरोध में एक पुस्तक भी प्रकाशित की। सती प्रथा के विरुद्ध यह उनकी शुरुआत थी। इसके बाद 1828 में ब्रहम समाज की स्थापना करके सती प्रथा पर रोक लगाई इसके साथ ही समाज में फैली अन्य कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई।

नवजागरण कालीन समाज सुधार आंदोलन में स्त्री संबंधी समस्याएं मुख्य थी। प्राचीन काल से ही भारतीय समाज स्त्रियों को बेडियों में जकड़ता आ रहा है। उन्नीसवीं सदी की स्त्रियां भी इन बेडियों से पूरी तरह मुक्त नहीं थी। समाज की संकुचित मानसिकता के कारण अधिकांश स्त्रियां अशिक्षित थी, अज्ञानता के कारण स्त्रियां पुरुषों के अधीन थी। स्त्रियों कि इस दशा में सुधार लाने में ईश्वर चंद्र विद्यासागर का भी विशेष सहयोग रहा।

* शोधार्थी, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार "विद्यासागर का पहला गुण था कि उन्होंने बंगाली जीवन की जड़ता को तोड़कर अपनी जीवन धारा हिंदुत्व की ओर नहीं वरन करुणाजन मनुष्यत्व की ओर प्रवाहित की।"[2]

इस तरह भारत में नवजागरण सामाजिक रूढ़ियों को खत्म करने के लिए आगे बढ़ रहा था। किसी भी आंदोलन की शुरुआत एकाएक नहीं होती है बल्कि विद्रोह का अंकुर धीरे–धीरे सुलग कर ज्वालामुखी के रूप में फूटता है। विद्रोह या क्रांति कोई चीज नहीं होती जिसका विस्फोट अचानक होता हो यह समाज सुधारक के प्रयत्न द्वारा आगे बढ़ती हुई दिखाई देती है जैसे ज्योतिबा फूले ने नारी के लिए केवल शिक्षा ही नहीं बल्कि स्त्री– पुरुष में बिना किसी भेदभाव के सबको समान शिक्षा प्राप्त हो इस पर बल दिया। उन्होंने 1848 में सबसे पहले स्त्रियों के लिए पुणे में स्कूल की स्थापना की। इस पुरुष समाज सुधारक की तरह उन्नीसवीं सदी की आखिरी दशकों में स्त्रियों ने भी आंदोलन में भाग लेना शुरू किया जिसमें पंडिता रमाबाई रानाडे, आनंदीबाई जोशी, और रूकमाबाई जैसी स्त्रियां अपने घरों में पुरुष प्रधान समाज के थोपे गए बंधनों को तोड़कर ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश गई और लौटकर उन्होंने भारत में स्वतंत्र संगठन बनाये। "1886 में स्वर्ण कुमारी देवी ने लेडिज संगठन कायम किया 1882 में पंडिता रमाबाई ने स्त्रियों की शिक्षा और रोजगार के लिए पूना में 'शारदा सदन खोला"।[3]

महाराष्ट्र में यह चेतना सावित्रीबाई फुले तथा फातिमा शेख के प्रयत्न के द्वारा समाज में देखने को मिला ये इन स्त्रियों ने पहले खुद शिक्षित हुई, फिर समाज का विरोध सहते हुए स्त्री शिक्षा पर बल ही नहीं दिया बल्कि स्त्री की स्थिति सुधारने के अनेक प्रयास किये। नवजागरण काल में समाज सुधारको ने जो शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई थी उसी के परिणाम स्वरुप धीरे–धीरे स्त्रियों में यह चेतना दिखाई देने लगी और वह शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ना शुरू कर दी।

नवजागरण काल में पत्र–पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही। समाज में जागृति लाने में उस समय जो सुधार आंदोलन चले उसमें मीडिया यानी पत्रकारिता एक मजबूत हथियार बनी। मीडिया के आने से एक प्रकाश आया. जिससे सुधार आंदोलन में तीव्रता आयी। पत्र–पत्रिकाओं का संबंध सीधे जन जागरण से है। किसी प्रकार के अन्याय या पक्षपात का प्रतिकार करने के लिए जनता जब उठ खड़ी होती है तो उसे अपनी आवाज बुलंद करने के लिए पत्र पत्रिकाओं का सहारा लेना पड़ता है।

बंगाल नवजागरण का प्रभाव हिंदी क्षेत्रों पर व्यापक रूप से दिखाई पड़ने लगा। हिंदी प्रदेश में नवजागरण 1857 ई के स्वतंत्रता संग्राम से शुरू होता है। पाश्चात्य संस्कृति, शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान प्रौद्योगिकी ने जहां भारतीय जनमानस को अपनी प्राचीन गौरवशाली परंपरा के पुन मूल्यांकन के लिए विवश किया। वही राष्ट्रवादी चेतना का विकास उपनिवेशिक शासन की विस्तारवादी नीति एवं फूट डालो और राज करो की नीति से हुआ। जिसका परिणाम 1857 ई. की क्रांति रही। इस विद्रोह का मुख्य क्षेत्र हिंदी प्रदेश था, अतः इसके उपरांत साहित्य, कला आदि में उत्पन्न नई चेतना या विचारधारा को ही हिंदी नवजागरण कहते हैं।

"नवजागरण हिंदी भाषा या साहित्य का ही नवजागरण नहीं है बल्कि समग्रता में हिंदी जाति का नवजागरण है, जिसमें स्त्रियां हैं, राजनीति हैं पत्रकारिता है, संस्कृति है और हिंदी भाषी क्षेत्रों में अदम्यता के साथ दहकती स्वाधीनता की भावना का नवजागरण।"[4]

सन 1857 ई0 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता क्रांति के साथ हिंदी साहित्य का आधुनिक काल प्रारंभ होता है। जिस प्रकार बंगाल के नवजागरण के अग्रदूत राजा राममोहन राय को माना जाता है उसी तरह हिंदी नवजागरण के अग्रदूत भारतेंदु हरिश्चंद्र को माना जाता है उन्होंने समाज सुधार के लिए अपने विचारों को पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से जनमानस तक पहुंचाने की कोशिश की। पत्र पत्रिकाओं के प्रकाशन से विचारों का प्रसार होने लगा। भारतेंदु जी ने 1874 ई में बाला बोधिनी पत्रिका निकाली जिसका उद्देश्य स्त्रियों के शिक्षा और विवाह संबंधी समस्याओं को सुधारना था। उस युग में अन्य रचनाकारों ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस प्रयासों के फलस्वरुप स्त्रियां शिक्षित होने लगी और शिक्षा के क्षेत्र में धीरे–धीरे अपना योगदान देना भी शुरू कर दिया। वह कविता, कहानी, लेख लिखने के साथ–साथ पत्रकारिता के क्षेत्र तक पहुंच गई।

भारतेंदु युग में स्त्रियों की 'गृहलक्ष्मी' 'सुगृहिणी', 'कमला' पत्रिका प्रकाशित हुई। सन 1883 में असम से सुगृहिणी पत्रिका को निकालने वाली हेमंत कुमारी चौधरानी पहली महिला संपादिका बनी, सुगृहिणी नाम से इन्हें हिंदी की पहली महिला पत्रकार माना जाता है। भारत–भगिनी (1888) ई0 में, हरदेवी ने इस पत्रिका का संपादन किया। इसी क्रम में 'अबला 'हितकारक' (1884) में लखनऊ से निकली ये स्त्री पत्रिकाएं थी। इन पत्रिकाओं में स्त्रियों ने लिखना आरंभ कर दिया। इन पत्रिकाओं का महत्व साहित्यिक दृष्टि से भले ही कम

हो परंतु यह पत्रिकाएं स्त्रियों के लिए उपयोगी सिद्ध हुई, क्योंकि पहली बार स्त्रियों में पत्रकारिता के प्रति रुझान दिखा था।

'स्त्री दर्पण पत्रिका का प्रकाशन 1907 में प्रयागराज से शुरू हुआ था। इसकी संपादिका रामेश्वरी देवी नेहरू और प्रबंधक कमला देवी नेहरू थी। इसमें स्त्री समस्या पर सामाजिक, राजनीतिक लेख छपते थे। उस समय यह पत्रिका हिंदी पत्रकारिता में क्रांतिकारी शुरुआत थी, रामेश्वरी देवी नेहरू ने स्त्रियों के स्वतंत्रता की लड़ाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। "स्त्री दर्पण में स्त्रियों से संबंधित हर तरह के लेख कहानियां और कविताएं छपती थी, जितनी बहस या चर्चा इस पत्रिका में हुई उतनी किसी दूसरी पत्रिका में नहीं हुई थी"।[5]

इस पत्रिका में छपने वाले लेख में स्त्री परदा शिक्षा के क्षेत्र में स्त्री आगे कैसे बढ़े, अनमेल विवाह स्त्री जाति के अवनति का कारण आदि विषयों पर लेख होते थे। स्त्री दर्पण पत्रिका नवजागरण काल की सबसे महत्वपूर्ण पत्रिका है। यह पत्रिका स्त्री आंदोलन में सशक्त माध्यम के रूप में सामने आई। इसके अलावा हिंदी में ऐसी कोई पत्रिका नहीं थी। जो इतनी गंभीरता से स्त्री समस्या पर विचार विमर्श कर सकती थी।

इसी समय रामेश्वरी देवी की एक और पत्रिका गृहलक्ष्मी निकलती थी, इन दोनों पत्रिकाओं में कभी–कभी एक ही विषय पर बहस चलती थी, एक पत्रिका में लेख छपते थे और दूसरी पत्रिका में जवाब दिए जाते थे। इन लेखों के द्वारा समाज में नारी चेतना दिखने लगी थी। उस समय यह भी माना जाता था कि स्त्रियां सिर्फ कहानी कविता और उपन्यास लिख सकती हैं। परंतु स्त्रियां धीरे–धीरे संपादिका के कार्य में आगे बढ़ी और समाज में व्याप्त इस धारणा को समाप्त कर दिया।

स्त्री दर्पण पत्रिका को रामेश्वरी देवी अपनी प्रतिभा से आगे बढ़ाती चली गई, इसमें छपे लेख स्त्री जगत के प्रगति मार्ग पर मशाल का काम किया। यह सच है कि हिंदी क्षेत्र की स्त्री पत्रकारिता का इतिहास स्त्री दर्पण के बिना अधूरा है।

इसी क्रम में सन् 1907 में कमला पत्रिका का संपादक पुष्पा कुमारी जी कर रही थी। सन 1911 ई में महिला हितकारक पत्रिका जो देहरादून से निकलती थी इसकी संपादक विद्यावती देवी थी। आर्य महिला हितकारी महापरिषद् का मुख्य पत्र 'आर्य महिला' 1918 स्त्री केंद्रित रहा है। इसकी संपादक आग खैरागढ़ की राजेश्वरी श्रीमती सूरत कुमारी देवी थी। भारतीय पत्रिका का संपादन सरला देवी ने किया था। सरला देवी पत्रकार के रूप में काफी प्रसिद्ध रही। चांद पत्रिका 1922 से निकलनी शुरू हुई महादेवी वर्मा इसकी संपादक का बनी। सन 1924 में कानपुर से सीता देवी ने 'महिला सुधार' नामक साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया। मनोरमा पत्रिका का प्रकाशन इलाहाबाद से सन् 1924 में प्रारंभ हुआ था। 1930 में 'सहेली' पत्रिका की मुख्य संपादक रामेश्वरी देवी थी। सन् 1931 में 'त्रिवेणी' पत्रिका फूलवती शुक्ला, 1934 में 'कमल भारती' , लाहौर से आत्मा देवी सूरी, 1936 में 'दैनिक शक्ति' लाहौर से शन्नो देवी, 1937 में स्त्री शिक्षा ज्योतिर्मय, 1940 में महिला चरखा समिति सुशीला सहाय तथा मनोरमा श्रीवास्तव, 1944 में 'आंधन नई दिल्ली से कैलास कुमारी, 1947 नारी पत्रिका सुभद्रा कुमारी चौहान, हरदेवी इत्यादी स्त्रियो ने स्त्री पत्रकारिता के क्षेत्र में अपना योगदान दिया।

नवजागरण काल में महिलाओं का दो वर्ग पत्रकारिता में अपना योगदान दे रहा था पहला संपादक वर्ग दूसरा लेखिका वर्ग । इन पत्रिकाओं में स्त्री समस्या को उठाया गया था जैसे सती प्रथा, पर्दा प्रथा, शिक्षा, स्त्री स्वास्थ्य संबंधी समस्या आदि इन समस्याओं को खत्म करने का प्रयास किया गया। लेखिकाओं ने इस समस्या पर लेख लिखकर महिलाओं को जागृत किया। इस प्रकार नवजागरण काल से ही स्त्रियों ने पत्रकारिता के क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देना शुरू कर दिया था।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामस्वरूप चतुर्वेदी – हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास लोक भारती प्रकाशन 2021, पृ० 79।
2. कर्मेन्दु शिशिर – भारत नवजागरण और समकालीन सन्दर्भ, नई किताब प्रकाशन 2020, पृ० 43।
3. सुनन्दा पराशर, हिन्दी नवजागरण और स्त्री अस्मिता अन्नय प्रकाशन 2021, पृ० 25।
4. नीरजा माधव हिन्दी साहित्य का ओझल नारी इतिहास 1957–1947 सामायिक प्रकाशन, पृ0 33।
5. सुनन्दा पराशर, हिन्दी नवजागरण और स्त्री अस्मिता अन्नय प्रकाशन 2021, पृ0 86।

ग्रामीण परिवेश में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. रश्मि सिंह*

सारांश

यह समाजशास्त्रीय अध्ययन ग्रामीण भारत में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण करता है, जहाँ महिलाएँ परिवार की स्थिरता, कृषि उत्पादन तथा सामुदायिक विकास की आधारशिला मानी जाती हैं। कृषि, पशुपालन, लघु उद्योग, मजदूरी और असंगठित क्षेत्र में उनकी सक्रिय भागीदारी के बावजूद उनके श्रम को प्रायः "सहायक" या "पूरक" माना जाता है और उन्हें उचित मान्यता या प्रतिफल प्राप्त नहीं होता। सामाजिक दृष्टि से ग्रामीण महिलाएँ जातिगत संरचना, पितृसत्तात्मक परंपराओं, सीमित शिक्षा और सांस्कृतिक बंधनों से बंधी रहती हैं, जिससे उनकी गतिशीलता और निर्णय लेने की क्षमता प्रभावित होती है। आर्थिक दृष्टि से वे अल्पवेतन, असंगठित और मौसमी कार्यों में संलग्न होती हैं, जिनमें भूमि व संपत्ति पर स्वामित्व का अधिकार प्रायः पुरुषों के पास होता है, जिससे उनकी निर्भरता बनी रहती है। पारिवारिक जीवन में महिलाएँ "द्वैध भूमिका" निभाती हैं—एक ओर वे घरेलू कार्य व बच्चों की परवरिश करती हैं, दूसरी ओर आर्थिक गतिविधियों में भी संलग्न रहती हैं; फिर भी वित्तीय और सामाजिक निर्णयों में उनकी भागीदारी सीमित रहती है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं के श्रम की अदृश्यता और सामाजिक मान्यता से वंचित रहना, लैंगिक असमानता को और गहरा करता है। समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में यह स्थिति पितृसत्तात्मकता, संरचनात्मक-कार्यक्षमता और वर्ग-जाति संबंधों की जटिलताओं को दर्शाती है। निष्कर्षतः ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु बहुआयामी हस्तक्षेप आवश्यक है—शिक्षा और प्रशिक्षण की उपलब्धता, संसाधनों पर स्वामित्व, निर्णय-प्रक्रिया में सहभागिता और आर्थिक योगदान की औपचारिक मान्यता ही उन्हें अदृश्य सहयोगी से दृश्यमान हितधारक में परिवर्तित कर सकती है।

की-वर्ड - ग्रामीण महिलाएँ, सामाजिक एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि, आर्थिक योगदान, कृषि श्रम, लैंगिक असमानता, पितृसत्ता, सामाजिक न्याय, आत्मनिर्भरता।

प्रस्तावना

भारतीय ग्रामीण समाज में महिलाएँ पारिवारिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन की धुरी के रूप में कार्य करती हैं और समुदाय की रीढ़ मानी जाती हैं। वे केवल गृहकार्य तक सीमित नहीं हैं, बल्कि कृषि उत्पादन, पशुपालन, मजदूरी, लघु उद्योग, स्वरोजगार और सामुदायिक गतिविधियों में भी महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। कृषि क्षेत्र में उनकी भागीदारी विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि भारत की लगभग 70 प्रतिशत महिलाएँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि एवं उससे संबद्ध क्षेत्रों में संलग्न हैं (Agarwal, 1994)। *नेशनल सैंपल सर्वे ऑफिस* के आँकड़ों के अनुसार ग्रामीण महिला कार्यबल का लगभग 79 प्रतिशत हिस्सा कृषि व संबद्ध क्षेत्रों में कार्यरत है, किंतु उनके श्रम का बड़ा हिस्सा "अनपेड वर्क" (unpaid work) के रूप में दर्ज होता है, इसे "सहायक" या "पूरक" श्रम मान लिया जाता है।

इसके अतिरिक्त, ग्रामीण महिला श्रमिकों को वेतन में भी असमानता का सामना करना पड़ता है। पीरिआडिक लेबर फोर्स सर्वे *(2018-19)* के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष मजदूरों को औसतन ₹ 264 प्रति दिन मिलते हैं, जबकि महिला मजदूरों को केवल ₹ 205 प्रति दिन की मजदूरी मिलती है। यह लगभग 22–25 प्रतिशत की लैंगिक वेतन असमानता को दर्शाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो ग्रामीण महिलाओं की स्थिति जाति, वर्ग, पितृसत्तात्मक संरचना, शिक्षा और सांस्कृतिक परंपराओं से गहराई से प्रभावित होती है (Sharma, 2004)। जनगणना 2011 के अनुसार ग्रामीण महिला साक्षरता दर केवल 57.9 प्रतिशत थी, जबकि शहरी महिलाओं की साक्षरता दर 79.1 प्रतिशत रही, जो शिक्षा में गहरी असमानता को दर्शाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो ग्रामीण महिलाओं की स्थिति जाति, वर्ग, इस प्रकार, ग्रामीण महिलाओं की सक्रियता भारतीय अर्थव्यवस्था का एक अदृश्य आधार है, जो विकास की प्रक्रिया में केंद्रीय भूमिका निभाती है, किंतु उसे नीति-निर्माण और शैक्षणिक विमर्श में अपेक्षित महत्व नहीं मिल पाता]। समाजशास्त्रीय दृष्टि से महिलाओं की स्थिति का अध्ययन उनकी सामाजिक पहचान, आर्थिक योगदान और पारिवारिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में किया जाता है।

सामाजिक पृष्ठभूमि

ग्रामीण परिवेश में महिलाओं की सामाजिक स्थिति बहुआयामी है और यह परंपरा, जाति-व्यवस्था, धर्म, शिक्षा, परिवार संरचना तथा सांस्कृतिक मूल्यों से गहराई से प्रभावित होती है। यद्यपि महिलाओं का योगदान ग्रामीण समाज के

* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, श्री बलदेव सिंह भालेसुलतान महाविद्यालय, हलियापुर, सुलतानपुर

सामाजिक और आर्थिक जीवन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, फिर भी उन्हें सामाजिक मान्यता, शिक्षा और संसाधनों की समान उपलब्धता प्राप्त नहीं है।

1. **शिक्षा का स्तर** – ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा का स्तर अब भी अपेक्षाकृत कम है। *जनगणना 2011* के अनुसार ग्रामीण महिला साक्षरता दर मात्र 57.9% थी, जबकि शहरी महिलाओं की साक्षरता दर 79.1% रही। उच्च शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी और भी कम है। *AISHE Report 2019-20* के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाली महिलाओं में उच्च शिक्षा में नामांकन दर (Gross Enrolment Ratio) केवल 19.8% रही, जबकि शहरी महिलाओं में यह 27% थी। शिक्षा में यह असमानता ग्रामीण महिलाओं के आत्मनिर्भर बनने और सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करती है।[1]
2. **सामाजिक मान्यता** – ग्रामीण महिलाओं का श्रम प्रायः "सहायक" या "पूरक" माना जाता है। कृषि कार्यों में उनका योगदान पुरुषों से अधिक होने के बावजूद इसे "गृहस्थी की मदद" कहकर देखा जाता है। नेशनल सेम्पल सर्वे आफीस *(2019)* के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा किए गए श्रम का लगभग 66% हिस्सा अवैतनिक (Unpaid Work) होता है, जबकि पुरुषों का अवैतनिक श्रम केवल 12% है। यह असमानता दर्शाती है कि महिलाओं का श्रम परिवार और समाज की आर्थिक रीढ़ होते हुए भी औपचारिक मान्यता से वंचित रहता है।[2]
3. **जाति और वर्ग प्रभाव** – ग्रामीण समाज में जाति और वर्ग का महिलाओं की स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाएँ अधिकतर मजदूरी, खेतिहर कार्य और दिहाड़ी श्रम में संलग्न होती हैं। *NSSO Report 2017-18* के अनुसार अनुसूचित जाति की लगभग 54% महिलाएँ और अनुसूचित जनजाति की 63% महिलाएँ खेतिहर मजदूरी या असंगठित कार्यों में लगी हुई हैं, जबकि उच्च जाति की महिलाएँ अपेक्षाकृत कम मजदूरी-प्रधान कार्यों में पाई जाती हैं। वर्गीय स्थिति भी महिलाओं की संसाधनों तक पहुँच को नियंत्रित करती है, जैसे – गरीब वर्ग की महिलाएँ बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण जैसी सुविधाओं से अधिक वंचित रहती हैं ।[3]
4. **सांस्कृतिक बंधन** – ग्रामीण समाज में विवाह संस्था, पितृसत्तात्मक परंपराएँ और लैंगिक भूमिकाएँ महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता को सीमित करती हैं। विवाह के बाद महिलाओं की प्राथमिक भूमिका 'पत्नी' और 'माँ' तक सीमित कर दी जाती है। *NFHS-5 (2019-21)* के आँकड़ों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 23% महिलाएँ 18 वर्ष से पहले ही विवाह कर लेती हैं, जो बाल-विवाह की परंपरा को दर्शाता है और महिलाओं की शिक्षा एवं करियर की संभावनाओं को प्रभावित करता है। पितृसत्तात्मक सोच महिलाओं को सामाजिक, राजनीतिक और सामुदायिक गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी से रोकती है। लैंगिक भूमिकाओं की यह परिभाषा महिलाओं की स्वतंत्रता, गतिशीलता और निर्णय लेने की क्षमता को सीमित करती है ।

आर्थिक पृष्ठभूमि

भारतीय ग्रामीण महिलाएँ आर्थिक दृष्टि से परिवार और समुदाय की रीढ़ हैं, क्योंकि वे कृषि, पशुपालन, वनोपज संग्रह, हस्तशिल्प और स्वरोजगार जैसी गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी निभाती हैं। फिर भी उनके श्रम का उचित मूल्यांकन और मान्यता नहीं मिल पाती। ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक पृष्ठभूमि को निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट किया जा सकता है:

1. **कृषि क्षेत्र में योगदान** – ग्रामीण महिलाओं की अधिकांश ऊर्जा कृषि और उससे संबंधित क्षेत्रों में लगती है। *FAO Report (2018)* के अनुसार भारत में ग्रामीण महिला श्रमिकों का लगभग 65% हिस्सा कृषि और allied sectors (पशुपालन, डेयरी, मत्स्य पालन) से जुड़ा है। *NSSO 2017–18* बताता है कि ग्रामीण महिलाओं में से 75% महिलाएँ कृषि कार्यों में संलग्न हैं, जबकि केवल 12% महिलाओं के नाम पर भूमि का स्वामित्व दर्ज है। भूमि स्वामित्व पुरुष प्रधान होने के कारण महिलाएँ कृषि उत्पादन में मुख्य भूमिका निभाने के बावजूद निर्णय लेने और संसाधनों के उपयोग से वंचित रहती हैं ।[4]
2. **आय के स्रोत** – ग्रामीण महिलाओं की आय विविध स्रोतों से आती है। *Periodic Labour Force Survey (PLFS) 2019–20* के अनुसार ग्रामीण महिला श्रमिकों में 42% महिलाएँ कृषि मजदूरी से, 26% पशुपालन और allied activities से, 18% मनरेगा एवं सरकारी योजनाओं से तथा 14% हस्तशिल्प और वनोपज संग्रह से आय अर्जित करती हैं। इसके अलावा, स्वरोजगार योजनाएँ जैसे महिला स्वयं सहायता समूह (SHGs) के माध्यम से महिलाओं की वित्तीय भागीदारी में वृद्धि हुई है, लेकिन अभी भी यह सीमित स्तर पर है ।
3. **आर्थिक स्थिति** – ग्रामीण महिलाएँ अधिकतर निम्न आय वर्ग से आती हैं। उन्हें उनके श्रम का उचित प्रतिफल नहीं मिलता। *NSSO 2019* के अनुसार ग्रामीण महिला मजदूरों को पुरुषों की तुलना में 20–30% कम मजदूरी मिलती है। उदाहरणस्वरूप, कृषि मजदूरी में पुरुषों की औसत दैनिक आय **₹264** थी, जबकि महिलाओं की मात्र **₹205**। इसके अलावा, ग्रामीण महिला श्रमिकों में से 92% महिलाएँ असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ सामाजिक सुरक्षा योजनाओं जैसे पेंशन, मातृत्व लाभ और स्वास्थ्य बीमा का कवरेज अत्यंत सीमित है ।[5]

4. **आर्थिक निर्णय** – परिवार की आय में योगदान देने के बावजूद महिलाओं की निर्णय लेने की शक्ति सीमित रहती है। *NFHS-5 (2019–21)* के अनुसार ग्रामीण भारत में केवल 18% महिलाएँ ही भूमि या संपत्ति से जुड़े आर्थिक निर्णय लेती हैं, जबकि घरेलू खर्च और बच्चों की शिक्षा से जुड़े छोटे निर्णयों में 70% महिलाएँ भाग लेती हैं। पुरुष अब भी बड़े निवेश, संपत्ति खरीद-बिक्री और कृषि उत्पादन से संबंधित फैसलों में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार, आर्थिक सहभागिता के बावजूद महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता और निर्णय लेने की समान शक्ति प्राप्त नहीं है ।[6]

पारिवारिक पृष्ठभूमि

ग्रामीण महिलाओं की पारिवारिक पृष्ठभूमि उनकी सामाजिक स्थिति, भूमिकाओं और अवसरों को गहराई से प्रभावित करती है। भारतीय ग्रामीण समाज में परिवार एक मूलभूत सामाजिक संस्था है, जहाँ महिलाओं की स्थिति पारंपरिक मान्यताओं और पितृसत्तात्मक संरचना से परिभाषित होती है। नीचे दिए गए बिंदु इस पृष्ठभूमि को आँकड़ों और समाजशास्त्रीय विश्लेषण के साथ स्पष्ट करते हैं:

1. **संयुक्त व एकल परिवार** – ग्रामीण भारत में संयुक्त परिवार की परंपरा अधिक प्रचलित है। *NFHS-5 (2019–21)* के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 61% परिवार संयुक्त परिवार प्रणाली में रहते हैं**,** जबकि शहरी क्षेत्रों में यह अनुपात मात्र 38% है। संयुक्त परिवार में रहने से महिलाओं पर बच्चों की परवरिश, वृद्धों की देखभाल और घरेलू कार्यों की जिम्मेदारी बढ़ जाती है। इसके विपरीत, एकल परिवार में महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता मिलती है, लेकिन आर्थिक दबाव और श्रम का बोझ अधिक होता है ।[7]
2. **लैंगिक भूमिकाएँ** – ग्रामीण परिवेश में पारंपरिक दृष्टिकोण अब भी गहराई से मौजूद है, जिसमें पुरुषों को "कमाने वाला" और महिलाओं को "गृहस्थी संभालने वाला" माना जाता है। *Time Use Survey, 2019 (MoSPI)* के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ प्रतिदिन औसतन 299 मिनट (लगभग 5 घंटे) अवैतनिक घरेलू कार्य करती हैं, जबकि पुरुष केवल 97 मिनट देते हैं। इसके विपरीत, पुरुष औसतन 360 मिनट आय अर्जन वाले कार्यों में लगाते हैं, जबकि महिलाएँ केवल 160 मिनट ही दे पाती हैं। यह आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि लैंगिक भूमिकाओं की असमानता महिलाओं की स्वतंत्रता और सामाजिक गतिशीलता को सीमित करती है ।[8]
3. **द्वैध भूमिका (Double Burden)** – ग्रामीण महिलाएँ "द्वैध भूमिका" निभाती हैं, जिसमें वे घर और बाहर दोनों जगह काम करती हैं। *NSSO (2017–18)* के अनुसार ग्रामीण महिला श्रमिकों में से 56% महिलाएँ कृषि मजदूरी और स्वरोजगार में संलग्न रहते हुए घरेलू जिम्मेदारियों को भी निभाती हैं। इसके अतिरिक्त, *ICMR Report 2020* में बताया गया कि लगातार डबल बर्डन उठाने से लगभग 38% ग्रामीण महिलाओं में एनीमिया और कुपोषण जैसी स्वास्थ्य समस्याएँ पाई गईं, जबकि मानसिक तनाव और अवसाद का स्तर भी शहरी महिलाओं की तुलना में अधिक दर्ज किया गया ।[9]
4. **निर्णय लेने में भूमिका** – परिवार में निर्णय लेने की प्रक्रिया में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका सीमित होती है। *NFHS-5 (2019–21)* के अनुसार ग्रामीण भारत की 71% महिलाएँ बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और दैनिक खर्च के फैसलों में भागीदारी करती हैं, लेकिन केवल 18% महिलाएँ ही जमीन-जायदाद, कृषि निवेश और बड़े वित्तीय निर्णयों में शामिल होती हैं। इसके अतिरिक्त, केवल 13% ग्रामीण महिलाओं के नाम पर कृषि भूमि का स्वामित्व दर्ज है, जो आर्थिक संसाधनों पर उनके सीमित अधिकार को दर्शाता है][10]

समाजशास्त्रीय विश्लेषण

ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को निम्न दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है:

ग्रामीण महिलाओं की स्थिति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण विभिन्न दृष्टिकोणों से किया जा सकता है-

1. **लैंगिक असमानता का दृष्टिकोण** यह स्पष्ट करता है कि पुरुषों और महिलाओं के श्रम का मूल्यांकन समान रूप से नहीं होता; महिलाओं का कार्य अक्सर "सहायक" या "पूरक" समझा जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक असमानताएँ स्थायी बनी रहती हैं ।
2. **संरचनात्मक-कार्यक्षमता दृष्टिकोण** इस ओर संकेत करता है कि परिवार और समाज की परंपरागत संरचना महिलाओं को गृहस्थी, बच्चों की परवरिश और सहयोगी भूमिकाओं तक सीमित कर देती है, जिससे उनकी स्वतंत्रता और सामाजिक गतिशीलता बाधित होती है ।[11]
3. वहीं, **नारीवादी दृष्टिकोण** ग्रामीण महिलाओं के अदृश्य श्रम को मान्यता देने, सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने और समान अवसर प्रदान करने की आवश्यकता पर बल देता है।[12] इस प्रकार, समाजशास्त्रीय दृष्टि से ग्रामीण महिला की स्थिति केवल उनकी व्यक्तिगत परिस्थितियों का परिणाम नहीं है, बल्कि यह गहरे सामाजिक-सांस्कृतिक ढाँचों और पितृसत्तात्मक व्यवस्थाओं से निर्मित होती है।

निष्कर्ष

ग्रामीण परिवेश में कार्यरत महिलाएँ केवल परिवार की 'सहायक' नहीं हैं, बल्कि वे ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धुरी हैं। उनकी सामाजिक स्थिति शिक्षा, परंपरा और सांस्कृतिक बंधनों से प्रभावित होती है; उनकी आर्थिक स्थिति अल्प आय और असंगठित श्रम पर आधारित है; और पारिवारिक जीवन उन्हें दोहरी जिम्मेदारियों का बोझ देता है। ग्रामीण परिवेश में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक पृष्ठभूमि का समाजशास्त्रीय अध्ययन यह दर्शाता है कि वे केवल घरेलू जीवन तक सीमित न रहकर कृषि, पशुपालन, स्वरोजगार, लघु उद्योग और असंगठित क्षेत्र में बहुआयामी योगदान देती हैं, किंतु उनके श्रम को अभी भी "सहायक" या "पूरक" मानकर औपचारिक मान्यता से वंचित किया जाता है। सामाजिक दृष्टि से उनका जीवन जाति, वर्ग, पितृसत्तात्मक संरचना, शिक्षा की कमी और सांस्कृतिक बंधनों से नियंत्रित होता है, जिसके कारण उनकी सामाजिक गतिशीलता और निर्णय लेने की क्षमता सीमित रह जाती है। आर्थिक दृष्टि से वे कम मजदूरी, असंगठित कार्य और भूमि व संसाधनों पर स्वामित्व की कमी जैसी चुनौतियों का सामना करती हैं, जबकि पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में वे "द्वैध भूमिका" निभाते हुए घर व बाहर दोनों जिम्मेदारियों का बोझ उठाती हैं, जिससे उनके स्वास्थ्य और मानसिक स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि महिलाओं की स्थिति केवल उनके व्यक्तिगत प्रयासों का परिणाम नहीं है, बल्कि यह व्यापक सामाजिक संरचनाओं और नीतिगत व्यवस्थाओं से गहराई से जुड़ी है। इसलिए, ग्रामीण महिलाओं के वास्तविक सशक्तिकरण हेतु आवश्यक है कि शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए, भूमि और आर्थिक संसाधनों पर उनका स्वामित्व बढ़ाया जाए, उनके श्रम को औपचारिक मान्यता और उचित प्रतिफल दिया जाए, तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जाए। यदि ये प्रयास बहुआयामी स्तर पर किए जाएँ तो ग्रामीण महिलाएँ "अदृश्य सहयोगी" से "दृश्यमान हितधारक" के रूप में उभर सकती हैं और भारत के ग्रामीण समाज को अधिक न्यायसंगत, आत्मनिर्भर और सतत विकासशील दिशा में अग्रसर कर सकती हैं।

संदर्भ-ग्रन्थ

1. Government of India, Census of India 2011.
2. Desai, Neera (1994). *Women and Society in India*. New Delhi: Ajanta Publications.
3. Sharma, K.L. (2004). *Indian Social Structure and Change*. Rawat Publications.
4. Agarwal, Bina (1994). *A Field of One's Own: Gender and Land Rights in South Asia*. Cambridge University Press.
5. National Sample Survey Office (NSSO) Reports, Ministry of Statistics, Government of India.
6. Sen, Amartya (2001). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
7. Karve, Iravati (1990). *Kinship Organization in India*. Munshiram Manoharlal Publishers.
8. Patel, Tulsi (2005). *The Family in India: Structure and Practice*. Sage Publications.
9. Singh, K.S. (1993). *People of India: An Introduction*. Anthropological Survey of India.
10. Oakley, Ann (1974). *The Sociology of Housework*. Martin Robertson.
11. Parsons, Talcott (1951). *The Social System*. Free Press.
12. Tong, Rosemarie (2009). *Feminist Thought: A More Comprehensive Introduction*. Westview Press.